तलाश-ए-हक़



लेखक
मसऊद अहमद बी-एस-सी

अल किताब इंटरनेशनल
मुरादी रोड बटला हाउस जामिया नगर
नई दिल्ली-25

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْم

तलाशे हक़

हक़ को तलाश करने वाले की दासतान जिसे
पढ़ने से हक़ की राह आसान हो जाती है

प्रकाशक

अल किताब इन्टर नेशनल
मुरादी रोड, बटला हाउस,
जामिया नगर, नई दिल्ली—25
फ़ोन— 26986973,

नाम पुस्तक	:	तलाशे हक़
लेखक	:	मौलाना मसऊद अहमद बी॰ एस॰ सी॰
पृष्ठ संख्या	:	240
प्रकाशन	:	अक्टूबर 2008
संख्या	:	1000
मुल्य	:	90
प्रकाशक	:	अल किताब इन्टर नेशनल

-मिलने का पता-

अल किताब इन्टर नेशनल

मुरादी रोड, बटला हाउस,

जामिया नगर, नई दिल्ली-25

9312508762, 9310108762, 9310008762

विषय सूची

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

भूमिका

सय्यद मसऊद अहमद साहब एक प्रमुख इल्मी व्यक्ति हैं, मुद्दतों असलाफ़ परस्ती और तक़्लीद के अंधेरे माहौल में रहने के बाद दीन के मामलों में अल्लाह की प्रदान की गयी सलाहियतों से सहीह तहक़ीक़ के बाद जो सही रास्ता अपनाया है उस को हज़रत मुहम्मद मुस्तुफ़ा स0 ने निर्धारित फरमाया था।

और यही मज़हब हज़रत इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का था कि اذا صح الحديث فهو مذهبی अर्थात सहीह हदीस ही मेरा मज़हब है।

इस किताब "तलाशे हक़" में वह पत्र–व्यवहार है जो मुद्दतों मौलवी नवाब मुहियुद्दिन साहब (जिन को अपने हन्फी होने पर बड़ा गर्व था) और मोहतरम सय्यद मसऊद अहमद साहब बी. एस. सी. के बीच तक़्लीद शख़्सी और अन्य बहुत से विवादित मसाइल पर होता रहा है। जिस में मौलवी नवाब मुहियुद्दिन साहब के सख़्त और उत्तेजित सवालों के जवाब में सय्यद मसऊद अहमद साहब ने जो ज़बान इस्तेमाल की है वह सख़्त कलामी और तन्ज़ से बिल्कुल पाक है और शैली सादा समझ में आने के साथ साथ अपने अन्दर माकूलियत और स्वर समस्त संजीदगी लिए हुए है और मौलवी नवाब मुहियुद्दिन साहब के सवालों के जवाब अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में पक्की दलीलों की रोशनी में अच्छे अन्दाज़ में दिए गए हैं। अतएव उस से प्रभावित होकर नवाब मुहियुद्दिन साहब ने मुद्दतों

पत्र–व्यवहार के बाद अपने अहले हदीस होने का ऐलान कर दिया।--- असल बात तो यह है कि इस किताब को पढ़ कर हर हक़ के प्यासे को कहना पड़ता है कि उस में मिल्लत के हर व्यक्ति के लिए दिल को छू लेने वाली बातें पेश की गई हैं।

अब्दुस्सलाम खां बरेलवी

प्रकाशक की ओर से

ما اهل حدیثیم وقرآن است امام ما
باقول نبیؐ چون و چرا را نشناسیم

हम अहले हदीस हैं और कुरआन हमारा इमाम हैं।

नबी करीम स0 की करनी व कथनी के मुक़ाबले में हम किसी की करनी व कथनी को नहीं जानते।

आज से लगभग तेरह चौदह बरस पहले "तलाशे हक़" पहली बार छापी गई थी। तलाशे हक़ को अकसर लोगों ने बहुत पसंद किया, नतीजा यह हुआ कि उस का पहला एडीशन जल्द ही ख़त्म हो गया लेकिन इस की मांग बराबर रही, अतः हम ने इस किताब को छापने का इरादा किया। इस की तैयारी काफी समय से चल रही थी लेकिन कुछ मजबूरियों और संशोधन की वजह से बहुत देरी हो गई।

अहले हदीस हमारा व्यक्तिगत नाम नहीं है बल्कि सिफाती नाम है, हम ने अक़वालुर्रिजाल को छोड़ा, अक़वाले फुक़हा से मुंह मोड़ा, क़यास व राय से दामन बचाया और हदीस नबवी सल्ल0 को थाम लिया, हर मसला में हदीस नबवी सल्ल0 को वरीयता दी और हदीस ही का प्रचार किया हदीस ही अपना ओढ़ना और बिछौना बनाया, इस लिए हमारी निस्बत हदीस ही की तरफ हो गई, और याद रखिए कि हदीस और सुन्नत एक ही चीज़ हैं, जब आप शिया के मुक़ाबले में अहले सुन्नत कहलाना पसंद करते हैं तो अहले हदीस कहलाने

से क्यों नफरत है? हर मुसलमान अहले हदीस होता है और हर अहले हदीस मुसलमान होता है अर्थात मुसलमान और अहले हदीस एक दूसरे के पूरक शब्द हैं, जो मुसलमान होगा वह ज़रूर अहले हदीस होगा और जो अहले हदीस होगा निश्चय ही मुसलमान होगा। कोई मुसलमान हदीसे रसूल स0 को माने बिना मुसलमान नहीं बन सकता, इस लिए अहले हदीस कहलाना किसी सम्प्रदाय में आने का विकल्प नहीं है बल्कि यह मुसलमानों ही की उस असल जमाअत का ग्रणात्मक नाम है जो दूसरों के कथन क़यास और राय पर हदीस नबवी सल्ल0 को वरीयता देती है। याद रहे अहले हदीस के तीन ग्रणात्मक नाम और भी हैं जो अहले हदीस के अकीदों और विचारों को फैलाने का कारण हैं, वे यह हैं।''السلفی'' ''اهل الاثر'', '' और ''اصحاب الحديث'' (देखिए फ़ज़ाइले अहले हदीस पर किताब ''शर्फ असहाबुल हदीस'' लेखक अल्लामा इमाम ख़तीब रह0 मुहद्दिस बग़दादी)

सैंकड़ों ऐसे लोग हैं जिन के ज़ाती नाम कुछ और हैं मगर वह सिफाती नाम ही से ज़्यादा मशहूर हैं या पुकारे जाते हैं और लोग उन का अस्ल ज़ाती नाम लेने की बजाए अबु बकर रज़ि0, अबु हुरैरह रज़ि0, सैफुल्लाह रज़ि0, अबु उबैदा रज़ि0 कह कर पुकारते है। और आप उसे बुरा नहीं समझे मगर अहले हदीस का यह सिफाती नाम आप को बहुत बुरा गुज़रता है। आखिर इस की वजह क्या है? कुछ तो स्वयं भी ठंडे दिल से सोचो और कुछ अपनी जगह भी इंसाफ़ से काम लो कि तुम क्या कहते हो और क्या करते हो?

अतः आओ! अगर सब मुसलमानों को एक पलेट फार्म पर लाना है तो उन्हें एक ही झंडे तले जमा करने की कोशिश करो और वह झंडा वही है जो अहले हदीस पेश कर रहे हैं और वह झंडा

मुहम्मद रसूल स0 का झंडा है। दुआ है कि अल्लाह तआला हमें इस का सौभाग्य प्रदान करे और हम बुराइयां और दुर्भावनाएं छोड़ कर एक दूसरे को क़रीब होकर देखने की कोशिश करने लगें और आपसी मुहब्बत, मरव्वत और भाइचारे से ज़िन्दगी बसर करने लगें।

इस हदीस पाक की रोशनी में "وَمَنْ لَمْ يَشْكُرِ الناس لم يشكر الله" जिन्होंने हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट कराया। अल्लाह तआला उन को भलाई प्रदान करे और हम सब को दीनी और संसारिक सफलता से सुशोभित करे।

प्रकाशक

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मुझे यह मालूम होकर बड़ी खुशी हुई है कि मेरे और जनाब सय्यद मसऊद अहमद साहब बी. एस. सी. के बीच जो पत्र–व्यवहार हुआ है, जमाअत अहले हदीस उस को छाप रही है। मैं चाहता हूं कि मेरा यह पत्र भी उस में छाप दिया जाए।

पाठकों से विनती है कि वे इन पत्रों को खुले ज़ेहन बड़े ध्यान और ग़ौर से पढ़ें। फिर आप को मालूम हो जाएगा कि जनाब सय्यद मसऊद अहमद साहब के तर्क कितना ठोस और वज़नी हैं। और अक्ल की कसौटी पर भी पूरे पूरे उतरते हैं और दिल में उतरते चले जाते हैं। मेरे प्रांरभिक पत्रों से आप को अन्दाज़ा होगा कि मैं अपने अक़ीदे और मसलके हन्फ़ी पर कितनी सख़्ती से पाबंद था, और होना भी चाहिए था, क्योंकि मुझे यक़ीन था कि जो कुछ उलमा–ए–अहनाफ़ कहते हैं वही हक़ है, मेरी नज़र में हन्फ़ी मसलक दूसरे सारे मसलकों से उच्च श्रेष्ठ और अच्छा था और इस के बाहर जो कुछ था वह ग़लत था। इसी लिए इब्तिदा ही से हन्फ़ी मसलक की किताबें मेरे मुताला में रहीं। इस दौर में मैं दिन रात हन्फ़ी उलमा की संगत में रहा करता था, मौलवी इलयास साहब की तब्लीग़ी जमाअत में बड़ी लगन से हिस्सा लिया करता। ताल्लुक़ा सजावल ज़िला ठट्टा के मदरसा दारुल फुयूज़ हाशिमिया में जो उस्ताद उस समय थे, उन से हन्फ़ी मसलक की मालूमात हासिल करता। उलमा–ए–अहनाफ़ की कुतुबे तफ़ासीर, फ़िक़्ह और सीरत आदि बड़ी लगन व रुची से पढ़ा करता था कितने पुराने विचार थे मेरे, कि मैं यह ईमान रखता था कि जो कुछ हमारे उलमा अहनाफ़ कहते हैं।

बस वही हक़ है, यहां मुझे कुरआन शरीफ़ की यह आयत याद आती है जिस में अल्लाह तआला फ़रमाता है कि यहूदी व ईसाइयों ने अपने उलमा को अपना रब बना रखा है।

اتخذوا احبارهم ورهبانهم ارباباً من دون الله

मैंने भी कुरआन व हदीस का अध्ययन नहीं किया, क्योंकि मुझे उलमा–ए– अहनाफ़ ने डराया था, कि कुरआन व हदीस बहुत मुश्किल किताबें हैं, कांटों से भरी वादी की तरह हैं इस लिए उन को न पढ़ो, वरना भटक जाओगे, इस लिए मेरी हमेशा कोशिश रही कि हर मसला में उलमा–ए– अहनाफ़ के फतवों पर अमल करूं। बस यही इस्लाम है और यही असल दीन है। अतएव मुझे अपने हन्फ़ी होने पर बड़ा गर्व था, मैं एक पीर साहब का मुरीद भी हो गया था और उन से बेअ़त करने के बाद मैं अपने आप को सूफी तसव्वुर किया करता था, ज़िक्र व अज़कार, वज़ीफा वज़ाइफ और औराद आदि जो हन्फ़ी मज़हब में प्रचलित हैं, उन पर सख़्ती से पाबन्द था खूब सर पटक पटक कर ज़रबें लगाई, मुराक़बे किए और समझता रहा कि बस अब यह हुआ और वह हुआ, मेरे दिन और रात इसी तरह बसर हुआ करते थे कि एक दिन मेरे एक दोस्त जनाब डाक्टर अलीमुद्दीन साहब ने जो हमारे साथ तब्लीग़ी जमाअत में शरीक रहते थे, मुझ से कहा कि उन का लडका अपना दीन (हन्फ़ी मसलक) छोड़ कर अहले हदीस हो गया है जिस की वजह से सारे ख़ानदान में बेचैनी पैदा हो गई है। ख़ानदान के दूसरे लोग भी इस बात से प्रभावित हो रहे हैं। उन्होंने इच्छा व्यक्त की कि उन के हमराह कराची चलूं और उन के बहनोई जनाब मसऊद साहब से जो इस तहरीक को हवा दे रहे हैं, वाद विवाद करके उन लोगों को समझाऊं ताकि वह फिर हंफ़ियत में वापस आ जाएं। अतएव मैं इस

काम के लिए तय्यार हो गया। क्योंकि मेरे नज़दीक उस वक़्त हंफ़ियत ही सच्चा दीन था। मैंने इस बात का उल्लेख अपने उस्ताद मौलवी नूर मुहम्मद साहब सदर मदरसा हाशमिया सजावल से किया तो उन्होंने मेरे जाने का विरोध किया और कहा कि तुम जाओगे तो अपना ईमान भी खो दोगे क्योंकि वे लोग ज़िद्दी हैं, हरगिज़ तुम्हारी बात नहीं मानेंगे। उस्ताद साहब ने यह भी फ़रमाया कि वह स्वयं एक बार उन लोगों के पास गए थे, मगर वह न माने। अतः मुझे मना कर दिया बिल्कुल न जाओ मगर मुझे कुछ ऐसा जोश पैदा हुआ कि बयान नहीं किया जा सकता। मैंने फ़ैसला किया कि मैं ज़रूर जाकर गमराहों को सीधे रास्ते पर लाने की कोशिश करूंगा। अतएव मैं अपने दोस्त अलीमुद्दीन साहब के हमराह कराची चला गया। उन लोगों से मुलाक़ात हुई। बात चीत के लिए असर के बाद का समय तय हुआ। अतएव बाद नमाज़ असर जनाब मसऊद साहब के घर पर महफ़िल जमी सवाल व जवाब शुरु हुए। थोड़ी ही देर बाद मैं ने महसूस कर लिया कि मेरे पास सिवाए तक़लीदी इल्म के और कुछ नहीं है। इधर जनाब मसऊद साहब के पास क़ुरआन व हदीस का एक समन्द्र है जनाब मसऊद साहब क़ुरआन मजीद की आयत पढ़ते, हदीस रसूल सल्ल0 पढ़ कर जवाब तलब करते कि फ़लां मसला में अल्लाह तआला का और उस के रसूल का यह हुक्म और इर्शाद है लेकिन आप का हन्फी मसलक इस के ख़िलाफ हुक्म देता है। मैं जवाब में फ़िक़्ह की कुतुब का हवाला देता, हिदाया शरीफ़, दुर्रे मुख़तार, फतावा आलमगीरी, बहिशती जेवर आदि से फतवे पेश करता इधर क़ुरआन शरीफ की आयतें, बुख़ारी मुस्लिम की हदीसें अबु दाऊद, मोत्ता इमाम मालिक रह0, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा रह0 जैसी कुतुब से अहकाम रसूल स0 पेश किए जाने लगे।

मैं इन किताबों को देख कर घबरा गया। क्योंकि हन्फ़ी उलमा ने मुझ से फ़रमाया था कि कुरआन व हदीस कांटों भरी वादी की मिसाल हैं। उन को बिल्कुल न पढ़ना, इस लिए मैंने कभी उन किताबों को देखने और पढ़ने की तक्लीफ़ गवारा नहीं की थी। केवल नाम सुन रखे थे। आप अन्दाज़ा फ़रमाऐं कि उस समय मेरी क्या हालत हुई होगी, मैं हैरान था, बग़लें झांक रहा था, दिल में एक जोश था कि किसी तरह हन्फ़ी मज़हब को उस समय कर दिखाऊं कि उन की यह सारी दलीलें ग़लत साबित हो जाएं, मुझे हैरत हो रही थी कि हमारे उलमा–ए– अहनाफ अपने उपदेशों और तक़रीरों में, कुतुब और तफ़सीरों में तो हमेशा यह कहा करते हैं कि कुरआन के बाद इस ज़मीन पर बुख़ारी शरीफ़ सब से ज़्यादा सहीह किताब है।

मगर आज उस बुख़ारी व मुस्लिम शरीफ़ से हन्फ़ी मज़हब चौपट हो रहा है क्या किया जाए? किस तरह हंफियत को साबित किया जाए? मैं दिल में ताव खाने लगा, मगर मेरा तक़्लीदी इल्म कुरआन व हदीस का मुक़ाबला न कर सका। मैं ख़ामोश हो गया, जैसे मुझ पर सकता हो गया। मेरे मुख़ातब जनाब मसऊद साहब का अन्दाज़े गुफतगू बड़ा मीठा और नर्म था, दौराने मुबाहसा मैंने उन के चेहरे पर सिवाए मुस्कुराहट और नर्मी के कुछ न देखा। उन की बात चीत भी बड़ी आलिमाना थी, एक एक मसले के लिए वह कई कई आयतें और हदीसें पेश करते जाते थे। और मेरे पास उन के जवाब में एक भी हदीस नहीं थी। लेकिन मैंने शिकस्त तसलीम नहीं की।

मैंने उन से कहा कि आप कुछ अपने सवालात लिख दें। मैं बड़े बड़े उलमा–ए–अहनाफ से मालूम करके आप को सुबूत दूंगा क्योंकि मुझे यह यक़ीन था कि हमारा यह मज़हब हन्फ़ी मसलक कोई खिलौना तो है नहीं, कि उन की बातों से टूट जाएगा। सैंकड़ों साल

से यह मसलक चला आ रहा है, हमारी पुशतहा पुशत हन्फी मसलक की दिलदादह थी। आज जिधर देखिए हन्फी ही हन्फी नज़र आते हैं। हन्फी मज़हब किस क़दर दीने इस्लाम की ख़िदमत कर रहा है, यह उस के अमल से ज़ाहिर है। जिधर देखिए हमारी ही मस्जिदें आबाद हैं, मदारिस इस्लामिया सब हन्फियों के हैं। क्या यह सब बिला दलील ही अपना शीश महल बनाए हुए हैं? जिस को यह हज़रत मसऊद साहब आज गिराने की नाकाम कोशिश में मसरुफ हैं। बस मेरा यह जोश था जिस की वजह से मैंने उन से सवालात तलब किए मसऊद साहब ने बड़ी फराख़ दिली से सवालात लिख दिए।

पाठको! मेरी हैरत की इन्तिहा न रही जब ये सवालात ले कर मैं अपने उलमा–ए–किराम की ख़िदमत में पहुंचा और उन के जवाब तलब किए तो किसी ने भी इन सवालों के जवाब न दिए। किसी ने कुछ कहा और किसी ने कुछ कहा। मैं हैरान था कि ऐ अल्लाह यह क्या तमाशा है? क्यों ऐसा हो रहा है? क्यों अहनाफ टाल मटोल कर रहे हैं? कुछ उलमा ने मुझे डांटा, धमकाया, कि मालूम होता है कि तुम ग़ैर मुक़ल्लिद हो गए हो और बेकार हम को परेशान करने आए हो, किसी ने कहा कि नवाब साहब तुम ग़ैर मुक़ल्लिदों के सवालों के जवाब में ख़ामोशी अख़्तियार करो तो वह तुम्हारा पीछा थक हार कर छोड़ देंगे। किसी ने कहा कि ये नजदी लोग हैं। जिन से बात करना सख़्त मना है। और मैं यह सोचता कि जब हमारा मज़हब हंफी सच्चा है तो फिर क्यों हम ख़ामोश रहें? क्यों किसी एतेराज़ करने वाले से भागें? हमारा तो काम यह है कि हम उन को क़ाइल करके गुमराही से बचाऐं।

जब हमारे उलमा–ए–किराम भी अपने उपदेशों में रसूल सल्ल0 के अनुसरण पर ज़ोर देते हैं इसी को ज़रिया निजात मानते

हैं फिर क्या वजह है कि उन के और हमारे बीच इतनी बड़ी खाई खड़ी हो गई? क्यां आज यह हंफी उलमा उन को छोड़ कर भाग रहे हैं। क्यों दलील की बजाए तावील से काम लेते हैं। एक तरफ सहीह बुख़ारी को कुरआन के बाद सेहत का दर्जा देते हैं, और अमल के मैदान में उस को छोड़ कर भाग जाते हैं। उपदेशों में हदीसें पढ़ पढ़ कर सुनाते हैं। लेकिन अमली मैदान में उस को छोड़ कर अलग हो जाते हैं। एक तरफ इन्कारे हदीस करने वाले को काफ़िर का फ़तवा देते हैं, और दूसरी तरफ खुद अफ़ज़लियत और ग़ैर अफ़ज़लियत का सवाल पैदा करके इन्कारे हदीस करते हुए ज़रा नहीं डरते अगर बुख़ारी शरीफ़ ग़लत है तो साफ़ साफ़ क्यों नहीं इस का ऐलान कर देते? अतः यही सवाल मेरे दिमाग़ में चक्कर काटते रहते।

एक हंफी आलिम ने मुझ से कहा तो यह कहा कि मियां नवाब साहब तुम ने बाक़ायदा अरबी उलूम हासिल नहीं किए, पंद्रह साल का पाठय क्रम पूरा करो, तब कहीं तुम तक़्लीद शख़्सी को हक़ समझ पाओगे, और हमारी तरह बहस करने लगोगे, यह अरबी उलूम हैं, उन में ज़ेर, ज़बर और पेश का फ़र्क़ है, आदि आदि और मैं सोचता कि तक़्लीद शख़्सी को भला ज़ेर, ज़बर, पेश से क्या निस्बत हो सकती है क्यों यह दस्तार बन्द लोग मख़लूक़े खुदा को क़ुरआन व हदीस से दूर कर रहे हैं। हालांकि अल्लाह तआला फ़रमाता है कि मैं क़यामत के दिन एक एक बन्दे से कुरआन का हिसाब लूंगा। और ये लोग कुरआन व हदीस को कांटों से भरी वादी बतला रहे हैं। बस उन की इसी चीज़ ने मुझे तहक़ीक़ पर आमादा कर दिया।

फिर मैंने हदीस की किताबों का अध्ययन शुरु कर दिया, इस तरह मैंने दो साल तक तहक़ीक़ की। हंफ़ी उलमा से मिलता और उन से बहसें करता तो वे लोग नाराज़ हो जाते कुछ हंफ़ी लोगों ने

अपने शर्गिदों को मना कर दिया कि नवाब ग़ैर मुक़ल्लिद हो गया है, इस से मिलना छोड़ दो। अतएव वह मुझ से नफ़रत करने लगे। इधर जनाब मसऊद साहब से मेरा पत्र व्यवहार जारी था मैं अपने सन्देह लिख लिख कर उन को भेजता और वह बाकायदा तर्कों से जवाब देते बस यही पत्र व्यवहार है जो उस समय आप के हाथों में है। जिस के अध्ययन से आप पर रौशन होगा कि अल्लाह ने जनाब मसऊद साहब के ज़रिए किस तरह मुझ पर हक़ स्पष्ट फ़रमाया और मुझे सीधा रास्ता दिखाया।

मैं जनाब मसऊद साहब का यह एहसान कभी न भूलूंगा कि उन की सहीह तब्लीग़ से मैंने सिराते मुस्तक़ीम को पा लिया। आख़िर में मैं जमाअत अहले हदीस का शुक्रिया अदा करता हूं कि जिन्होंने मेरे पत्र व्यवहार छाप कर बड़ा अच्छा काम अंजाम दिया और मैं अपने उपकारी डाक्टर नईमुद्दीन साहब को कभी न भूलूंगा कि यही वह डाक्टर साहब हैं जिन की इस्लाह के लिए मुझे मेरे प्यारे दोस्त अलीमुद्दीन साहब कराची ले गए थे। दर अस्ल यह मेरे लिए रूहानी डाक्टर साबित हुए हैं क्योंकि मैं उनकी इस्लाह के लिए गया था जहां मेरी ही अल्लाह तआला ने इस्लाह फ़रमा दी मेरी दुआ है कि अल्लाह तआला हर भूले हुए को सीधी राह दिखलाएं और कुरआन व हदीस के मुताबिक़ अमल करने का सौभाग्य प्रदान कर दें। اَللّٰهُمَّ اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ.

ख़ाकसार

नवाब मुहियुद्दीन

हेड मास्टर मिडिल स्कूल, गुलामुल्लाह, ज़िला ठट्ठा

नोटः 17— अगस्त 1985 ई0 को नवाब मुहियुद्दीन साहब का देहान्त हो गया।

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

अज़ सजावल सिन्ध

मुकर्रमी जनाब मसऊद साहब

अस्सलाम अलैकुम, उम्मीद है कि आप ठीक से होंगे मुझे सजावल वापस आए हुए लग भग नौ दस दिन का समय होता है। सजावल पहुंच कर मैंने उन तमाम मसलों के बारे में जो आप ने नोट करवाए थे, खूब तहक़ीक़ की। इस के अलावा और बहुत सारी बातें मुझे मालूम हुईं। चूंकि आप अधिक विस्तार पसंद नहीं फ़रमाते। इस लिए सार में लिखता हूं कि मैं हंफ़ी हूं। कुरआन मजीद, सुन्नते रसूलुल्लाह सल्ल0 और मसलके सहाबा किराम के बाद इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का अनुसरण करता हूं और हंफ़ी कहलाता हूं और पूरी

1 जिन मसलों की तरफ ख़त में इशारा किया गया है, वह ये हैं।

1- क्या रसूलुल्लाह स0 नमाज़ की नीयत ज़बान से करते थे?

2- क्या रसूलुल्लाह स0 ने हुक्म दिया था कि मर्द नाड़ी के नीचे हाथ बांधें और औरतें सीना पर?

3- क्या रसूलुल्लाह स0 गर्दन का मसह पुश्त कफ़ से करते थे।

4- क्या रसूलुल्लाह स0 ने हुक्म दिया था कि मर्द नमाज़ में उल्टे पैर पर बैठें और औरतें बतौर तबर्रुक उलटे कूल्हे पर।

5- क्या रसूलुल्लाह स0 ने हुक्म दिया कि इमामत की कुछ शराइत में अगर सब बराबर हों तो इमाम उस को बनाया जाए जिस का सर बड़ा हो शर्म गाह छोटी हो?

6- क्या रसूलुल्लाह सल्ल0 ने हुक्म दिया कि चारों इमामों में से किसी इमाम की तक़्लीद लाज़िम है।

7- क्या रसूलुल्लाह स0 ने रफ़अ़ यदैन निरस्त फ़रमाया था?

8- एक दिरहम से कम निजासते ग़लीज़ा अगर कपड़े या बदन पर लग जाए तो उस को धोए बिना नमाज़ हो जाएगी?

तरह मुतमइन हूं लेकिन हंफ़ी होना ईमान का हिस्सा नहीं समझता। उन का अनुसरण इस लिए करता हूं कि उन्होंने कुरआन व हदीस को खूब समझा और हम को भी बड़ा आसान तरीक़ा से समझाया है।

जब ही तो आज कम से कम एक हज़ार साल से लोग उन का अनुसरण करते चले आते हैं। न सिर्फ़ कराची या सजावल बल्कि सारी दुनिया में उन का अनुसरण किया जाता है और इंशा अल्लाह तआला क़यामत तक करते रहेंगे। आप अंदाज़ा लगाइए कि इन एक हज़ार से अधिक बर्सों में कैसे कैसे उच्च मुहद्दिस योग्य उलमा, आबिद, ज़ाहिद, मुजतहिद, इमाम फ़क़ीह गुज़रे हैं जो उन के विश्वास पात्र थे और उन का अनुसरण करते थे। इमाम साहब रह0 की गिनती ताबईन में थी। इमाम साहब की मुबारक आंखों ने सहाबा रज़ि0 को देखा। सोच विचार कीजिए इमाम साहब रह0 का दर्जा कितना बड़ा था। बड़े बड़े इमाम आप के शागिर्द गुज़रे हैं। आज उन के मुक़ाबले में अगर कोई अपनी अक़्ल को वरीयता दे और उन को बुरा भला कह कर जाहिलों में अपना मक़ाम हासिल करना चाहे तो यह उस का स्वार्थ और नादानी बल्कि जिहालत है।

हदीस को समझना और जांचना एक बड़ी योग्यता का काम है। यह एक खुदा दाद फ़न और अल्लाह का उपहार है। अगर कोई व्यक्ति ईर्ष्या की वजह से बेकार में ही उन का विरोधी बन जाए तो वह हर बात का उल्टा ही मतलब निकालेगा। लेकिन अगर वह अपनी इस्लाह चाहे और हक़ बात जानना चाहे तो वह बिना किसी मुनाज़रा के भी स्वयं ही तहक़ीक़ करके अच्छे व बुरे की पहचान कर सकता है लेकिन वह व्यक्ति जो फ़क़ीह न हो और फ़िक़ह की अ ब ता, सा भी न जानता हो वह इतने बड़े इमाम व मुजतहिद पर कटाक्ष करने का क्या हक़ रखता है। ऐसे जीरियस आदमी को अगर मैं

कुछ मसले फ़िक़्ह के लिख कर भेजूं और उस से मांग करूं कि उन मसलों को कुरआन और हदीस से साबित कर दो या रद्द कर दो तो आप यक़ीन रखिए कि वह अपना सा मुंह ले कर रह जाएगा। आप इमाम साहब रह0 की पाक जीवनी पढ़िए पक्षपात को एक तरफ रख कर खूब अच्छी तरह अध्ययन कीजिए।

एक नहीं बल्कि सैंकड़ों किताबें हैं जिन के अध्ययन से सब हक़ीक़त आप पर रोशन हो जाएगी और इंशा अल्लाह तआला आप को आप की हर आपत्त का जवाब आप से आप मिल जाएगा। अगर आप फरमाएं तो मैं उन किताबों की सूची आप की सेवा में भेजूं वह सारी किताबें इंशा अल्लाह आप को कराची ही में मिल जाऐंगी। ठंडे दिल से अध्ययन कीजिए, किसी को जन्नती या जहन्नमी कहना या कुफ़्र व शिर्क के फ़तवे लगाना सख़्त क़िस्म का पक्षपात है। बड़ी भूल और जिहालत है बल्कि मेरा तो ख़्याल है कि ऐसा कहना परोक्ष ज्ञान जानने का दावा करना है। बाक़ी खैरियत।

फ़क़त

नवाब मुहियुद्दीन

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब साहब!

आप का पत्र मिला। आप से मैंने जो सवाल किए थे उन की आप ने तहक़ीक़ की। अगर इस तहक़ीक़ से मुझे सूचित करते तो बड़ी कृपा होती ताकि मुझे मालूम होता कि मैंने अपनी तहक़ीक़ में क्या गलती की है। मैं विस्तार से नहीं घबराता बल्कि चाहता हूं कि आप विस्तृत जवाब दें। आप को अपना हंफ़ी होना मुबारक, आप हंफ़ी कहलाने में गर्व करते हैं, मैं तो मुहम्मद स0 का एक अदना उम्मती हूं, और मुहम्मदी कहलाने में गर्व महसूस करता हूं, यह अपनी अपनी पसंद है, मैंने मुहम्मदी होना पसंद किया, आप ने हंफ़ी आप अगर वास्तव में रसूले अकरम सल्ल0 का अनुसरण और सहाबा रज़ि0 की पैरवी करते हैं तो फिर तो मुझे आप से कोई लेना देना नहीं है। मेरा भी मसलक यही है लेकिन अन्तर यह है कि मैं अपने मसलक के हर काम की दृष्टि में कुरआन व हदीस और आसारे सहाबा रज़ि0 से दलील पेश कर सकता हूं और आप ऐसा नहीं कर सकते, अगर आप निश्चय ही अपने दावे में सच्चे हैं तो अपने मसलक की हिमायत में एक एक सहीह हदीस पेश कर दीजिए, हदीस रसूलुल्लाह तो बहुत बड़ी बात है, आप इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का कथन ही लिख दें, मगर उस की सनद बयान करें और किताबों का हवाला दें।

1- तक़्लीद शख़्सी का वजूब।

2– औरत और मर्दों की नमाज़ में फ़र्क़

3– उंगली नापाक हो जाए तो तीन बार चाटने से पाक हो जाती है।

4– रफ़अ यदैन निरस्त है।

5– गर्दन का मसह पुश्ते कफ़ से।

6– नमाज़ की नीयत ज़बान से।

फ़क़त

मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मुकर्रमी जनाब मसऊद साहब

अस्सलाम अलैकुम।

आप का कार्ड मुझे मिल गया था। लेकिन समय न होने की वजह से जवाब में देरी हुई। आप ने अपने कार्ड में हंफियत पर जो हमले किए वह आप के नज़दीक साहस पूर्ण हों तो हों, लेकिन मेरे नज़दीक निहायत दुखद बात हैं। आप ने लिखा है, कि हंफ़ी मज़हब एक गढ़ा हुआ मज़हब है। आप के इस वाक्य का मतलब यह निकलता है कि सारे हंफ़ी, सारे शाफ़ई, सारे मालिकी या सारे हंबली बे ईमान हैं, कोई भी मुसलमान नहीं है इस तरह दूसरी सदी से लेकर आज तक जितने मुसलमान गुज़रे हैं, सारे के सारे बे ईमान हैं। आप अपने फ़तवे पर सोच विचार करके देखें तो आप को मालूम होगा कि कितना ख़तरनाक फ़तवा आप दे रहे हैं। और आपका यह फ़तवा कौन सी आयत और कौन सी हदीस की रू से दिया गया है। ज़ाहिर है कि कोई आयत और कोई हदीस नहीं, केवल आप के दिल का बुख़ार है। आप की पैदाइश चौदहवीं सदी की है और इमाम आज़म रह0 का ज़माना पहली और दूसरी सदी का है, आप का ज्ञान केवल किताबी ज्ञान है। अनुवाद की हुई किताबों को पढ़ कर अपनी अक़्ल के मुताबिक़ ग़लत सलत अनुवाद कर लिया। इमाम आज़म रह0 जैसे चोटि के मुहद्दिस और फ़क़ीह, जिन की आंखों ने हज़रत अनस रज़ि0 को देखा था उन के मुक़ाबले में आप का ज्ञान क्या महत्व रखता है? इस की ऐसी ही

मिसाल है, जैसे बूंद दरिया से कहे कि तू दरिया नहीं है, असल में मैं दरिया हूं। कौन इसे तस्लीम करेगा। आप यदि सोचें तो आप को मालूम होगा कि दूसरी सदी के सब से बड़े मुहद्दिस, इमाम और फ़क़ीह कौन थे, ज़ाहिर है कि इमाम आज़म रह0 ही थे और इमाम बुख़ारी रह0, तिर्मिज़ी रह0 और मुस्लिम रह0 आदि आदि यह सब बाद की पैदावार हैं। उन लोगों ने अहादीस जमा की हैं। वह उन की अपनी अक्ल व समझ थी। जिस ने जिस हदीस को जैसा समझा वैसा ही जमा किया। वैसा ही लिखा। एक साहब ने किसी हदीस को ज़ईफ समझा तो दूसरे साहब ने उस को हसन कहा तो तीसरे ने ग़रीब, चौथे ने सहीह या मतलब यह कि ग़र्ज़ जो समझा वह लिखा तो यह भी उन का अनुमान ही हुआ। क्योंकि हदीस के सहीह या मौजू या ज़ईफ़ व ग़रीब होने के बारे में किसी भी मुहद्दिस के पास कोई वहय नहीं आई न कोई फ़रिश्ता आया बल्कि हर एक ने अपने स्तर के मुताबिक़ क़यास दौड़ाया और जैसा समझा वैसा लिखा। ज़ाहिर है कि बाद में पैदा होने वाले मुहद्दिसीन उस मुहद्दिस के मुक़ाबले में कोई महत्व नहीं रखते जिस मुहद्दिस ने सहाबी– ए – रसूल को देखा हो या उन से मुलाक़ात की हो। और जिस की पैदाईश पहली सदी की हो, ज़ाहिर है वह हस्ती केवल इमाम आज़म रह0 ही की है जिन के सुनहरे दौर के बारे में हदीस मौजूद है कि हुजूर स0 ने फ़रमाया है कि सब से अच्छा ज़माना मेरा है और मेरे बाद मेरे सहाबा रज़ि0 का और उन के बाद ताबईन का। शायद आप ने हदीस में पढ़ा होगा। तो इमाम साहब रह0 का शुमार ताबईन में है। ऐसी सूरत में आप के बाद पैदा होने वाले और चौदहवीं सदी में पैदा लेने वालों के शोर की क्या हक़ीक़त आप बच्चों की तरह पांच छः सवाल लिख कर हंफियत पर चोट करना,

हमले करना। उन को कोसना, सारे मुसलमानों को बे ईमान कहना अपने लिए गर्व की बात समझ रहे हैं और अपने को जन्नत का ठेकेदार और सब को जहन्नम का ईंधन समझ रहे हैं। न मालूम कौन सी वहय आप के पास आई है या क्या दलील है, मैं तो देखता हूं कि आप की मालूमात केवल इमाम साहब रह0 के बाद की लिखी हुई कुछ किताबों की हद तक है। आप ने जो कुछ ज्ञान पढ़ा वह इमाम आज़म रह0 के बाद के मुहद्दिसीन का इल्म व क़यास और राय है। इमाम बुख़ारी रह0 की राय और क़यास है कि फ़लां हदीस का मतलब यह है फिर इमाम तिर्मिज़ी की राय और क़यास है कि इस हदीस का यह मतलब है।

मतलब यह कि आप रायों और क़यासों की भूल भुलय्यों में फंस गए। आप यह शिक्षा पेश करते हैं कि हर मसला कुरआन व हदीस से हल करो। आप से किस ने कहा कि हमारा मज़हब या हमारा इमाम ऐसा नहीं करता। ज़ाहिर है कि यह चीज़ आप ने अपने क़यास से तय कर ली है। क्यांकि आप ने देखा कि बुख़ारी साहब रह0 के कुछ इर्शादात इमाम साहब रह0 के इर्शादात के ख़िलाफ़ हैं तो आप ने समझ लिया कि यह चीज़ हदीस के ख़िलाफ़ है। यद्यपि यह आप भूल गए कि इमाम आज़म रह0, इमाम बुख़ारी साहब रह. से बहुत पहले अर्थात पहली सदी के इमाम और मुहद्दिस हैं जो इमाम बुख़ारी साहब रह0 आदि से ज़्यादा हदीसों को परख सकते थे। आज अगर किसी मसला का हल कुरआन व हदीस में न मिले तो क्या करें। आप कहेंगे कि अपनी अक़्ल से फ़तवा लो। अर्थात क़यास करो तो फिर क़यास करना ही ठहरा तो फिर दूसरी सदी के मुहद्दिस फ़क़ीह के क़यास पर क्यों न अमल किया जाए। आज कल के मुहद्दिस और क़यास वाले इमाम आज़म रह0 के मुक़ाबला में क्या

हैसियत रखते हैं। आज अगर मेरे जैसा कोई जाहिल इन्सान आप के मसलक को अपनाए तो उस का तो बेड़ा ही ग़र्क़ हो गया। क्योंकि वह जाहिल न हदीस समझ सकता है न कुरआन, हर हर बात में मोहताज, करे तो क्या करे, आप कहेंगे कि हम से पूछ, हम कुरआन व हदीस की बात बतलाते हैं, तो यह भी तक़्लीद हुई, हर बात आप से पूछ कर करे तो यह आप की तक़्लीद हुई आप फरमाऐंगे कि हम हर बात कुरआन व हदीस के अनुसार बतलाऐंगे। क्या सनद है कि आप ऐसा ही करेंगे। क्योंकि जब दूसरी सदी के इमाम मुहद्दिस पर भरोसा नहीं किया जा सकता तो फिर उस के बाद वाले मुहद्दिस पर किस तरह भरोसा किया जाए। क्या सनद है कि आप की बात बिल्कुल कुरआन और हदीस के अनुसार व अनुकूल है। आप फ़रमाऐंगे बुख़ारी शरीफ़ में देखो, तिर्मिज़ी शरीफ़ में देखो आदि आदि तो इन किताबों में जो हदीसें लिखी हुई हैं वह उन मुहद्दिसीन अर्थात इमाम बुख़ारी रह0, इमाम तिर्मिज़ी रह0 और इमाम मुस्लिम रह0 आदि की लिखी हुई हदीसें हैं उन्होंने अपने अपने मेयार के अनुसार हदीसें लिखी हैं और यह सब इमाम साहब रह0 के बाद के मुहद्दिस हैं। क्या सनद है कि उन हज़रत के क़यासात सहीह ही हों। मुमकिन है कि जिस हदीस को इमाम बुख़ारी रह0 अपने मेयार के मुताबिक़ सहीह ख़्याल कर रहे हैं वह हदीस इमाम आज़म रह0 मेयार पर ग़रीब और ज़ईफ हो। बाद वालों के तो जितने दफतर हैं सब उन की रायों और क़यासों के दफ्तर हैं। जिस ने जैसा सोचा जैसा समझा वैसा ही लिख दिया। आप के मसलक पर चलने के लिए तो सारे लोगों का मुहद्दिस, फ़क़ीह और विद्वान होना शर्त है। जब तक हर व्यक्ति मुहद्दिस न हो आप के मसलक पर चल ही नहीं सकता। और आज ज़माना में

जाहिलों की अधिकता है। उन का तो बेड़ा ही ग़र्क़ है। मजबूरन वह आप के पीछे चलेंगे और यह तक़्लीद होगी। तक़्लीद के बिना चारा ही नहीं। अगर मैं हंफ़ियत को छोड़ कर आप के मसलक पर चलने लगूं तो मैं आप की रहबरी का क़दम क़दम पर मोहताज हूंगा कि अब क्या करूं, ज़ाहिर है कि आप से पूछूं। तो जब आप से पूछना ही ठहरा तो चौदहवीं सदी के बच्चे से पूछने से बेहतर है कि दूसरी सदी के मुजतहिद, मुहद्दिस, इमाम और फ़क़ीह से पूछूं चौदहवीं सदी के नन्हें और नादान दोस्तों की रायों पर चलने से तो दीन का शीराज़ा बिखर जाएगा। दीन छिन्न भिन्न जाएगा। कई सम्प्रदाय बन जाएंगे। कोई मसऊद सम्प्रदाय होगा, कोई सत्तारी, कोई कुछ, कोई कुछ। एक साहब अपनी राय चलाऐंगे तो दूसरे साहब उस को काट कर अपना क़यास दौड़ाऐंगे। झगड़े और फसाद शुरु हो जाऐंगे। हर व्यक्ति तक़्लीद शख़्सी और तक़्लीद महज़ के चक्कर में फंस जाएगा। जैसा कि आप या आप की जमाअत शब्दों के चक्कर में फंसी हुई है। आप हदीस के शब्दों को देखते हैं लेकिन उस की पृष्ठ भूमि और उतरने के समय को नहीं जानते।

जैसे अगर यह कहा जाए कि यह सड़क रात भर चलती है तो बस आप शब्दों को पकड़ लेंगे कि सड़क ही रात भर चलती है और अगर इमाम आज़म रह0 साहब स्पष्टीकरण फरमाऐं कि इस का मतलब यह है कि उस सड़क पर रात भर लोगों का आना जाना रहता है तो आप चीख़ने लगे कि देखिए साहब हदीस में साफ लिखा है कि सड़क रात भर चलती है। लेकिन इमाम साहब रह0 हदीस के ख़िलाफ़ फ़रमा रहे हैं। बस यह शब्दों का चक्कर है जिस ने आप को परेशान कर रखा है। अगर आप का कमसिन बच्चा आप के मुक़ाबला में मुहद्दिस होने का दावा करे तो आप ख़ुद ही सोच विचार

कीजिए कि क्या उस के दावा को आप या कोई भी तस्लीम करेगा। अगर बुख़ारी शरीफ़, तिर्मिज़ी शरीफ़ आदि किताबें न लिखी जातीं, तो आप क्या करते? और उन किताबों में जो हदीसें दर्ज हैं जिन को आप दलील में पेश करते हैं वह सब लिखने वालों के मेयार के मुताबिक़ लिखी गई हैं। जैसा कि मैं पहले विनती कर चुका हूं कि यह भी सब उन बुजुर्ग मुहद्दिसों के क़यासात हैं, जिन को जिस ने जैसा समझा वैसा ही लिखा, उन के सहीह या मौजू या ज़ईफ़ होने के बारे में उन के पास कोई वहय नहीं आई, सब क़यासात हैं। आप हम को क़यासी कहते हैं। लेकिन आप स्वयं क़यासात के चक्कर में चक्कर खा रहे हैं। अपने आप को शब्दों की पन चक्की से निकालिए और खुली वादी में तशरीफ़ लाइए। इंशा अल्लाह उस वादी में आप को ऐसी हवा मिलेगी जिस से आप के सर से क़यासात का चक्कर जाता रहेगा और आप रायों और क़यासात के भंवर से आज़ाद हो जाऐंगे। ऐसा नज़र आता है कि आप और आप की जमाअत का हर आदमी लीडर शिप चाहता है, अहलुर्राय बनना चाहता है और लोगों को धोखा दे कर, कुरआन और हदीस का बहाना बनाकर लोगों को क़यासात की दुनिया में फंसाना चाहता है, शरीअत तैयार करना आप की जमाअत का लक्षय है बाद वालों के क़यासात और रायों पर चल कर आप दीन में नई नई बातें (बिदअतें) निकाल रहे हैं। अगर उन को आप क़यास और राय नही कहते तो फिर क्या आप के या आप की जमाअत के लीडरों के पास वहय आई है। सुनिए, अहले हदीस तो हम हैं, हमारा हर फेल, हर अमल खुदा के फ़ज़्ल से कुरआन और हदीस के अनुकूल है। अब यह और बात है कि आप के लीडर क़यास और राय दौड़ा कर हमारी हदीसों को झुठलाने की कोशिश करें। हदीस को झुठलाना हदीस से इन्कार करना है, आप

जो हुज़ूर स0 की हदीसों को झुठला रहे हैं वह मात्र क़यास की बुनियाद पर, कि फ़लां साहब ने ऐसा लिख दिया है तो वह भी उन साहब का क़यास हुआ। आख़िर में मैं आप को मश्वरा दूंगा कि क़यास और रायों के चक्कर से अपने आप को निकालिए। अहलुर्राय बनने की कोशिश न कीजिए। इस में आप ही का भला है। आप इस पत्र का जवाब अलीमुद्दीन साहब के पते पर दीजिए इंशा अल्लाह मुझे मिल जाएगा।

ख़ादिम

नवाब

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब साहब!

आप का खुतबा पहुंचा, पढ़ कर हैरत हुई कि मेरे सवाल का जवाब कहीं नहीं। यद्यपि पत्र चौदह पन्नों पर फैला हुआ है। आप ने बेकार इतना लम्बा पत्र लिखा। इतना लिख देना काफी था कि इन मसाइल के बारे में मौजूदा हदीस की किताबों में कोई हदीस नहीं है। इमाम अबु हनीफ़ा रह0 को वह हदीसें मिली थीं लेकिन या तो उन्होंने उन की इशाअत नहीं की या इशाअत तो की लेकिन बाद वालों ने उन अहादीस को महफ़ूज़ नहीं किया और वह नष्ट हो गयीं। यह सब आप के पत्र का सारांश है!

इमाम अबु हनीफ़ा रह.0 और जमअ अहादीस

आप ने सोच विचार किया यह जवाब कितना आपत्ति जनक है। अगर इमाम अबु हनीफ़ा रह0 को वह अहादीस मिली थीं तो क्या किसी खुफ़िया ज़रिया से मिली थीं कि उन के समकालीन उलमा बिल्कुल अनभिज्ञ रहे। उन्होंने स्वयं उन अहादीस को महफ़ूज़ क्यों न किया? अगर उन को फ़िक़ह की तर्तीब ने फ़ुर्सत नहीं दी तो उन के शागिर्दों ने उन को महफ़ूज़ क्यों न कीं? दूसरे इमामों की बताई हुई हदीसें तो उन्होंने महफ़ूज़ किया लेकिन अपने उस्ताद की बताई हुई अहादीस को ग़ैर महफ़ूज़ छोड़ दिया।

इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के कथनों के दफ़्तर के दफ़्तर महफ़ूज़

हैं। लेकिन इन कथनों का स्त्रोत महफ़ूज़ नहीं। अफसोस हादी–ए–अकरम रसूले मोहतरम स0 की अह्रादीस को नष्ट कर दिया गया और उन के एक उम्मती के कथनों को महफ़ूज़ किया गया। क्या अक़्ल इस को तस्लीम करती है?

इमाम अबु हनीफ़ा रह0 और उन की तरफ मंसूब किए गए मसाइल

अच्छा माफ़ कीजिए, एक बात पूछता हूं। दुर्रे मुख़तार में है।

ثُمَّ الْاَكْبَرُ رَاْسًا وَّالْاَصْغَرُ عُضْوًا.

अर्थात उल्लिखित शर्तों में अगर सब बराबर हों तो फिर उसे इमाम बनाया जाए जिस का सब से बड़ा सर और लिंग सब से छोटा हो।

क्या यह इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का कथन है। मेरा तो ईमान है कि यह कथन इमाम साहब का नहीं है बल्कि बाद में गढ़ा गया है। लेकिन अगर आप इसी पर अड़े हैं कि बाद में नहीं गढ़ा गया बल्कि उन्हीं का फ़तवा है तो फिर आप इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की शान को दो बाला नहीं कर रहे बल्कि उस कथन को उन की तरफ मंसूब करके उन की तौहीन कर रहे हैं। बल्कि आपके अनुसार आप के इमाम साहब रह0 का हर कथन हदीस के अनुसार है तो फिर यह कथन रसूलुल्लाह स0 की तरफ़ मन्सूब हुआ और अब यह एक इमाम ही का अपमान नहीं रहा बल्कि अल्लाह के रसूल सल्ल0, का अपमान हुआ। बताइए कोई उम्मती अपने रसूल स0 की तरफ़ ऐसे कथन को मंसूब करना गवारा करेगा?

मैं तो इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की **इज्ज़त व तक़्वा** का ख़्याल

करते हुए यही बात कहता हूं कि ऐसे मसाइल बाद में गढ़े गए हैं और उन के गढ़े हुए होने के सुबूत के लिए मात्र उन का मकरूह होना ही काफ़ी है। लेकिन मैं आप की तसल्ली के लिए एक बहुत बड़े हन्फ़ी विद्वान मौलवी अब्दुल हई फ़रंगी महली की तहरीर पेश करता हूं। वह लिखते हैं:

يهل الامر فی دفع طعن المعاندين على الامام ابی حنيفة وصاحبيه فانهم طعنوا فی كثير من المسائل المدرجة فی فتاوی الحنفية الها مخالفة للاحاديث الصححة او انها ليست متاصلة علىٰ اصل شرعی ونحو ذٰلک وجعلوا ذٰلک ذريعة الیٰ طعن الائمة الثلٰثة ظنا منهم انها مسائلهم ومذاهبهم وليس كذالک بل هی من تفريعات المشائخ. (النافع الكبير ص ١٣ ١)

"फ़तावा हंफ़िया में जो मसाइल दर्ज हैं, विरोधियों ने उन को इमाम अबु हनीफ़ा रह0, इमाम अबु यूसुफ़ रह0, और इमाम मुहम्मद रह0 पर व्यंग करने का एक ज़रिया बना रखा है क्योंकि यह मसाइल अक्सर उसूल शरअी पर आधरित नहीं हैं और अहादीस सहीहा के ख़िलाफ़ हैं। वह यह ख़्याल करते हैं कि यह अइम्मा सलासा के मसाइल और मज़ाहिब हैं। हालांकि हक़ीक़त यह नहीं है बल्कि यह मशाइख़ के तक़रीआत हैं न कि उन तीनों इमामों के। और इस तरह उन तीनों इमामों पर व्यंग करना आसान हो जाता है।" आगे देखिए।

अब्दुल क़ादिर बदायूनी हंफ़ी अपनी किताब बवारिक़ शैख़ नजदी में लिखते हैं:

"इंदराज ख़्वारिज व मुतज़ला दर कुतुबे हंफ़िया

ज़ाइद अज़ हद अस्त हज़ारां हज़ार ख़्वारिज व मतज़ला दर फ़रू फ़ेका हंफ़ी मज़हब बूदन्द। तलामज़ा ख़्वास इमाम आज़म रह0 व अबु यूसुफ मतमज़हब बमज़ाहिब बातिला गुज़शता व हज़ारां हज़ार रवायत अज़ां कसां मुताबिक़ ईशां दर कुतुब फ़तावा दाख़िल अस्त।"

अर्थात "हंफ़ी किताबों में ख़ारजियों और मोतज़लियों के इंदराजात हद से ज़्यादा हैं हज़ारों ख़्वारिज और मोतज़िला शुरू में हंफ़ी थे। इमाम अबु हनीफ़ा रह0 और क़ाज़ी अबु यूसुफ के ख़ास शागिर्दों में ऐसे लोग शामिल हैं। जो असत्य मज़हब के मतवाले थे और उन से हज़ारों रिवायतें उन के असत्य मज़हब के अनुसार कुतुब में दाख़िल हैं।"

(अलकलामुल मतीन पृ0 240)

मतलब यह कि नमूने के लिए दो ही हवाले काफ़ी हैं। अब आप समझ गए होंगे कि फ़िक़्ह हंफ़िया में सब कुछ इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का ही नहीं है बल्कि दूसरों का गढ़ा हुआ भी है और उस पर उलमा की व्याख्याएं गवाह हैं।

शराब की हिल्लत

जमहूर अइम्मा–ए– दीन का सहमति से मसला है कि मुस्कुर की वह मात्रा जो सुकुर न पहुंचे हराम है और यह उस हदीस के भी मुताबिक़ है जो मौजूदा कुतुब हदीस में पाई जाती है। लेकिन इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का मज़हब यह है कि वह मात्रा जो सुकुर की हद को न पहुंचे हलाल है। अब आप तो यह फ़रमाऐंगे कि इमाम अबु

हनीफ़ा रह0 के पास ऐसी हदीस होगी जिस की रू से यह मात्रा हलाल होगी, तो सवाल यह पैदा होगा कि फिर कौन सी हदीस सहीह है आप फ़रमाऐंगे हलाल करने वाली। मगर वह तो नष्ट हो गई। और जो हराम क़रार देने वाली हदीस है वह उस सहीह के ख़िलाफ होने की वजह से मुंकिर हो गई बल्कि मौजू। अतः अहादीस का मौजूदा सरमाया उस नष्ट हुए अहादीस के भंडार ख़िलाफ़ होने की वजह से मौजू क़रार देना पड़ेगा। और यह बात तो शायद मुंकिरे हदीस भी नहीं कहेगा कि मौजूदा सरमाया सब का सब मौजूआत का ढेर है और अगर यह कहा जाए कि ग़ायब और मौजूदा दोनों हदीसें सहीह हैं तो फिर इस्लाम एक अजुबा ही होगा और उस को अजाइब ख़ाना में रखना ज़्यादा मुनासिब होगा।

अब्दुल अज़ीज़ साहब मुहद्दिस देहलवी अपने एक फ़तवे में इस मसले पर बहस करते हुए फ़ैसला करते हैं:

هذا هو تحرير مذهب ابى حنيفة والحق عندنا فى هذه المسئلة ماهو عند الجمهور.

यह हज़रत अबु हनीफ़ा रह0 के मज़हब की तहरीर है और हक़ हमारे नज़दीक वह है जो सब का मज़हब है।

(फ़तावा अज़ीज़ी जिल्द 1 पु0 190)

अब आप समझ लीजिए जब मैं कोई बात कहूं तो उसे यह कह कर न टाल दीजिए कि यह चौदहवीं सदी के बच्चे की बात है और पहली सदी (दूसरी सदी) के इमाम के कथन के मुक़ाबले में कम है। मेरी बात के साथ सारे उलमा या दीन के इमामों की एक जमाअत की सहमति होगी। यह उन की बात होगी न कि मेरी। जमहूर से मुराद दीन के सामान्य इमाम हैं जिन में सहाबा किराम रज़ि0, ताबईन आदि शामिल हैं। उन में से बहुत से इमाम अबु हनीफ़ा

रह0 के बराबर के हैं। और एक बड़ी संख्या उन से भी श्रेष्ठ है। क्या इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के इस कथन को भी माना जाएगा जो दीन के सामान्य इमामों के भी विरुद्ध हो और फिर हदीस के भी?

इमामों की श्रेष्ठता तक़्लीद की मोहताज नहीं

मैं उन तमाम फ़ज़ाईल को तस्लीम करता हूं जो आप ने इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के बारे में बयान किए हैं, मैं किसी भी चीज़ में अपने को उन का जैसा तो अलग, उन के पांव की ख़ाक के बराबर भी नहीं समझता। लेकिन तक़्लीद नहीं करता जिस तरह आप इमाम औज़ाई रह0, इमाम ज़ुहरी रह0, इमाम हसन बसरी रह0, इमाम मालिक रह0 और इमाम शाफ़ई रह0 की तक़्लीद नहीं करते, यद्यपि आप उन की बुजुर्गी के क़ाइल हैं। याद रखिए किसी व्यक्ति की श्रेष्ठता इस बात की मोहताज नहीं कि उस की तक़्लीद की जाए। यद्यपि मात्र श्रेष्ठता ही तक़्लीद की दलील है तो फिर इमाम हसन बसरी रह0 इस के ज़्यादा हक़दार हैं। इस लिए कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ने तो केवल एक बार बचपन में हज़रत अनस रज़ि0 को देखा था। लेकिन इमाम हसन बसरी रह0 की तो सारी ज़िन्दगी सहाबा रज़ि0 के दौर में गुज़री। सैंकड़ों सहाबा रज़ि0 को देखा ही नहीं बल्कि उन की संगत और शागिर्दी से लाभान्वित हुए और केवल एक समय में 300 सहाबा किराम रज़ि0 की शक्तिशाली जमाअत उन के साथ थी। (दलीलुल फ़ालिहीन)

इसी तरह इमाम अता रह. मशहूर ताबअी हैं। जिन के बारे में स्वयं इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का बयान है। कि मैंने उन से बेहतर आदमी नहीं देखा। सैंकड़ों सहाबा रज़ि0 की सोहबत से लाभान्वित

हुए। दो दो सौ सहाबा रज़ि0 के साथ मस्जिद हराम में नमाज़ पढ़ा करते थे और उनकी बुलन्द आवाज़ से आमीन कहने की आवाज़ को सुना करते थे। (बैहेक़ी)

मात्र श्रेष्ठता ही तक़्लीद का कारण है तो इमाम अता रह0 इस के ज़्यादा हक़दार हैं। इस लिए कि उन की आंखों ने एक नहीं सैंकड़ों सहाबा रज़ि0 को देखा था। और ज़रा ऊपर चलिए, अगर श्रेष्ठता ही की वजह से तक़्लीद ज़रूरी हो तो फिर किसी सहाबी की तक़्लीद क्यों न की जाए कि उस की आंखों ने तो वह जमाले जहां आरा देखा जिस के सामने सारी उम्मत का हुस्न व जमाल कम है। मगर होता क्या है? सहाबा के फ़तवे को छोड़ा जाता है और हंफ़ी मज़हब के फ़तवे को माना जाता है। ऐसी मिसालें बहुत सी मौजूद हैं, जैसे मसला मुसिर्रह के सिलसिला में हंफ़ी मज़हब का फ़तवा सहाबी–ए– जलील हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 के फ़तवे के ख़िलाफ़ है।

(हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रह0 का फ़तवा सहीह बुख़ारी में देखें)

मुन्तहाए फ़ज़ीलत की पैरवी

अच्छा, और ज़रा ऊपर चलिए, आप भी फ़ज़ीलत वाली हस्ती की तलाश में हैं और मैं भी आप इस खुलूस में इमाम अबु हनीफ़ा रह0 तक पहुंच कर रुक जाते हैं और मैं इस तलाश में इतना ऊपर चला जाता हूं कि मेरे सामने वह हस्ती आ जाती है जिस पर तमाम फ़ज़ीलतें ख़त्म होती हैं और जिस से ज़्यादा श्रेष्ठ न कभी हुआ है न होगा। वह है, अल्लाह के रसूल सल्ल0 की ज़ात। अगर श्रेष्ठता ही तक़्लीद का पैमाना है तो उस की तक़्लीद क्यों न की जाए जिस से श्रेष्ठ कोई नहीं, अगर इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की आंख ने एक

सहाबी को देखा तो क्या हुआ, यहां वह आंख है जिस ने आयाते रब्बिहिल कुब्रा को देखा है। यहां वह दिल है जो मुहब्बते इलाही है, यहां वह ज़बान है जो وَمَا يَنطِقُ عَنِ الْهَوَىٰ की चरितार्थ है, जिस की ज़ात المجتهد قد ينطئ ويصيب के सिवा है और शरीअते इलाहिया के बयान में पूरी तरह मासूम है।

क्या इमाम अबु हनीफा रह0 ही हदीस का सही मतलब समझे

यहां पहुंच कर कहीं आप फिर वही न कह दें कि रसूले मासूम स0 की हदीस आप क्या समझें? वह तो इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ही समझते थे। सड़क चलने की मिसाल दे कर आप ने इस तरफ़ इशारा भी फ़रमाया है तो जनाब मैं तस्लीम किए लेता हूं कि मैं तो हदीस को नहीं समझता, लेकिन क्या दीन के सामान्य इमाम भी नहीं समझते थे। क्या इमाम हसन बसरी रह0 भी नहीं समझते थे। इस क़िस्म की बातों से आप दीन के दूसरे इमामों की तौहीन क्यों करते हैं? मैं अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहता, बल्कि जो कुछ कहता हूं इन इमामों की व्याख्या होती है जो हर दृष्टि से इमाम अबु हनीफ़ा रह0 से ज़्यादा दर्जा रखते हैं जैसे इमाम हसन रह0 रुकू में जाते समय और रुकू से उठ कर रफ़अ़ यदैन करते थे और फ़रमाते थे कि रसूलुल्लाह स0 के सहाबा रह0 भी रुकू से पहले और रुकू से उठ कर रफ़अ़ यदैन करते थे।

(كتاب رفع اليدين للامام البخاریؒ)

अब बताइए कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 जिन्होंने एक सहाबी रज़ि0 को भी रफ़अ़ यदैन छोड़ते नहीं देखा उन की बात मानी जाए

या इमाम हसन बसरी की मानी जाए। जिन्होंने सैंकड़ों सहाबा किराम रज़ि0 को रफ़अ़ यदैन करते देखा।

हां अगर आप यह कहने की हिम्मत कर बैठें कि इमाम हसन बसरी रह0 की इस रिवायत का मतलब भी आप नहीं समझे बल्कि इमाम साहब रह0 ने सही समझा है अर्थात सहाबा किराम रज़ि0 भी रफ़अ़ यदैन नहीं करते थे तो मैं सिवाए इन्ना लिल्लाहि के और क्या कह सकता हूं। اِنَّمَا اَشْكُوْا بَثِّيْ وَحُزْنِيْ اِلَى اللهِ.

यह बात यहीं ख़त्म नहीं हो जाती बल्कि मैं यह कह सकता हूं कि जिस तरह इमाम हसन बसरी रह0 के कथन को मैं नहीं समझा, इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के कथन को आप नहीं समझे किस्सा पाक हुआ सारी किताबें अलग रखदी जाएं या दरिया में डुबो दी जाऐं।

हां एक बात और सुन लीजिए। अगर दर्जों की वजह से मैं इमाम हसन बसरी रह0 के कथन का मतलब नहीं समझा तो फिर रसूलुल्लाह सल्ल0 की अहादीस का मतलब इमाम अबु हनीफ़ा रह0 नहीं समझे, इस लिए कि उन दोनों के बीच दर्जों के फ़र्क की कोई हक़ीक़त नहीं। समन्द्र के मुक़ाबले में एक बूंद की मिसाल भी सादिक़ नहीं आती। चलिए छुट्टी हुई, इल्मे दीन का ज़ख़ीरा बिल्कुल बेकार और फ़िज़ूल है। نَعُوْذُ بِاللهِ مِنْ ذَالِكَ.

तक़्लीद और शरीअत साज़ी

मैं इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के मुक़ाबले में मुहद्दिस बनने का दावा नहीं करता, लेकिन अगर मेरा छोटा बच्चा मेरे मुक़ाबले में मुहद्दिस बनने का दावा करे तो मुझे खंडन करने का क्या हक़ है। मैंने अपने छोटे बच्चे की बात को भी मान लिया है। जब उस ने कहा कि आप का फ़ला काम हदीस के ख़िलाफ़ है। मैंने कहा लाओ,

हदीस दिखाओ। उस ने किताब खोल कर सामने रखदी। मैंने अपनी ग़लती मान ली, और अपने काम से तौबा कर ली। ऐसी मिसालें मेरी ज़िन्दगी में कई हैं। मैं अपने को "हम चुनीं दीगरे नीस्त" का चरितार्थ नहीं समझता जो व्यक्ति भी हदीस पेश करे, चाहे वह कितना ही छोटा और तुच्छ व ज़लील क्यों न हो, मैं उस की बात मान लेता हूं और मान लूंगा, लेकिन जो व्यक्ति स्वयं मसला गढ़कर अपना फ़तवा मेरे सामने पेश करे तो मैं नहीं मानूंगा। चाहे वह फ़तवा देना वाला कोई भी हो। सुनिए! यह दीन अल्लाह का दीन है। (قرآن مجید) ورأيت الناس يدخلون في دين الله افواجا दूसरी जगह अल्लाह तआला फ़रमाता है (قرآن مجید) الا لله الدين الخالص और इस दीन का शरीअत साज़ भी स्वयं अल्लाह है। जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है। (قرآن مجید) شرع لكم من الدين، और अगर दूसरा शरीअत साज़ी करे तो वह शिर्क करता है: امـلهم شركاء شرعوا لهم من الـديـن مـالم يـأذن بـه الله. क्या उन्होंने को साझी बना रखे हैं जो उनके लिए दीनी शरीअत बनाते हैं। जिस अल्लाह ने इजाज़त नहीं दी। (कुरआन मजीद) (قرآن مجید) ولايشرك في حكمه احدا अल्लाह अपने हुक्म में किसी को शरीक नहीं करता।

रसूलुल्लाह स0 इस दीन के पहुंचाने वाले हैं "بلغ مآ انزل اليك من ربك" (القرآن) यह दीन रसूलुल्लाह के पास वहय द्वारा आया और यह वहय कुरआन व हदीस में सुरक्षित है। इसी के अनुसरण का हुक्म हम को दिया गया है। और जो इस के अलावा हो उस के अनुसरण से रोका गया है इर्शाद है: اتبعوا ما انزل اليكم من ربكم ولا تتبعوا من دونه اولياء: इस चीज़ का अनुसरण करो जो तुम्हारे रब की तरफ़ से उतरा है। इस के सिवा दलीलों का अनुसरण न करो।

(अलकुरआन)

अब बताइए! इन फ़िक़ह की किताबों में जो कुछ है, सब अल्लाह की ओर से है? अगर है तो कुबूल है और अगर नहीं और कदापि नहीं तो इस का अनुसरण हराम है और हराम को हलाल बल्कि वाजिब समझना कुफ़्र व शिर्क है। अगर आप वही बात दोहराऐं कि यह "अल्लाह की ओर से" इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के पास था बाद में नष्ट हो गया और अब इमाम क़शीरी रह0 के संदूक़ से बर आमद होगा तो यह उस कथन के जैसा होगा जो शिआ हज़रात कहा करते हैं कि असली कुरआन नष्ट हो गया और अब इमाम ग़ाइब मेहदी लेकर ज़ाहिर होंगे।

सही बुख़ारी की हदीस को मानना इमाम बुख़ारी रह0 की तक़्लीद नहीं

मैं इमाम बुख़ारी रह0 की राय और क़यास को मानता हूं और न इमाम मुस्लिम रह0 की सहीह हदीस को मानता हूं चाहे इस के पेश करने वाले इमाम बुख़ारी रह0 हों या इमाम मुस्लिम रह0, अबु दाऊद हों, या इमाम अबु हनीफ़ा रह0। हां यह ज़रूर है कि इमाम बुख़ारी रह0, इमाम मुस्लिम रह0, इमाम अबु दाऊद रह0 ने हदीस की किताबें लिख कर पेश कर दीं और इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ऐसा नहीं कर सके, तो इस में मेरा या इमाम बुख़ारी रह0 आदि का क्या दोष है?: ذٰلِكَ فَضْلُ اللهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَآءُ.

अगर इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की बयान की गयी हदीसें इमाम बुख़ारी रह0 के नज़दीक ज़ईफ़ थीं तो क्या इमाम मुहम्मद रह0 और क़ाज़ी अबु यूसुफ रह0 के नज़दीक भी वे ज़ईफ़ थीं? उन्होंने क्यों न जमा कर दिया? अच्छे गुमान से काम लीजिए। मुहद्दिसीन को इमाम

अबु हनीफ़ा रह0 से बैर नहीं था कि जान कर वे ऐसा करते आप ने मुहद्दिसीन की शान में कितना अपमान जनक वाक्य लिखा है कि "इमाम बुख़ारी रह0, इमाम तिर्मिज़ी रह0, मुस्लिम रह0 आदि बहुत बाद की पैदावार हैं।"

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम
वे क़त्ल भी करते हैं तो चर्चा नही होता

अच्छा जनाब! क्या इमाम मालिक रह0 भी बाद की पैदावार हैं, अल्लामा शिबली नोमानी के कथना नुसार इमाम मालिक रह0 इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के उस्ताद हैं (سيرة النعمان) इमाम मालिक रह0 की लिखी हुई किताब भी मेरे अध्ययन में रहती है बल्कि उस से भी पहले लिखी हुई किताब "सहीफ़ा हुमाम" जिस को हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 ने मुरत्तब किया था वह भी मेरे अध्ययन में रहती है, इन्हीं किताबों से अपने अपने मसाइल के तर्क उपलब्ध कीजिए या कहिए कि उन को भी न मिले।

सही बुख़ारी व सही मुस्लिम की सेहत पर उम्मत की सहमति

यह भी आप ने ख़ूब लिखा कि सही बुख़ारी में जो अहादीस हैं वह इमाम बुख़ारी रह0 का क़यास ही तो हैं। जी नहीं, अहले सुन्नत के हर सम्प्रदाय की उस की सेहत पर सहमति है, उन अहादीस की सेहत मात्र अटकल और वहम व गुमान की मोहताज नहीं हैं बल्कि इस के लिए तर्क हैं, इसके प्रमाण हैं और तर्क भी ठोस। ऐसे तर्क कि उन के ज़रिए से आज भी हर हदीस को कसौटी पर परखा जा सकता है, जो कुछ उन्होंने लिखा सनद के साथ उम्मत के सामने

रख दिया। अब भी अगर कोई चाहे तो परख कर देख ले, यहां कोई चीज़ नष्ट नहीं हुई।

इस मैदान में और लोग भी सीना ठोंक कर उतरे लेकिन हदीस की किताबों और व्याख्या गवाह हैं कि उन्होंने ठोकर खाई और हर हदीस जिस को वह सही समझते थे, सही नहीं निकली,इस मैदान में दो ही शहसवार नज़र आए कि जो दावा किया वह सही साबित हुआ। अर्थात इमाम बुख़ारी रह0 और इमाम मुस्लिम रह0 उम्मत ने उनकी अहादीस को दावे के अनुसार सही पाया और दोनों किताबों को "सहीहैन" का लक़ब दिया। وَاللّٰهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ يَّشَآءُ.

उलमा–ए–अहनाफ़ इन किताबों की अहादीस को ज़ईफ़ कह सकते थें मगर हैरत का मक़ाम है कि तमाम उलमा–ए–अहनाफ़ ने आम सहमति से उन को सही माना। अल्लामा कुस्तलानी रह0 लिखते हैं, (ارشادالساری) تجدله جباه التصانيف अर्थात सही बुख़ारी के सामने सब किताबों की पेशानियां सजदा करती हैं।

इमाम नसाई रह0 फ़रमाते हैं: اجمعت الامة علیٰ صحة هٰذين الكتابين अर्थात बुख़ारी व मुस्लिम की सेहत पर उम्मत की सहमति हैं (नुसरतुल बारी)

उस्ताज़ अबु इसहाक़ फ़रमाते हैं: اهل الصنعة مجمعون على ان الاخبار ألتى اشتمل عليها الصحيحان مقطوع بصحة أصولها ومتونها۔ (فتح المغيث) अर्थात फ़न्ने हदीस के माहिरीन इस पर सहमत हैं कि बुख़ारी और मुस्लिम की अहादीस पूरे तौर पर सही हैं।

इमामुल हरमैन लिखते हैं: لاجماع علماء المحدثين علیٰ صحتها (نصرة البارى) "अर्थात उलमा–ए– मुहद्दिसीन की इन दोनों की सेहत पर सहमति है।"

इमाम अबुल फ़लाह फ़रमाते हैं: "तमाम फुक़हा ने सही बुख़ारी

की हर मुसनद हदीस को सही तस्लीम किया है:'' (نصــرة البــارى بحواله شذرات الذهب ملخصاً)

इसी तरह हाफ़िज़ अबु नसर संजरी रह0 ने फ़रमाया है कि " "اجمع اهل العلم والفقهاء وغيرهم ...... الخ" अर्थात विद्वान व फ़ुक़हा और दूसरे लोगों की सहीह बुख़ारी की तमाम हदीसों की सेहत पर सहमति है।'' (ملخصاً من نصرة البارى بحواله مقدمه ابن صلاح)

मशहूर हंफ़ी विद्वान ऐनी लिखते हैं: (إتفق علماء الشرق والغرب انه ليس بعد كتاب الله اصح من صحيح البخارى) (عمدة القارى) अर्थात मश्रिक़ व मग़रिब के तमाम उलमा की इस पर सहमति हैं कि कुरआन मजीद के बाद सही बुख़ारी से ज़्यादा सही कोई किताब नहीं।''

अहमद अली सहारनपुर लिखते हैं: " اتفق العلماء علىٰ ان اصح الكتب المصنفة صحيحاً البخارى ومسلم" (نصرة البارى) अर्थात उलमा की सहमति है कि तमाम किताबों में सब से ज़्यादा सही यह दो किताबें हैं सही बुख़ारी और सहीह मुस्लिम।''

अनवर शाह साहब देवबन्दी लिखते हैं: ''हाफ़िज़ इब्ने सलाह रह0 हाफ़िज़ इब्ने हजर रह0, इमाम इब्ने तैमिया रह0, शमसुल अईम्मा सरख़सी रह0 के नज़दीक सही बुख़ारी की तमाम हदीसें पूरी तरह ठीक हैं'' इस के बाद लिखते हैं: ان رأيهم هو رائي.''जो इन की राय है वही दर हक़ीक़त मेरी राय है।'' (فيض البارى ملخصاً)

शब्बीर अहमद उस्मानी फ़रमाते हैं: ان ماتفرد به البخارى ومسلم مندرج فى قبيل ما يقطع بصحته لتلقى الامة كل واحد من كتابهما بالقبول. अर्थात बुख़ारी व मुस्लिम की मुन्फ़रिद रिवायतें भी पूरी तरह ठीक हैं इस लिए कि उम्मत ने उन की हर हदीस को तस्लीम किया है। (فتح الملهم شرح صحيح مسلم)

शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 फरमाते है:

اما الصحيحان فقد اتفق المحدثون علىٰ ان جميع منا فيها من المتصل المرفوع صحيح بالقطع وانهما متواتران إلىٰ مصنفيهما وانه كل من يهون امرهما فهو مبتدع متبع غير سبيل المؤمنين وان شئت الحق الصراح فقسهما بكتاب ابن ابى شيبة وكتاب الطحاوى ومسند الخرارزمى تجد بينها وبينهما بعد المشرقين." (حجۃ اللہ البالغہ۔ جلد اول)

"अर्थात सही बुख़ारी व मुस्लिम में जितनी मरफूअ मुत्तसिल हदीसें हैं, मुहद्दिसीन की सहमति है कि वह सब पूरी तरह सही हैं और यह दोनों किताबें अपने लेखकों तक मुतवातिर हैं। जो व्यक्ति इन का अपमान करे वह बिदअती है और मोमिनीन की राह से उस की राह अलग है और अगर आप हक़ का स्पष्टीकरण चाहें तो लेखक इब्न अबी शैबा, किताबुत तहावी और मुसनद ख़्वारिज़मी (मुसनद इमाम अबु हनीफ़ा रह0 से सहीहैन का मुक़ाबला करें तो आप उन में और सहीहैन में बड़ा भरी फ़र्क़ पाऐंगे।

मतलब यह कि बे शुमार कथन हैं, कहां तक लिखूं, किसी ने भी सेहत के लिहाज़ से इन किताबों से मतभेद नहीं किया यहां तक कि उन के सम कालीन और उस्तादों ने उन की सेहत पर सहमति की। अब अगर कोई शक करता है तो सिवाए उस के और क्या लिखूं कि "न रहे बांस न बजे बांसरी, का चरितार्थ है न सही बुख़ारी होगी न फ़िक़ह पर आलोचना का मौक़ा मिलेगा। अगर सही बुख़ारी को आप तस्लीम नहीं करते तो ऐसी कोई किताब आप पेश फ़रमाइए, जिस पर उम्मत की सहमति हो जो सही बुख़ारी से उच्च हो। فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا وَلَنْ تَفْعَلُوْا......

जाहिल का आलिम से सवाल करना तक़्लीद नहीं

आप फ़रमाते हैं "जाहिल क्या करे, अगर वह आप से पूछेगा तो आप का मुक़ल्लिद होगा" मैं कहता हूं कि जाहिल अगर आप से पूछे तो क्या वह आप का मुक़ल्लिद हो जाएगा? इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का मुक़ल्लिद नहीं रहेगा? क्योंकि वह इतने बड़े इमाम की फ़िक़ह को क्या समझ सकता है वह तो आप ही के कहने पर अमल करे गा। अगर आप यह जवाब दें कि हम इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ही के क़ौल बताऐंगे, अतः हमारे बताने के बाद भी वह इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का मुक़ल्लिद कहलाएगा न कि हमारा। तो मैं कहूंगा कि मैं भी उस को अहादीस ही बताउंगा, अतः मेरे बताने के बावजूद वह मेरा मुक़ल्लिद न होगा बल्कि रसूलुल्लाह स0 का मानने वाला होगा।

सुनिए और बड़े ग़ौर से सुनिए। मैं बहैसियत आलिम के आप के उलमा की ख़िदमत में हाज़िर नहीं हुआ हूं। जाहिल या छात्र की हैसियत से ही आप के उलमा से पूछता हूं कि ख़ुदा के वास्ते यह जो तरीक़े आप ने अख़्तियार कर रखे हैं। उन के बारे में जो हदीस आप को मालूम है मुझे भी बता दो ताकि मैं भी उन पर अमल कर सकूं तो जवाब वह मिलता है जो आप को चौदह पन्नों में लिखवाया गया है।

मात्र वहम व गुमान से हदीस को नहीं छोड़ा जा सकता

यह भी आप ने खूब लिखा है कि जो हदीस इमाम बुख़ारी रह0 के नज़दीक सही हो, हो सकता है कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के नज़दीक वह ज़ईफ और ग़रीब हो, सुनिए! मात्र वहम व गुमान से

सत्यता को नहीं भुलाया जा सकता अगर वह ज़ईफ़ थी तो बावजूद तमाम दलीलों की मौजूदगी के उलमा–ए–अहनाफ़ ने उसको ज़ईफ़ क्यों न साबित किया और क्यों इस दौर तक सब उसको सही समझते रहे। अगर उस को सही भी तस्लीम कर लिया जाए कि समस्त हदीसें इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के नज़दीक ज़ईफ़ हैं तो इमाम साहब रह0 के इन कथनों पर कैसे अमल होगा "اتركوا قولی بخبر رسول الله صلى الله عليه وسلم" अर्थात रसूलुल्लाह स0 की हदीस के मुक़ाबले में मेरे कथन को छोड़ दो। (रौज़तुल उलमा) اذا صح الحديث فهو مذهبی. सही हदीस मेरा मज़हब है। हर सही हदीस के बारे में यह गुमान होगा कि शायद इमाम साहब रह0 के नज़दीक ज़ईफ़ हो। अतः हदीस रद्द करदी जायगी अर्थात मात्र गुमानों से सही को रद्द किया जाएगा।

सही बुख़ारी व मुस्लिम की सेहत पर इमामों की सहमति

फिर सुन लीजिए, बुख़ारी और मुस्लिम की हदीसें इस लिए सही नहीं कि इमाम बुख़ारी रह0 और इमाम मुस्लिम रह0 उन्हें सहीह समझते हैं बल्कि इस लिए सही हैं कि उन से पहले और उन के बाद के तमाम उलमा ने इन हदीसों को सही तस्लीम किया है, अल्लामा इब्ने खुलदून लिखते हैं।

اعتمد منها ما اجمعوا عليه.

अर्थात इमाम बुख़ारी रह0 ने सही बुखारी के लिए इन ही अहादीस को क़ाबिले भरोसा समझा, जिन की सेहत पर सहमति थी। फिर इमाम मुस्लिम रह0 के बारे में भी उन्होंने यही बात लिखी।

(मुक़द्दमा तारीख़ इब्ने खुलदून)

अर्थात इमाम बुख़ारी रह0 व इमाम मुस्लिम रह0 ने उन अहादीस को इन किताबों में जमा किया जिनकी सेहत पर उस वक़्त तक के तमाम उलमा की सहमति थी और उन उलमा में इमाम अबु हनीफ़ा भी शामिल हैं (बशर्ति कि आप उन्हें मुहद्दिस तस्लीम करें)

हंफ़ी फ़िक़्ह के बेशुमार मसाइल बे दलील हैं

हम तो नई नई बातें नहीं निकाल रहे। जो बात कहते हैं। दलील से कहते हैं, आप पूछ कर देख लीजिए, इन्शा अल्लाह आयत या हदीस पेश करेंगे, असल जवाब से इन्शा अल्लाह कभी मुंह नहीं मोड़ेंगे, नई नई बातें तो मुक़ल्लिदीन ने निकाली हैं। जैसे तक़लीद, यह बिदअत है न दौरे सहाबा रज़ि0 में थी न दौरे ताबअीन में (हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा) फिर मर्द व औरत की नमाज़ अलग अलग गढ़ी गई, नमाज़ में ज़बानी नीयत का इज़ाफ़ा किया गया, हलाला का मसला जारी किया गया आदि आदि।

यह मैं फिर कहता हूं कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 उन से पूरी तरह बरी हैं, मैं जो कहता हूं, उन के बारे में नहीं कहता, वह तो अहले हदीस थे और इस से भी ज़्यादा तारीफ़ के मुस्तहिक़ हैं जो आप ने तहरीर फ़रमाई है मैं तो मौजूदा मज़हब के बारे में बात करता हूं।

अहले हदीस शुरू इस्लाम से हैं

यह मैंने कब लिखा कि सिवाए मेरे कोई मुसलमान ही नहीं, अब तक जितने मुसलमान हुए वह सब बहुदव वादी थे, यह आरोप है मगर आप का यह विचार कि पहले दौर में कोई अहले हदीस था ही

नहीं और यह कि मैं अपने विचार का पहला आदमी हूं, हक़ीक़त पर आधारित नहीं, हक़ीक़त उसके विपरीत है इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का दृष्टिकोण 120 हि0 में क़ाइम हुआ (सीरतुन नोमान) बताइये 120 हि0 तक जो मुसलमान थे वह किस इमाम के मुक़ल्लिद थे? उस इमाम की इमामत किस ने निरस्त की? हज़रत इमाम अबु हनीफ़ा रह0 मुक़ल्लिद थे या ग़ैर मुक़ल्लिद? अगर मुक़ल्लिद थे तो मुक़ल्लिद की तक़्लीद कैसे? और अगर ग़ैर मुक़ल्लिद थे तो फिर वह हमारे अक़ीदा के हुए न कि आप के। इमाम अबु हनीफ़ा रह0 फ़रमाते हैं: .لاينبغى لمن لم يصرف دليلى ان يفتى بكلامى अर्थात किसी व्यक्ति के लिए यह मुनासिब नहीं कि वह मेरे कथन पर फ़तवा दे, जब तक उस को मेरी दलील न मालूम हो (عقد الجيد) बल्कि यहां तक फ़रमाते हैं: "حرام علىٰ من لم يعرف دليلى ان يفتى بكلامى." (मिशकाते मुहम्मदी बहवाला मीज़ाने शोरानी) अर्थात वह अपनी तक़्लीद से मना फ़रमाते हैं बल्कि बे दलील बात मानने को हराम कह रहे हैं। लीजिए जो हम कहते हैं वही इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ने फ़रमाया है बे शक जिस चीज़ को उन्होंने हराम कहा है हम भी उस को हराम समझते हैं लेकिन मुक़ल्लिदीन उनके हराम किए को जायज़ ही नहीं, वाजिब तक कह देते हैं।

इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के अलावा भी तमाम अइम्मा–ए–दीन तक़्लीद से मना करते रहे। जैसे इमाम अहमद बिन हंबल रह0 फ़रमाते हैं:

> لاتقلدنى ولا تقلدن مالكا ولا الشافعى ولا الاوزاعى ولا الثورى وخذ من حيث اخذوا (عقد الجيد)
>
> अर्थात हरगिज़ मेरी तक़्लीद न करना। न इमाम मालिक रह0 की, न इमाम शाफ़ई रह0 की, न इमाम

औज़ाई रह0 की, न इमाम सूरी रह0 की। बल्कि जहां
से उन्होंने अहकाम को लिया वहीं से तुम भी लेना।

हां तो 120 हि0 तक पूरी तरह सब ग़ैर मुक़ल्लिद थे बल्कि शाह वलिउल्लाह साहब रह0 के कथनानुसार चौथी सदी के पहले तक़्लीदे ख़ालिस पर लोग जमा नहीं हुए थे (हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा) तो मानो तीन सौ साल तक तक़्लीद शख़्सी का वजूद नहीं था। इल्ला माशा अल्लाह। चौथी सदी से तक़्लीद ने ज़ोर पकड़ना शुरु किया और लग भग एक हज़ार साल तक इस का ज़ोर रहा, लेकिन यह ज़माना भी अहले हदीस से ख़ाली न था। हर ज़माना में उलमा की एक बड़ी तादाद अहले हदीस थी। अल्लामा ज़हबी रह0 की "तज़किरतुल हुफ्फ़ाज़ पढ़िए, देखिए हर ज़माने में कितने उलमा–ए– अहले हदीस थे। अल्लामा ज़हबी बीसियों उलमा के नाम गिनांते चले जाते हैं। उन के हालात लिखते हैं और यह वे लोग हैं जो बड़े बड़े हाफ़िज़ थे न मालूम उनके अलावा और कितने होंगे जिनके नाम इमाम ज़हबी को मालूम न हुए हों और फिर कितने लोग होंगे जो उनके हलक़ा–ए–असर में होंगे। ग़रज़ यह कि अन गिनत लोग हर ज़माना में अहले हदीस थे, कुछ ऐसे उलमा भी थे जो मौक़ा की नज़ाकत महसूस करते हुए तक़्लीद का संबंध अपनी तरफ़ पसन्द करते थे, यद्यपि वह मुक़ल्लिद नहीं होते थे।

(देखें इमामुल हिन्द अबुल कलाम आज़ाद रह0 का तज़किरा)

कुछ तो इलाक़े के इलाक़े ऐसे थे जहां मुहद्दिसीन की बहुसंख्या थी जैसे अरब पर्यटक बश्शार मुक़द्दसी रह0 जो 275 हि0 में हिन्दुस्तान आया था। सिन्ध के हालात में लिखता है: "यहां के ज़िम्मी मूर्ति पूजक हैं और उलमा में अधिकांश अहले हदीस हैं।"

(तारीख़ सिन्ध भाग 2)

रूम, शाम, जज़ीरा और आज़र बाइजान आदि की **सीमाओं के** मुसलमान पांचवीं सदी में सब के सब अहले हदीस थे।

(उसूलुद्दीन पहला भाग लेखक अबु मंसूर रह0 **बग़दादी**)

तक़्लीद का सदियों बाद शुरु होना

छटी सदी में अफ्रीक़ा में अहले हदीस की हुकूमत थी (तारीख़ इस्लाम ज़हबी रह0) इस हुकूमत में सरकारी क़ानून था कि कोई किसी इमाम की तक़्लीद न करे (तारीख़ इब्ने ख़लकान) यहां भागे हुए लोगों ने तक़्लीदी मज़हब बड़ी तेज़ी से जारी किया, और यह क़ानून बनाया कि चारों मजाहिब की तक़लीद वाजिब है और उन से बग़ावत हराम है। (मुक़रेज़ी भाग 2)

सातवीं सदी में शाह ज़ाहिर ने चारों मज़ाहिब के मदरसे **और** क़ाज़ी अलग अलग कर दिए। (मुक़रेज़ी)

सातवीं सदी में शाह नासिर ने चार मुसल्ले क़ाइम कर दिए। (अलबदरुत्ता लेअ भाग 2)

शाह वलीउल्लाह साहब रह0 ने कितने मृद वाक्यों में **तक़्लीद** की प्रगति का नक़्शा खींचा है, फ़रमाते हैं:

انهم اطمأنوا بالتقليد ودب التقليد فی سدورهم دبيب النمل وهم لايشعرون فنشأت بعدهم قرون على التقليد الصرف لايميزون الحق من الباطل ولا اقو ذٰلک کليا مطردا فان لله طائفة من عباده لا يضرهم من حذلهم وهم حجة الله فی ارضه وإن قلوا ولم يأت قرن بعد ذٰلک الا وهو اکثر فتنة واوفر تقليداً واشد انتزاعاً للامانة من صدور الرجال حتى اطمأنوا بترک الخرض فی امر الدين وبأن يقولوا، أنا وجدنا اٰبآء نا علىٰ

امة وانا على آثارهم مقتدون. والى الله المستكى وهو المستعان وبه الثقة وعليه التكلان.

"अर्थात लोग तक़्लीद पर सन्तुष्ट होकर बैठ गए और तक़्लीद उन के दिलों में इस तरह दाख़िल हुई जैसे चींटी चलती है और उन्हें उन का पता भी नहीं हुआ। फिर उन के बाद ऐसे लोग पैदा हुए जो मात्र तक़लीद के परिसतार थे, असत्य से सत्य को अलग न कर सकते थे और यह बात मैं तमाम लोगों के बारे में नहीं कह रहा, क्योंकि अल्लाह के बन्दों में एक गिरोह अल्लाह वालों का भी होता है जिन को किसी का विरोध हानि नहीं पहुंचाता और वह अल्लाह की ज़मीन में अल्लाह की हुज्जत होते हैं। यद्यपि वह कम ही क्यों न हों, फिर इस के बाद जो ज़माना भी आया फ़ितना ज़्यादा होता गया, तक़्लीद की अधिकता होती चली गई और लोगों के कुलूब से अमानत सख़्ती के साथ निकलती चली गई यहां तक कि लोगों ने दीनी मामलों में विचार करना छोड़ दिया और इस आयत का चरितार्थ बन गए कि हम ने अपने बाप दादा को इस तरीक़े पर पाया और हम तो उन्हीं के नक़्शे क़दम पर चलते हैं। बस अल्लाह ही से शिकायत है और वही मददगार है, उसी पर विश्वास है और उसी पर भरोसा है।" (अल इंसाफ़)

शाह साहब की इस इबारत से जहां तक़्लीद की बुराई साबित हुई वहा यह भी साबित हुआ कि हर ज़माना में ऐसे लोग भी थे जो इस तक़्लीद से खिन्न थे, अर्थात यह कि अहले हदीस किसी इमाम

की तक़्लीद न करने वाले हमेशा से हैं और यह कोई नई जमाअत नहीं है अलबत्ता तक़्लीदी मज़ाहिब से निकले और पहले ज़माने में नहीं थे।

औलिया अल्लाह अहले हदीस ही होते हैं

आख़िर में एक बात और सुन लीजिए। मुहद्दिसीन और औलिया अल्लाह सब अहले हदीस थे। कोई मुक़ल्लिद नहीं था। शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब मुहद्दिस देहलवी रह0 फरमाते हैं। "उलमा–ए–मुहद्दिसीन बैक मज़हब अज़ मज़ाहिब मुजतहिद नमी बाशन्द। "अर्थात उलमा मुहद्दिसीन मुजतहिदीन के मज़ाहिब में से किसी एक मज़हब के पाबन्द नहीं होते। (फ़तावा अज़ीज़ी भाग 2)

इमाम शोरानी फ़रमाते हैं:

وماثم احد حق له قدم الولاية المحدية الا و يصير يأخذ احكام شرعة من حيث اخذها المجتهدون وينفک عنه التقليد لجميع العلماء الا لرسول الله صلى الله عليه وسلم.

(ميزان كبرىٰ)

अर्थात जिस व्यक्ति का क़दम विलायते मुहम्मदिया पर साबित हो गया, वह शरअी अहकाम को वहीं से लेता है जहां से मुजतहिद ने लिया था। वह तमाम उलमा की तक़्लीद से अलग हो जाता है। और सिवाए रसूल स0 के किसी की पैरवी नहीं करता।

यह हैं मेरे पूर्वज! अल्लाह तआला उन पर अपनी रहमत की बारिशें बरसाए।

आज कल समय बहुत कम मिलता है। अगर कभी समय मिल जाता है तो इन्कारे हदीस के फ़ितना–ए–जली के बारे में कुछ

लिख लेता हूं। दुआ कीजिए कि अल्लाह तआला कुछ फ़ुरसत प्रदान करे और अपने दीन की सेवा का सौभाग्य प्रदान फ़रमाए।

यह संक्षिप्त बातें हैं जो आप के सवालों के जवाब में लिख दी हैं वरना मुफ़स्सल जवाब के लिए तो एक किताब चाहिए।

रहे विस्तृत उत्तेजक वाक्य और ज़ाती हम्ले जो आप ने लिखे हैं अगर वह सही हैं तो अल्लाह तआला मुझे माफ़ फ़रमाए और अगर सही नहीं हैं तो अल्लाह तआला आप को माफ़ फ़रमाए। मेरी आदत चोट करने की नहीं है। फिर भी अगर अनजाने में कोई बात ऐसी लिखने में आ गई हो, जिस से व्यंग महसूस हो तो कृपा करके माफ़ फ़रमाऐं। मेरी नीयत इस में व्यंग की नहीं है बल्कि हक़ीक़त खोलने की नीयत से आप को सचेत करना उद्देश्य है कि आप की फ़लां इबारत स्वंय आप के लिए मुफ़ीद नहीं बल्कि इस से इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के अपमान का पहलू निकलता है यद्यपि आप की नीयत भी अपमान की नहीं होगी। मगर अनजाने में आप ऐसा कर गए हैं ख़ैर अल्लाह तआला हमारी ग़लतियों को माफ़ फ़रमाए। आमीन फ़क़त الحمد لله رب العلمين.

ख़ादिम मसऊद

अज़ चक लाला

ता0 22– अगस्त 1961 ई0

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिनजानिब नवाब मुहियुद्दीन खां
सहायक टीचर, चांडयू हाई स्कूल
सजावल सिन्ध ज़िला ठट्टा

मुकर्मी मसऊद साहब!

अस्सलाम आलैकुम! आप का पत्र मिला, मेरे पत्र का जवाब देने के लिए आप को काफ़ी मेहनत करनी पड़ी, अपने आप में आप ने बहुत बड़ा काम किया बल्कि तीर मारा, और शायद यह समझ रहे होंगे कि मैदान जीत लिया और हंफ़ी मज़हब (मसलक) ख़त्म हो गया आप ने जो लिखा है कि चौदह पृष्ठों का पत्र मुझ से लिखवाया गया, यह आप की ग़लत फ़हमी और ख़ुश फ़हमी है। भला उलमा–ए–किराम ऐसा बिना दलील पत्र कैसे लिख सकते हैं। आप ने इस तरह लिख कर उलमा–ए–किराम का अपमान किया है हक़ीक़त यह है कि वह पत्र किसी ने मुझ से नहीं लिखवाया, बल्कि मैंने इस तरह लिख कर उलमा–ए–किराम से ऐसी प्रार्थना की तो बजाए इस के कि जवाब जाहिलानां बाशद ख़मूशी" इन लोगों ने ख़ामोशी अख़्तियार फ़रमायी और चौदह पन्नों का पत्र मेरा अपना लिखा हुआ था, मेरी अपनी भावनाएं थी और सब निष्ठा पर आधारित था किसी बुजुर्ग का अपमान कदापि नहीं था। मैं एक जाहिल इन्सान हूं। आप की तरह अंग्रेज़ी और फिर उलूम अरबी से बिल्कुल अनभिज्ञ। मैंने जान बुझकर किसी बुजुर्ग, किसी मुहद्दिस का अपमान कदापि नहीं किया। ऐसे कोई शब्द आप को समझाने के

सिलसिले में भावनाओं की रौ में मुझ जाहिल के क़लम से निकल गए हों तो मैं उन पर शर्मिन्दा हूं। खुदा दिलों के सब भेद जानते हैं, मैं उन के हुज़ूर तौबा करता हूं। अगर आप मेरा वह पत्र प्रकाशित करेंगे तो क्या होगा मैं खंडन कर दूंगा। मैं किसी की तरह हट धर्मी से काम नहीं लेता। दर असल मुझे याद नहीं रहा था कि जिस को मैं पत्र लिख रहा हूं, वह शब्दों की गिरफ्त करके उन को उछालने के आदी हैं। चलिए मुझ जाहिल के पत्र का जवाब लिख कर आप ने दुनिया में नाम तो कमाया, ख्याति हासिल की, आप के साथियों में आप के ज्ञान और क़ाबलियत की धाक बैठ गई, और आप ने ख्याति हासिल करने के लिए खूब पत्र की नुमाईश की, यहां तक कि यह पुराना हो गया और आप ने दोबारा नक़्ल करवा कर भेजा और कराची में भी नुमाइश के लिए भेज रहे हैं, ख्याति हासिल करने के लिए इन्सान क्या क्या कोशिशें करता है। आप अपने हम नशीनों में मेरा वह पत्र भी दिखला दीजिए, जिस में मैंने अपनी जिहालत को स्वीकार कर लिया है। अब आगे सुनिए और ग़ौर से सुनिए। मैं आप को मुबारकबाद देता हूं कि आप बिदअतियों से तो बहर हाल अच्छे हैं। हम आप को इस्लाम से ख़ारिज नहीं समझते। अब रहा आप की आपत्ति तक़्लीद के बारे में तो ग़ौर से सुनिए। हंफ़ी मज़हब तिंकों का बना हुआ नहीं है जो आप के फूंक मारने से उड़ जाएगा या ख़त्म हो जाएगा और अगर ऐसा है तो फिर उस को ख़त्म ही हो जाना चाहिए। लेकिन ए

फूंकों से यह चराग़ बुझाया न जाएगा

इन्शा अल्लाह आप की फूंकों का इस पर कोई असर नहीं पड़ेगा अब आगे पत्र जो मैं आप को लिखूंगा वह मुझ जाहिल के हाथ का लिखा हुआ न होगा। बल्कि हमारे उलमा–ए–किराम की

तरफ़ से होगा और इस पत्र में पहला सबक़ आप को दिया जाएगा वह तक़्लीद के बारे में दलीलों से दिया जाएगा। आप दूसरे पत्र का इन्तिज़ार कीजिए। अगर पत्र में देरी हो जाए तो यह न समझए कि हमारे उलमा–ए–किराम लाजवाब हो गए हैं, इस के बारे में पहले ही अर्ज़ कर चुका हूं कि ع

फूंकों से यह चराग़ बुझाया न जाएगा

बल्कि देरी समय की कमीं की वजह से होगी, बाक़ी इन्शा अल्लाह आइन्दा अ़गर कोई बात बुरी लगी हो मैं उस के लिए माफ़ी चाहता हूं।

फ़क़त

ख़ादिम नवाब

नोटः हमारे उलमा–ए–किराम का इर्शाद है कि आप जो केवल स्वयं को अर्थात अपने मसलक को हक़ पर समझते हैं, मेहरबानी फ़रमाकर ज़रा सा कष्ट करें कि तक़्लीद करने वालों के आंकड़े निकाल कर रखें, जब तक हमारी तरफ़ से जवाब नहीं वसूल हो जाता। उस समय तक आप तक़्लीद करने वालों की (जिन को आप असत्य समझते हैं) गणना करलें। आज तक़्लीद लग भग एक हज़ार साल से चल रही है, न केवल हंफ़ी ही तक़्लीद करते हैं बल्कि शाफ़अी, मालिकी और हंबली भी तक़्लीद करते आए हैं और कर रहे है, हर एक के आंकड़े निकाल लीजिएगा, और यह भी नोट कीजिए कि आज दीन की ख़िदमत अल्लाह तआला किन से ले रहे हैं। मुक़ल्लिदीन से या ग़ैर मुक़ल्लिदीन से, दीनी मदारिस मुक़ल्ल्दीन के ज़्यादा हैं या ग़ैर मुक़ल्लिदीन के। तमाम दीनी कुतुब, तफ़सीरें आदि मुक़ल्लिदीन की ज़्यादा हैं या ग़ैर

मुक़ल्लिदीन की। आप के कथनानुसार अगर सारे मुक़ल्लिदीन असत्य पर हैं और शिर्क करते हैं और जहन्नमी हैं तो फिर अल्लाह तआला दीन की ख़िदमत उन से क्यों ले रहे हैं? और अगर आप उन को बहुदेव वादी, बिदअती और जहन्नमी नहीं समझते बल्कि सत्य पर समझते हैं तो फिर यह शोर व हंगामा क्यों फैला रहे हैं और उम्मत में बिखराव मुक़ल्लिदीन पैदा कर रहे हैं या ग़ैर मुक़ल्लिदीन? यह सब नोट निकाल कर रखिए। इंशा अल्लाह आप के काम आएगा। आप इस पत्र का जवाब सीधे मुझे दे सकते हैं।

नवाब

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब मुहीयुद्दिन खां साहब
(चक लाला 20– अक्टूबर 1961 ई0)

अधिसंख्या का दीन की सेवा करना हक़ पर होने की दलील नहीं

आप का पत्र मिला। समय न होने के कारण जवाब में देरी हुई। तक़्लीद के दलाईल का भी स्वागत करूंगा। मगर पहले उन सवालात का जवाब है जो मैं पहले किसी पत्र में लिख चुका हूं। पहले उन का जवाब दें। दूसरे यह कि तक़्लीद पर बहस करते समय मुस्तनद कुतुब के हवाले से तक़्लीद की परिभाषा भी लिखें और उन बातों का भी जवाब दें जो इस से विस्तार से लिखी गई हैं, तीसरे यह कि अगर तक़्लीद उन चार इमामों की ही लाज़मी है तो बस उसी का सुबूत दें, दूसरी बातों में असल मसअला को उलझा कर बात न बढ़ाएं। इस सिलसिले में आप ने मुक़ल्लिदीन के आंकड़े, उन के मदारिस व दीनी ख़िदमात की तरफ़ ध्यान आकृष्ट करने की जो दावत दी है वह मेरी जानकारी में है। मैं अधिसंख्यक से प्रभावित नहीं होता ''हक़ बहु संख्या के साथ होता है'' यह कोई उसूल नहीं है, अल्लाह के शुक्र गुज़ार बन्दे थोड़े ही होते हैं। "وقليل من عبادی الشكور" (القرآن) हक़ का मानने वाला अगर एक भी हो तो वही जमाअत है ख़िदमाते दीन में क़ादियानी भी कुछ पीछे नहीं,

तमाम दुनिया में तथा कथित इस्लाम की आवाज़ पहुंचा रहे हैं। और जगह जगह उन के तबलीग़ी सेन्टर हैं, रसूलुल्लाह स0 पहले ही भविष्य वाणी गए हैं कि इस दीन की मदद गुनाहगार आदमी से भी अल्लाह तआला ले लेता है, (सहीह बुख़ारी) आप के पत्र से ऐसा मालूम होता है कि हक़ की तलाश उद्देश्य नहीं बल्कि किसी समय की दुशमनी है जो इस तरह सामने आ रही है। ख़ैर आप की मर्ज़ी है जो चाहें लिखें। मुझे सब कुछ स्वीकार है। अल्लाह करे आप हिदायत कुबूल कर लें। والسلام على من اتبع الهدى.

मसलक वही सहीह है जो बुज़ुर्गों का था। उस में नए नए नज़रयात की मिलावट सख़्त मना है। इस दौर में हर व्यक्ति आज़ादी का परवाना बना हुआ है। अतः मज़हबी पाबन्दियों को भी अपने लिए क़ैद समझता है। अपनी इच्छाओं पर चलने की यह भी एक राह है। मेरे निकट यह सोच इबलीस का रास्ता है। नफ़्स की स्वच्छता बड़ी ज़रूरी चीज़ है। सूफीवाद का गढ़ा हुआ नाम इस का विकल्प समझा जाता है लेकिन मौजूदा तसव्वुफ़ सुन्नत के ख़िलाफ़ होने की वजह से घृणित है। नफ़्स की स्वच्छता का तरीक़ा वही सही है जो सुन्नत के अनुसार हो। बैअत की मौजूदा क़िस्म का मैं मुन्किर हूं। ज़िक्र बहुत बड़ी चीज़ है। बशर्ते कि सुन्नत के मुताबिक हो। जैसे मौजूदा ज़माना में जो मजालिसे ज़िक्र आयोजित होती हैं और एक ख़ास तरीक़े से ज़िक्र किया जाता है, यह ख़िलाफ़े सुन्नत है। मैं तो सुन्नत का पाबन्द हूं और हर उस चीज़ का विरोधी जो दीन के नाम पर की जाती हो लेकिन सुन्नत के विरुद्ध हो। अपमान और अनादर मेरा तरीक़ा नहीं। क़ुरआन मजीद तो बहुत बड़ी चीज़ है, मैं तो इस तरह की हरकत हदीस की किताब के लिए भी पसन्द नहीं

करता।

फ़क़त

ख़ादिम मसऊद

नोटः कुछ सवालात नवाब साहब ने अलग पर्चा पर लिखे थे जो इस किताब में शामिल हैं, यह सवालात कुरआन मजीद की तरफ पैर या पीठ करना या उस से ऊपर बैठना, जो सूफ़ीवाद आदि के बारे में थे। (ऊपर इन्हीं सवालात के जवाबात हैं)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब मुहियुद्दीन साहब

इससे पहले एक पत्र भेजा था। नज़र से गुज़रा होगा। लेकिन जवाब से अभी तक महरूम हूं। मालूम नहीं क्या बात है? कैसे मिज़ाज हैं। आप नाराज़ तो नहीं हैं उम्मीद है कि जल्द ख़ैरियत से सूचित फ़रमाऐंगे। मैं अभी इस बीच कोई पत्र नहीं भेज सका। समय भी बहुत कम मिलता है। आज समय मिला है तो यह पत्र लिख रहा हूं। मैं आज से 45 दिन की छुट्टी पर हूं। छुट्टी मात्र आराम करने के लिए ली है और इन दिनों मैं यहां नहीं रहूंगा।

अक़ीदों की पुख़्तगी उच्च गुण है बशर्तेकि हक़ की राह में रोक न हो

मुझे तो आप से कोई व्यक्तिगत मलाल नहीं है। मालूम नहीं आप का क्या हाल है। मैं तो आप की इस्लाह का दिल से इच्छुक हूं और आपकी पुख़्तगी को भी अच्छा समझता हूं, यह पुख़्तगी न हो तो आदमी हर किसी के बहकावे में आ सकता है। इस ज़माने में तो हर तरफ से ईमान पर डाके डाले जा रहे हैं। यह पुख़्तगी ही इन फ़ितनों से बचने का सबब बन सकती है। यह गुण तो मतलूब है कि जो कुछ माना जाए, तहक़ीक़ व उसके के बाद माना जाए। अल्लाह तआला आप को शोध की भावना के बाद इत्मीनान प्रदान फ़रमाए।

आमीन, मगर यह पुख़्तगी तहक़ीक़ की राह में रोक पैदा करे तो फिर बेशक यह कोई अच्छी चीज़ नहीं है और मुझे आशा है कि यह बात आप में नहीं है और आप जैसे आदमी में होनी भी नहीं चाहिए। अगर कोई ग़लती हो गई हो तो माफ़ फ़रमाएं।

फ़क़त

ख़ादिम मसऊद

9– जनवरी 1962 ई0

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

मोहतरम जनाब मसऊद साहब!

अस्सलामु आलैकुम

आज़ 15 जनवरी 1962 ई0 आप का कार्ड मिला, कुछ कारणों से मैं पहले पत्र का जवाब न दे सका, माफ़ फ़रमाइए, बहुत इरादा किया कि आप को पत्र लिखूं, मगर न लिख सका। मैं अब सजावल में नहीं हूं। मेरा तबादला सजावल से गुलामुल्लाह हो गया है। इन्शा अल्लाह मैं अपना पता पत्र के आख़िर में लिखा करूंगा। आप ने जो कुछ लिखा है, मैंने उस को ध्यान से पढ़ा और आप की हर बात को मैं दिलचस्मी से पढ़ता हूं। मैंने कुछ समय पहले सजावल से आप को लिखा था कि हमारे उलमा–ए–किराम तक़्लीद के बारे में दलीलों भरा जवाब लिखेंगे। लेकिन मुझे अफ़सोस है कि जिन मोहतरम ने वह पत्र लिखवाया था वह अपने वायदे पर पूरे न उतर सके। जब मैंने जवाब का तक़ाज़ा किया तो वह टाल मटोल करने लगे, उन्होंने मुझे उपदेश और नसीहतों द्वारा समझाने की कोशिश की, लेकिन उन की दलीलें मुझे इत्मीनान न दिला सकीं। फिर उन्होंने मेरे लिए यह फ़तवा दिया कि नवाब साहब! तुम्हारे लिए सिवाए तक़्लीद के चारा नहीं है क्योंकि तुम उलूमे अरबिया से अनभिज्ञ हो और बिल्कुल ही कोरे हो, अंग्रेज़ी पढ़ कर तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है। आदि आदि पन्द्रह साल का पाठय आप को यूं बातों बातों में किस तरह समझाया जा सकता है, और आप की उम्र इस योग्य नहीं है कि आप पन्द्रह साल का पाठय पूरा कर

सकें। अतः तक़लीद के सिवाए चारा नहीं है। ख़ैर तक़्लीद के बारे में जहां तक मैंने ग़ौर किया है, तो इस नतीजा पर पहुंचा हूं कि बुनियादी मसलों की हद तक तो कोई फ़र्क़ नहीं है। हर एक के पास तर्क हैं, केवल श्रेष्ठता का सवाल आता है। जैसे रफ़अ यदैन करने वाला श्रेष्ठ है। लेकिन न करने वाला गुनहगार नहीं क्योंकि न करना भी एक सहाबी रज़ि0 का अमल है जिस को अख़्तियार किया गया है। इमाम के पीछे सूरा–ए–फ़ातिहा न पढ़ने के बारे में भी तर्क हैं। इमाम अहमद रह0 भी उन तर्कों के क़ायल हैं और इस तरह दूसरे मसाइल अपनी अपनी जगह रखते हैं। मैं इस तहक़ीक़ में इस बात का क़ायल हो गया हूं कि तक़्लीद लाज़िम, व वाजिब नहीं है। क़ुरआन और अहादीस से बढ़ कर और क्या नेमत हो सकती है। इसी पर हमारा ईमान है और अल्लाह करे कि उसी पर हमारा ख़ात्मा हो। लेकिन कुछ बातें अभी मेरे दिल में वसवसा के तौर पर आती हैं। वह यह कि वहाबी कौन सा सम्प्रदाय है? उस की असलियत क्या है? ये लोग कौन हैं? इन के अक़ीदे क्या हैं? नजदी कौन सा सम्प्रदाय है? इस की असलियत क्या है? ये लोग कौन हैं? उन के अक़ीदे क्या हैं? क्या वही लानती सम्प्रदाय तो नहीं है, जिस का ज़िक्र हदीस शरीफ़ में आया है? क्या हनफ़ियों का तरीक़ा–ए–नमाज़ ग़लत है? लेकिन एक हदीस में मैंने पढ़ा है शायद आप को याद हो कि हुज़ूर सल्ल0 ने एक व्यक्ति को नमाज़ सिखाई तो उस में रफ़अ़ यदैन का तो कहीं ज़िक्र नहीं, वह तो हंफ़ियों के तरीक़ा पर है। क्या वह हदीस ज़ईफ़ है? क्या हंफ़ियों के पीछे नमाज़ सही नहीं? अगर अहले हदीस पेश इमाम बन कर हंफ़ियों के तरीक़ा पर नमाज़ पढ़ाए तो क्या यह नाजायज़ है? और है तो इन सब के तर्क क्या हैं? क्या मेरे जैसा एक व्यक्ति हदीसों की छः विश्वसनीय किताबें पढ़ कर स्वयं उन पर अमल कर सकता है?

या फिर भी उस को कुछ पूछने या मालूम करने की ज़रूरत बाक़ी रहती है। कृपया इन बातों पर रोशनी डालिए और अच्छी तरह मुझे समझाइए ताकि मेरी सन्तुष्टि हो जाए। मैं तक़्लीद का क़ायल तो नहीं रहा, लेकिन इन बातों के बारे में सन्तुष्टि का इच्छुक हूं, क्योंकि उन मौलाना के अनुसार मैं अरबी उलूम से बिल्कुल अनभिज्ञ हूं अर्थात जाहिल हूं। और उन के अनुसार मेरे जैसे जाहिल के लिए तक़्लीद के बग़ैर चारा नहीं। क्योंकि मुझ में तर्कों की छान बीन की समझ नहीं है। मसऊद साहब मेरा तो दिमाग़ काम नहीं करता जब सोचता हूं कि दीन भी कितना मुश्किल हो गया है कि समझ में नहीं आ रहा है हर सम्प्रदाय अलग अलग रास्ते अख़्तियार किए हुए है और हर एक के पास तर्क हैं। हदीसें देखते हैं तो उन में भी सहीह, हसन, ग़रीब, ज़ईफ़ और मौज़ू आदि आदि हदीसें मिलती हैं। जिन का जांचना उन मौलाना के, मेरे जैसे जाहिल का काम नहीं। और रावियों को देखते हैं तो वहां भी सिक़ा और ग़ैर सिक़ा का सवाल है। मैं तो हैरान होकर रह गया हूं कि क्या किया जाए। सही रास्ता क्या हो सकता है? कभी कभी तो मेरी अक़्ल काम नहीं करती। और मैं यह समझने लगता हूं कि यह तो एक बड़ा ज़बरदस्त उलझाव है और इस को सुलझाना मेरे बस का काम नहीं है। यह है सारी हक़ीक़त जो मैंने आप को लिखी है। अब आप मेहरबानी फरमा कर मुझे इत्मीनान बख़्श जवाब दें। जिस से मुझे पक्का विश्वास हो जाए। हंफ़ी उलमा तो मेरी पूछताछ पर बिगड़ जाते हैं और मुझे अंग्रेज़ी दां और जाहिल का लक़ब देते हैं जाहिल तो वाक़ई मैं हूं ही वरना खोज की ज़रूरत क्यों पड़ती। आप मेरे ख़त को ध्यान से पढ़िएगा और मुझे जल्द जवाब दीजिएगा ताकि मैं इस उधेड़ बुन में निकल सकूं। बाक़ी ख़ैरियत है।

नवाब मुहियुद्दीन खां

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत मख़दूमी मुकर्रमी जनाब नवाब मुहियुद्दीन साहब!

क्या तमाम मुक़ल्लिदीन अरबी ज्ञान से कोरे हैं?

(1) तक़्लीद के सिलसिले में आप की और उन मौलवी साहब की बातचीत का हाल मालूम हुआ! उन का यह जवाब कि "नवाब साहब! तुम्हारे लिए सिवाय तक़्लीद के चारा नहीं है क्योंकि तुम अरबी ज्ञान से अनभिज्ञ हो और बिल्कुल ही कोरे हो। बहुत ही अजीब है। इस का मतलब या तो यह है कि वे भी अरबी ज्ञान से कोरे हैं, और इसी वजह से तक़्लीद करते हैं, या फिर वह उलूमे अरबिया से थोड़ा बहुत परिचित हैं, अतः तक़्लीद नहीं करते। लेकिन हक़ीक़त यह है, जो उन्हें भी तस्लीम होगी कि वह अरबी ज्ञान से परिचित होने के बावजूद तक़्लीद करते हैं और उन के ख़्याल में इस के बिना चारा नहीं। नतीजा यह निकला कि आप अरबी ज्ञान से कोरे हैं अतः तक़्लीद ज़रूरी है और वह अरबी ज्ञान से परिचित लेकिन तक़्लीद फिर भी ज़रूरी। तो फिर यह कहना कि आप पन्द्रह साल का पाठय पूरा कर सकें यह मुममिन नहीं। अतः तक़्लीद के सिवा चारा नहीं। अजीब बात है।

सहाबा किराम रज़ि0 हदीस मिलने पर अपने फ़तवे से रुजू कर लेते थे

(2) यह सहीह है कि सहाबा किराम रज़ि0 में अकीदों का

मतभेद नहीं था। हां ज्ञान की कमी की वजह से कुछ मसाईल में कुछ सहाबियों से चूक हो जाती थी। लेकिन जूं ही उन को हदीस मिल जाती वह अपने फ़तवे से रुजू कर लिया करते थे और इस क़िस्म की मिसालें हदीस कि किताबों में पाई जाती हैं। आप जब शोध के मैदान में क़दम रखेंगे तो आप को स्वयं पता हो जाएगा। उस समय मिसालें देना ज़रूरी नहीं, यह भी हुआ है कि कुछ सहाबी रज़ि0 अपने फतवे पर क़ायम रहे और उन को अपने फ़तवे के ख़िलाफ़ हदीस का पता न हो सका। ऐसा मतभेद तो हो जाया करता है और उस पर कोई पकड़ भी नहीं, हां गिरफ़्त योग्य वह मतभेद है कि हदीस पहुंच जाने के बाद अपने किसी बुज़ुर्ग के कथन पर अड़ जाए, हमारे पुराने ज़माने के बुज़ुर्गों में यह बात न थी। वे लोग तक़्लीदी बन्धनों से आज़ाद थे, अपने उस्तादों तक के फ़तवों के ख़िलाफ़ फ़तवे दे दिया करते थे। رحمهم الله تعالى.

रफ़अ यदैन छोड़ना सुन्नत नहीं है

(3) कर्मों में अफ़ज़लियत का सवाल उस समय पैदा होता है जहां किसी काम के करने के रसूलुल्लाह स0 से दो तरीक़े मंकूल हों। अगर दोनों तरीक़े साबित हों और अहादीस से एक को श्रेष्ठता दी जा सकती हो तो फिर बे शक एक अमल श्रेष्ठ होगा और दूसरा कम। लेकिन जहां दो तरीक़े ही साबित न हों केवल एक ही तरीक़ा हो तो फिर एक ही तरीक़ा पर अमल करना होगा उस का तर्क अगर जायज़ हो तो बात और है लेकिन किसी हालत में भी तर्के अमल न सुन्नत होगा और न उचित। क्योंकि काम को छोड़ना कोई फेल ही नहीं, अतः फेल जहां सुन्नत होगा, वहां उसका छोड़ना सुन्नत न होगा। शाह इसमाईल शहीद रह0 ने अपनी किताब "तनवीरुल

ऐनैन'' में रफ़अ यदैन के सिलसिले में यही बात लिखी है। वे कहते हैं कि तर्के रफ़अ कोई अमल ही नहीं, अतः सुन्नत भी नहीं। रफ़अ यदैन का न करना केवल हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 से किसी हद तक साबित होता है, यद्यपि इमामों ने इस के सुबूत में भी शक व्यक्त किया है। इमाम तिर्मिज़ी रह0 ने अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह0 के कथन से साबित किया है कि यह हदीस साबित नहीं। इमाम अबु दाऊद रह0 लिखते: هٰذا حديث مختصر من حديث طويل وليس هو بصحيح على اللفظ علىٰ هذا المعنى. अर्थात यह हदीस इन शब्दों और मायनों पर सही नहीं। इमाम बुख़ारी रह0 ने भी इस के मूल को ग़ैर महफ़ूज़ बताया है फिर इस हदीस के संदिग्ध होने की एक और वजह भी है। यह हदीस कूफ़ा ही में प्रकाशित हुई थी। इस के रावी कूफ़ी, लेकिन हैरत का मक़ाम है कि इमाम मुहम्मद रह0 को यह हदीस न मिली, और न इस का ज़िक्र उन्होंने अपनी किताबों में किया हालांकि उन्हें इस की सब से ज़्यादा ज़रूरत थी और यह इस सिलसिले में सब से बेहतर हदीस थी। लेकिन उस को छोड़ कर उन्होंने कुछ आसार ज़िक्र कर दिए और अपने उस्ताद इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के मज़हब की बुनियाद इन्हीं आसार पर रखी। इस समय विस्तार में जाने का समय नहीं इस लिए मैं यह बात कहता हूं कि मान लें अगर यह हदीस सही भी हो तो इस में अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की अपनी राय है, सहमत सहाबा रज़ि0 की रिवायतें इन के विरुद्ध हैं और भी कई अपनी राय उन की मरवी हैं जिन को उम्मत ने कुबूल नहीं किया। जैसे वह रुकू में घुटनों पर हाथ नहीं रखते थे बल्कि रानों के बीच रखते थे और उसी की शिक्षा देते थे।

(सहीह मुस्लिम)

अतः जिस तरह उन व्यक्तिगत चीज़ों को अहादीस और

सहमत सहाबी रज़ि0 का फ़र्क़ है जायज़ नाजायज़ का फ़र्क़ है, हलाल व हराम का फ़र्क़ है, जैसे यही सूरा–ए–फ़ातिहा का मसला लीजिए जिस का आप ने ज़िक्र फ़रमाया है। इमाम शाफ़ई रह0 के नज़दीक मुक़्तदी को सूरह फ़ातिहा पढ़ना फ़र्ज है। हंफ़ी मज़हब में मना है। इमाम मुहम्मद रह0 ने तो यहां तक नक़्ल किया है कि अगर मुक़्तदी पढ़ेगा तो उस की नमाज़ न होगी, फ़िलहाल एक मिसाल काफ़ी है विस्तार से ज़रूरत के समय फिर कभी पेश करूंगा।

तक़्लीद गुमराही की जड़ है

5– तक़्लीद न केवल यह कि वाजिब नहीं बल्कि गुमराही की जड़ है, अल्लाह तआला ने बाप दादा और उलमा दोनों की तक़्लीद की निंदा कुरआन मजीद में की है। बाप दाद के बारे में तो मुझे कुछ लिखने की ज़रूरत नहीं है उलमा की तक़्लीद के बारे में एक आयत पेश करता हूं। اتخذوا احبارهم ورهبانهم اربابا من دون الله والمسيح ابن مريم وما امروا الا ليعبدوا الٰها واحدا. अर्थात "किताब वालों ने अपने उलमा और शैखों को अल्लाह के अलावा अपना पालनहार बना रखा है। और मसीह इब्ने मरयम अलैहि0 को भी, यद्यपि उन्होंने यह हुक्म दिया गया था कि एक अल्लाह की उपासना करें" (सूरा तौबा) इस आयत की टीका में जो हदीस है, कृपया इस का अध्ययन करें जिस से यह साबित होगा कि वह तक़्लीद करते थे इस लिए उलमा उन के पालनहार हुए इस आयत की रू से तक़्लीद का दान्डा शिर्क बहुदेव वाद से जा मिलता है।

वहाबी कोई सम्प्रदाय नहीं

6– वहाबी कोई सम्प्रदाय नहीं है। बिदअतियों के निकट हर

वह व्यक्ति वहाबी है जो इन प्रचलित बिदअतों के ख़िलाफ़ ज़बान खोले। ये लोग वहाबियों का पेशवा इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नजदी रह0 को बताते हैं और उन की तरफ तरह तरह के ग़लत और मकरूह मसाईल मंसूब करते हैं इमाम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब रह0 मुक़ल्लिद थे उन के मानने वाले हंबली हैं। यह वह सम्प्रदाय नहीं जिस का ज़िक्र अहादीस में है, वह तो ख़ारजी सम्प्रदाय है जिस से हज़रत अली रज़ि0 ने जिहाद किया, और उन का क़त्ले आम किया यही हदीसें पढ़ कर उन को क़त्ल कराया और फिर जो निशानी हदीस में बताई गई थी वह उन में पाई गई अर्थात, उन में एक मर्द था जिस का एक बाज़ू छाती जैसा था।

यह कोई उसूल नहीं

7– हंफ़ियों का नमाज़ का तरीक़ा बेशक ग़लत है लेकिन वह हदीस जिसका ज़िक्र आप सल्ल0 ने किया है सही है इस हदीस में बहुत सी बातों का ज़िक्र नहीं है और इस से उनका न होना लाज़िम नहीं आता। कोई एक हदीस ऐसी नहीं जिस से पूरा नमाज़ का तरीक़ा मालूम हो सके सहाबा रज़ि0 अंशों को अलग अलग बयान करते थे। अबु हुमैद साअ़दी रज़ि0 की एक बहुत ही लम्बी हदीस है लेकिन पूरा तरीक़ा उस में भी नहीं। जिस हदीस की तरफ आप ने इशारा फ़रमाया है उस में तो शुरु नमाज़ का भी रफअ यदैन नहीं है, इस में बड़े बड़े काम या उन कामों का उल्लेख है जिन में वह व्यक्ति ग़लती कर रहा था।

8– क्योंकि हंफियों का तरीक़े नमाज़ ग़लत है और इस दर्जा से भी कि तक़लीद में शिर्क का हिस्सा है उन के पीछे नमाज़ पढ़ी जाए। सवाल आप का सख़्त है लेकिन हक़ छुपाना इससे भी सख़्त है।

9– अहले हदीस अगर इमाम बन कर हंफियों की सी नामज़ पढ़ाए तो यह ज़ईफ़ ईमान की दलील है और अगर कोई सांसारिक हित मद्दे नज़र है तो फिर दीन बेच कर दुनिया ख़रीदने की मिसाल है क़ुरआन मजीद में इस काम की निंदा में अनेक आयतें हैं।

उस्तादी और शार्गिदी तक़्लीद नहीं

10– हदीस की किताबों पढ़ कर हर व्यक्ति स्वयं उन पर अमल कर सकता है, मालूम करने की ज़रूरत केवल इस हद तक बाक़ी रह सकती है जैसे एक शार्गिद को अपने उस्ताद से होती है। जैसे आप ने स्कूल में शिक्षा पाई। उस्तादों ने आप को पढ़ाया। लेकिन उन में से किसी उस्ताद की राय को मानना आप के ज़िमे वाजिब नहीं और न आप करते हैं, तक़्लीद के इन्कार से पढ़ने पढ़ाने का इन्कार नहीं होता।

तक़्लीद का कारण हीन भावना

11– विनम्रता इस हद तक लाभकारी नहीं कि आप की राह में रुकावट पैदा करे। दूसरे लोग अगर आप की हिम्मत कम करने की कोशिश करें तो आप उस की परवाह न करें। कोशिश और दृढ़ संकल्प से बहुत कुछ हासिल हो सकता है। दीन की तहक़ीक़ कोई मुश्किल काम नहीं है एक ज़माना में जो हालत आप की अब है मेरी भी यही हालत थी, लोगों ने हिम्मत कम करने की बहुत कोशिश की, लेकिन अल्लाह का शुक्र है कि उस ने मदद फ़रमाई। बेशक हदीसों में सही, हसन, ज़ईफ़ मौजू सब कुछ हैं, रावियों की गवाही और ग़ैर गवाही का सवाल है। लेकिन यह भी एक कला है और इस फ़न में आप शोध के लिए क़दम रखें तो बहुत कुछ हासिल हो जाएगा। इस

कला में हर चीज़ तर्कपूर्ण है, सन्तोषजनक है, बे दलील चीज़ महत्वपूर्ण नहीं है। थोड़ी बहुत अरबी भी आप को आ गई तो आप का काम निकल जाएगा, आप हिम्मत हार कर न बैठ जाएें कि अरबी में महारत कैसे होगी, उलमा–ए– हिन्द में अधिकांश ऐसे होते हैं जिन को पूर्ण महारत नहीं होती लेकिन बावजूद इस के वह सब कुछ करते हैं। जाहिल से ही आलिम बना करते हैं। आलिम पैदा नहीं हुआ करते अगर मान लें आप जाहिल हैं तो क्या, अब आप इतने ना उम्मीद हो चुके हैं कि आलिम बन ही नहीं सकते। हिम्मत से काम लीजिए, कोशिश कीजिए, आगे क़दम बढ़ाइए, कामयाबी फिर आप के क़दम चूमेगी। इन्शा अल्लाह तआला। अल्लाह तआला का वादा है। والذين جاهدوا فينا لنهدينهم سبلنا. जो लोग हमारे रास्ते में कोशिश करते हैं, हम उनको अपने रास्ते बता दिया करते हैं। وجاهدوا فى الله حق جهاده. अल्लाह के रास्ते में कोशिश करो जैसा कि कोशिश करने का हक़ है।

फ़क़त

ख़ादिम मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब **नवाब**

बख़िदमत शरीफ़ मुहतरम जनाब मसऊद साहब

अस्सलामु आलैकुम

तक़्लीद के बारे में आप ने जो कुछ लिखा है वह बेशक सही और ठीक है आप की मुलाक़ात से मुझे हक़क़ीत में बड़ा फ़ायदा पहुंचा। आप से पहली मुलाकात के समय तो मेरी यह हालत थी कि मैं तक़्लीद आदि के झगड़ों से परिचित न था और न ही ज़िन्दगी में इन चारों मज़हबों के बारे में कुछ सोचा था। जब आप के पास से सजावल लौटा तो मैंने किताबों का अध्ययन शुरु किया और फिर विद्वानों से मिल कर मालूमात हासिल करना शुरु की। और आप से पत्र–व्यवहार का सिलसिला भी जारी था। फिर हंफ़ियों के बड़े बड़े आलिमों से मिला, मगर किसी ने भी कोई सन्तोषजनक जवाब नहीं दिया, और अभी तक तहक़ीक़ का सिलसिला जारी है लेकिन उन उलमा से बहस व मुबाहिसा के बाद इस नतीजा पर पहुंचा कि चूंकि ये लोग बचपन से अर्थात जैसे ही मदरसों में दाख़िल होते हैं फ़िक़ह हंफ़ी पढ़ना शुरु कर देते हैं और उन के, उस्ताद इनके दिमाग़ों में हंफ़ी फ़िक़ह ठूंस देते हैं और यह उसी फ़िक़ह में उलझ कर रह जाते हैं। बस यह चक्कर एक ज़माना से चला आ रहा है, ये मेरी अपनी राय है शायद और कोई दूसरी वजह हो जिस के लिए यह लोग हंफ़ियत पर अड़े हुए हैं। मतलब यह कि अल्लाह तआला का लाख लाख शुक्र व एहसान है कि उन्होंने आप के ज़रिए से मेरी

रहबरी फ़रमाई और दीन की समझ प्रदान फ़रमाई। आगे भी वही राह खोलने वाले और रास्ते दिखाने वाले हैं। जो बातें मैंने आप से मालूम की थीं आप ने इन का बेहतरीन (सतर्क) जवाब प्रदान फ़रमाया। लेकिन अभी दो चीज़ें और उलझन की हैं। वह यह कि अब तक मैंने जितनी नमाज़ें पढ़ीं क्या वे सब बेकार हो गयीं और मैं अपने मुरशिद (शैख़) का बतलाया हुआ ज़िक्र करता हूं, क्या वह भी ग़लत है अगर ग़लत है तो फिर किस तरह ज़िक्र किया जाए और अब नमाज़ के बारे में क्या किया जाए। मस्जिद मेरे घर के सामने है। समझिए मस्जिद के सेहन में मेरा घर है तो क्या मैं अब नमाज़ घर पर शुरु कर दूं। जुमा आदि सब घर पर पढ़ूं, तरावीह भी घर पर पढ़ूं। ऐसी सूरत में तो जुमा और नमाज़ बा जमाअत के सवाब से तो मैं महरूम हो जाता हूं। इस पर मेहरबानी फरमाकर रोशनी ड़ालिए।

2- एक चीज़ और दिल में खटकती है वह यह कि बड़े बड़े चोटी के मशहूर उलमा हंफ़ी आख़िर क्यों हंफ़ियत पर अड़े रहे, क्या उन को अज़ाबे जहन्नम का ख़ौफ़ नहीं है। यह अज़ाब व सवाब को जानते हुए क्यों हंफ़ी बने बैठे हैं, यह क्या भेद है? (इन्शा अल्लाह आइन्दा विस्तार से पत्र लिखूंगा)

फ़क़त

ख़ादिम नावाब

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब मुहियुद्दीन ख़ान

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब

अस्सलाम आलैकुम

कल मैंने एक पत्र आप की सेवा में भेजा शायद मिल गया होगा। कल जिस समय आप का पत्र मिला, मैंने उसी रात जवाब लिख कर सुबूह को डाक के हवाले कर दिया। जिस समय आप का पत्र मिला वह समय कुछ अजीब था। अर्थात मैं ज़ेहनी परेशानी का शिकार था, जैसे ही आप का पत्र पढ़ा, ऐसा मालूम हुआ मानो मेरे सर से यकायक बोझ हल्का हो गया। यही वजह थी की मैंने तुरन्त जवाब लिखना शुरू किया लेकिन दिल सन्तुष्ट नहीं हुआ, मैं बहुत कुछ लिखना चाहता था। लेकिन न लिख सका आप के और मेरे बीच तक़लीद के बारे में पत्र–व्यवहार जारी है और बहुत सारी बातें मेरी समझ में आती जा रही हैं। मैं आप की मुलाक़ात को भी अल्लाह तआला की एक नेमत समझता हूं। यह आप ही हैं जिन की वजह से तहक़ीक़ का सिलसिला शुरु हुआ, यूं समझए कि मुझ पर हक़ीक़त प्रकट हुई और जैसे जैसे हक़ीक़त मुझ पर प्रकट होती गयी मुझे बड़ा आनन्द आता गया। और वह सारी किताबें जो हंफ़ी उलमा की लिखी हुई मैंने जमा की थीं मेरी नज़र में महत्वहीन होकर रह गई और मुझ में क़ुरआन और अहादीस के अध्ययन का शौक़ पैदा होता गया। मैंने हंफ़ी उलमा से बहस व मुबाहेसा किए लेकिन हर एक का जवाब या बहस का नतीजा यही निकला कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की बात समझने के लिए अरबी ज्ञान से

अवगत होना ज़रूरी है और इस के लिए 15 साल का पाठय सीखना पड़ेगा, क्योंकि मेरे जैसे जाहिल के लिए वाव का ज़ेर व ज़बर का फ़र्क़ समझना हदीस की पहचान आदि सख़्त मुश्किल काम है और इमाम साहब रह0 इमाम बुख़ारी आदि से ज़्यादा अहादीस को पहचानते थे। जब मैंने उन से सवाल किया कि फिर वह अहादीस कहां हैं जिन को इमाम साहब रह0 ने पहचाना? वह कौन सी किताब है और वह किताब आप अपने मदरसों में क्यों नहीं पढ़ाते तो इस का उन के पास कोई जवाब नहीं था। फिर मुझ पर जिहालत और अनादर करने का फ़तवा लगाया जाने लगा। वह मौलवी साहब जिन का मैंने पहले पत्रों में ज़िक्र किया था। उन के जोश व ख़रोश से मुझे कुछ उम्मीद हो गई थी कि यह मौलवी साहब ज़ोरदार हैं इसी लिए तो ऐसे शब्द लिखवा रहे हैं कि हंफ़ी मज़हब तिंकों का बना हुआ नहीं है कि उड़ जाए। हमारे पास तर्क हैं, हम ऐसा मुंहतोड़ जवाब देंगे कि दांत ख़ट्टे हो जाएंगे आदि लेकिन जब मैंने उन मौलवी साहब से जवाब लिखने को कहा तो मेरे तक़ाज़े पर चराग़ पा हो गए और फिर वह कुछ फ़रमाया जो मैं पहले आप को लिख चुका हूं, उन्होंने रफ़अ यदैन के बारे में अर्थात उस के विरुद्ध एक हदीस यह बयान फ़रमाई कि एक बार कुछ लोग नमाज़ पढ़ रहे थे तो हुज़ूर स0 ने देख कर फ़रमाया कि तुम लोगों को क्या हो गया है जो घोड़ों की दुमों की तरह हाथ हिला रहे हो? और दूसरी दलील हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की हदीस बयान की थी कि यह हुज़ूर स0 का आख़िरी अमल था तो कहा चूंकि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 के ठीक पीछे पहली पंक्ति में खड़े होते थे और हुज़ूर स0 की हरकात व सकनात को ध्यान से देखते थे और अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 चूंकि कम उमर थे और उन को दूसरी तीसरी पंक्ति में जगह मिलती थी, इस लिए हज़रत

अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से हज़रत अब्दुल्लाह निब मसऊद रज़ि0 का दर्जा ज़्यादा है मैंने कहा कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की यह हदीस तो ज़ईफ़ है। इस पर वह बिगड़ गए और मुझ पर जिहालत का फ़तवा लगा दिया। फिर सजावल में कुछ ऐसी हालत हो गई, कि उन मौलवी साहब ने अपने शार्गिदों और दूसरे लोगों को भी मिलने से मना कर दिया अर्थात मेरा बायकाट कर दिया। मैंने अलीमुद्दीन साहब की दुकान में रफ़अ यदैन से नामज़ पढ़ना शुरु की। जिस पर एक हंगामा हो गया और सजावल जो इन मौलवी के ज़ेरे असर है मेरे ख़िलाफ़ हो गया। फिर मैंने फ़ितना और शर को दबाने के लिए यह किया कि मौलवी नूर मुहम्मद साहब से कहा कि मैं अभी तहक़ीक़ में लगा हुआ हूं और तहक़ीक़ कर रहा हूं। अतएव मैंने मस्जिद में फिर नामज़ शुरु कर दी और तहक़ीक़ में लगा रहा लेकिन अब तक़्लीद का शीशा टूट कर चकना चूर हो चुका था। उन मौलवियों से मेरा दिल टूट चुका था। मैंने सोचा कि अब ख़ामोशी से मैं तहक़ीक़ में लगा रहूं और हक़ का पता मुझे लग जाए तो यह अल्लाह तआला की ज़बरदस्त मेहरबानी व करम है। उन्हीं से दुआऐं कीं और उन्हीं से मदद मांगी।

फिर कुछ कामों की वजह से ऐसा बेबस हो गया कि तहक़ीक़ व अध्ययन आदि सब बन्द हो गया था लेकिन आप का वह पोस्ट कार्ड जो सजावल से होता हुआ मुझे गुलामुल्लाह में मिला ऐसा काम कर गया कि मैं मानो नीन्द से जाग पड़ा मालूम हुआ जैसे मुझे किसी ने झिंझोड़ कर नींद से जगा दिया। आप का कार्ड पढ़ने के बाद मैंने स्वंय से कहा कि यह क्या, तू एक ज़रूरी काम को छोड़ कर बैठ गया। अतएव मैंने फिर से कोशिश शुरु की और अपने संदेह आप को लिखे। आप ने जवाबात दिए वह मुझे बे हद पसन्द आए अर्थात मैं अल्लाह की कृपा से क़ायल हो गया।

मैं अल्लाह की कृपा से में रफ़अ़ यदैन से नमाज़ पढ़ता हूं और मेरी पत्नी भी रफ़अ यदैन से नामज़ पढ़ती है, कुरआन और हदीस से बढ़ कर और क्या हक़ हो सकता है कुरआन व हदीस छोड़ कर और रास्ता ढूंढना सरासर जिहालत है। अल्लाह तआला आप को अजरे अज़ीम प्रदान फ़रमाए। आप के दर्जे बुलन्द फ़रमाए। आमीन।

और प्रार्थना करता हूं कि मेरे लिए और मेरी सन्तान के लिए दुआए ख़ैर फ़रमाएं।

ख़ादिम नवाब

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब मुहियुद्दीन साहब

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु। अम्मा बाद!

चक लाला 5—फ़रवरी 62 ई0

तौबा के बाद पिछले गुनाह भी नेकियों में बदल दिए जाते हैं

आप के दो पत्र एक साथ पहुंचे। आप के सवालों का जवाब क्रमवार दे रहा हूं।

(1) अब तक आप ने जितनी नमाज़ें पढ़ीं हैं, वह इंशा अल्लाह बेकार नहीं जाएंगी। इस वजह से कि अब आप तौबा कर चुके हैं, नमाज़ तो नेकी है अगर कोई गुनाह भी होता तो वह भी नेकी में तब्दील होकर सवाब का कारण बन जाता। अल्लाह तआला फ़रमाता है: الا من تاب و آمن وعمل عملاً صالحاً فاولئک یبدل اللہ سیاتھم حسنٰت و کان اللہ غفوراً رحیما. जो व्यक्ति तौबा करे, ईमान लाए और नेक अमल करे तो ऐसे लोगों की बुराईयों को अल्लाह तआला नेकियों में तब्दील कर देता है और अल्लाह ग़फ़ूर और रहीम है।

(सूरा फ़ुरक़ान 70)

अतः आप ना उम्मीद न हों बल्कि क़ुरआन मजीद की यह शुभ सूचना सुन कर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करें कि वह अपने

बन्दों पर कितना मेहरबान है। अल्लाह तआला से अच्छा गुमान रखें एक हदीस कुदसी में है कि "मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूं"

(सहीह बुख़ारी)

ग़ैर मसनून वज़ीफ़े कोई नेकी नहीं

(2) मुरशिद का बताया हुआ ज़िक्र आप कर सकते हैं बशर्तेकि सुन्नत से उस का सुबूत मिलता हो। वरना उस को तर्क करके वे अज़कार व औराद अख़्तियार फ़रमाएं जो सुन्नत से साबित हैं। इस सिलसिले में कई किताबें छप चुकी हैं जैसे "हिस्ने हसीन" "अलहिज़्बुल मक़बूल" आदि यह तमाम अवराद मिशकात शरीफ़ में भी मौजूद हैं। अल्लाह तआला फ़रमाता है: قل ان كنتم تحبون الله فاتبعوني. "कह दीजिए! अगर तुम्हें अल्लाह से मुहब्बत करने का दावा है तो मेरा अनुसरण करो (आले इमरान) ऐसी कोई नेकी नहीं है जो रसूलुल्लाह सल्ल0 ने न सिखाई हो और जो नहीं सिखाई वह नेकी नहीं है।

(3)........... आप सब नमाज़ें घर में अदा करें। आप शरअी उज़्र की बिना पर जमाअत छोड़ेंगे, अतः आप को जमाअत का ही सवाब मिलेगा। दूसरी बात यह है कि जहां आप हैं वहां जमाअत है ही नहीं। अतः महरूमी का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता बल्कि जमाअत तो आप हैं। यद्यपि आप अकेले ही क्यों न हों देखिए अल्लाह तआला इब्राहीम अलैहिस्सलाम के बारे में फ़रमाता है: ان ابراهيم كان امة قانتا لله حنيفا ط "बेशक इबराहीम अलैहिस्सलाम उम्मत थे, अल्लाह के आज्ञा पालक थे और सिर्फ़ अल्लाह की तरफ़ पलटने वाले थे (कुरआन करीम)

इस हदीस में भी आप के लिए खुशख़बरी है: اذا مرض العبد

اوسافر كتب له مثل ما كان يعمل مقيماً صحيحاً(सही बुख़ारी) "अर्थात जब बन्दा बीमार या मुसाफिर होता है तो उस को उतना ही सवाब मिलता है जितना इक़ामत और सेहत की हालत में") बस इसी तरह की मजबूरी आप के सामने है।

उलमा हक़ का मेयार नहीं

(4) आप का चौथा सवाल एक वसवसा है, आप उस वसवसे से अल्लाह की पनाह तलब कीजिए बड़े बड़े उलमा अहनाफ़ या हंफ़ियत पर क्यों अड़े रहे? यह अज़ाब व सवाब को जानते हुए क्यों हंफ़ी बने बैठे हैं? क्या उन को अज़ाबे जहन्नम का ख़ौफ़ नहीं है? हमें इन सवालात और उन के जवाबों से क्या लेना देना, न उन की पैरवी हम पर लाज़िम है, न उन के विरोध से हमारा कुछ नुक़्सान है, हमें अपने अक़ीदे और आमाल का हिसाब करना है, अगर वह सही हैं तो फिर यह परवाह नहीं करनी चाहिए कि कौन उस के विरोधी है और कौन उस के अनुकूल, कौन जन्नती हैं और कौन जहन्नमी? यह फ़ैसला अल्लाह को करना है। हम से हमारे कर्म की पूछ होगी। अल्लाह तआला ने साफ फ़रमाया है: لها ما كسبت ولكم ما كسبتم. لنا اعمالنا ولكم اعمالكم.(अल कुरआन) अर्थात उन के कर्म उन के लिए और तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिए। हमारे आमाल हमारे लिए और तुम्हारे आमाल तुम्हारे लिए (सूरा बक़रा 132–239) अतः मेरी आप से मुख़लिसाना विनती है कि बजाए इस के कि आप विभिन्न लोगों पर नज़र डालें। आप उन से हट करके बस एक रसूलुल्लाह सल्ल0 पर अपनी नज़र रखिए। और यही अल्लाह तआला का हुक्म है। ऐसे आदमी बहुत कम होते हैं जो हक़ को पहचान कर हक़ का इंकार करें। ईसाई इस लिए ईसाई हैं कि वह ईसाई मज़हब ही को

अल्लाह की इच्छा व मर्ज़ी का सबब समझता है और इस्लाम से दूरी ही को अल्लाह का हुक्म समझता है। यही हाल तमाम धर्मों वालों का है निष्ठा हर जगह पाई जाती है लेकिन इस निष्ठा पर मुक्ति नहीं है, वे निष्ठा की वजह से इस्लाम नहीं लाते तो वह बच नहीं सकते। वह बावजूद इस निष्ठा के भी काफ़िर रहेंगे अब और ज़रा क़रीब आ जाइए। ख़ारजी, मुसलमानों का ही एक सम्प्रदाय है। अत्यन्त परहेज़गार, कुरआन के बहुत बड़े आलिम। लेकिन इसी के साथ रसूलुल्लाह सल्ल0 की भविष्य वाणी के अनुसार इस्लाम से बाहर हैं। अब क्या कहें? ख़लीफ़ा–ए–राशिद के मुक़ाबला पर आ गए? क्या उन्हें जहन्नम का डर नहीं था? फिर क्या इस लिए कि वह बहुत बड़े आलिम थे, मुत्तक़ी थे, यहां तक कि कबीरा गुनाह करने वाले को काफ़िर समझते थे। हम उन्हें अच्छा समझने लगें और उनके जहन्नमी होने में शक व संदेह में पड़ जाऐं।

अब ज़रा क़रीब तर आइए! बरेलवी उलमा तो हमारे भाई बन्द हैं, अहले सुन्नत कहलाते हैं लेकिन आप उन्हें बहुदेववादी समझते हैं। अब क्या यह सवाल नहीं हो सकता कि क्या उन्हें अपने जहन्नमी होने का भय नहीं? क्यों जान बूझकर हक़ का इन्कार करते हैं? निश्चय ही इस संदेह की बिना पर हम उन्हें अच्छा नहीं कह सकते। न उन की तरफ झुक सकते हैं, जो हक़ है वह हक़ है। فماذا بعد الحق الا الضلل और हक़ के बाद कुछ नहीं सिवाए गुमराही के (कुरआन मजीद) जो हक़ का निष्ठा से इन्कार करे वह गुमराह है और जो बुरी नीयत से इन्कार करे वह भी गुमराह है।

इजतेहादी मतभेद और तक़्लीद का फ़र्क़

इजतेहादी मतभेद आमाल में तो हो सकता है और उस को

सहन किया जा सकता है लेकिन जब यह मतभेद अक़ाईद की हद तक पहुंच जाए, शिर्क को तौहीद समझ लिया जाए तो फिर यह सहन नहीं हो सकता। इमामों का मतभेद इजतेहादी था और केवल कर्मो में था। मुक़ल्लिदीन का मतभेद तक़्लीदी है और उस तक़्लीदी मतभेद को शरीअत का दर्जा दे दिया गया है बस यही एक ऐसी एतेक़ादी ख़राबी है जो शिर्क की सीमा में दाख़िल हो जाती है।

अब बताइए इन के बारे हमें क्या अक़ीदा रखना चाहिए। अगर हमारे अक़ीदे में यह बात न हो कि तक़्लीद से गुमराही पैदा होती है तो हमारा ईमान कैसे कामिल होगा। इस अक़ीदा को भी ईमान का हिस्सा बनाना चाहिएं ‿

अब आप के दूसरे पत्र का जवाब शुरु होता है।

30 शाअबान

एक हदीस से रफ़अ यदैन के ख़िलाफ़ ग़लत विवेचन

रफ़अ यदैन के सिलसिले में आप ने एक हदीस तहरीर फ़रमाई है वह यह कि

> "एक बार कुछ लोग नमाज़ पढ़ रहे थे, तो हुज़ूर अकरम स0 ने देख कर फ़रमाया तुम लोगों को क्या हो गया है जो घोड़ों की दुमों की तरह हाथ हिला रहे हो।"

अब इस का जवाब सुनिए!

पहला– रसूलुल्लाह सल्ल0 का रफ़अ यदैन करना शव्वाल 10 हि0 तक साबित है। अब अगर निरस्त हुआ तो इन चार महीनों में से

किसी महीने में हुआ होगा। ज़ी क़ाअदा, ज़िल हिज्जा, मुहर्रम, सफ़र।" और अगर यह मान लिया जाए कि हज़रत वाइल जो रफ़अ यदैन के रावी हैं हुज्जतुल विदा में आप स0 के साथ गए होंगे तो फिर केवल दो महीना पाक जीवन के बाक़ी रह जाते हैं। अब आप सोचिए कि जो काम इतना मकरूह हो उस को रसूले मुक़द्दस सल्ल0 नौ दस साल तक करते रहे, क्या ऐसे मकरूह काम को रसूलुल्लाह स0 की तरफ़ मंसूब करना किसी मोमिन का काम हो सकता है?

दूसरा–क्या किसी हुक्म को निरस्त करने का यही तरीक़ा है? जो आप सल्ल0 किया करते थे, वही वह लोग कर रहे थे तो फिर यह कहना चाहिए था कि ऐ मोमिनों! अब यह तरीक़ा बदल गया अब ऐसा न किया करों

तीसरा–यह हदीस सहीह मुस्लिम में हज़रत जाबिर बिन सुमरह रज़ि0 से मरवी है। हज़रत जाबिर रज़ि0 से रिवायत करने वाले दो असहाब हैं। एक तमीम बिन तरफ़ा रह0, दूसरे उबैदुल्लाह रह0 तमीम रह0 ने इसे सार में बयान किया है और उबैदुल्लाह रह0 ने विस्तार से। पहले तमीम की रिवायत सुनिए!

> हज़रत जाबिर रज़ि0 कहते हैं: خرج علينا رسول الله صلى الله عليه وسلم فقال مالى أراكم رافعى ايديكم كانها اذناب خيل شمس اسكنوا فى الصلوٰة. अर्थात रसूलुल्लाह स0 हमारे पास बाहर तशरीफ़ लाए फिर फ़रमाया। क्या बात है कि मैं तुम को नमाज़ में इस तरह हाथ उठाते देखता हूं मानो कि वह सरकश घोड़ों की दुमें हैं। नमाज़ में सुकून पैदा करो। (सहीह मुस्लिम)
>
> كنا اذا صلينا مع رسول الله صلى الله عليه وسلم! فقلنا السلام

عـليـكـم ورحـمة الله واشـار بيده. الى الجانبين فقال رسول الله صـلـى الله عـليـه عـلام تؤمون بايديكم كانها اذناب خل شمس انـمـا يكفى احدكم ان يضع يده على فخذه ثم ليسلم على اخيه من يمينه وشماله.

अर्थात जब हम रसूलुल्लाह स0 के साथ नमाज़ पढ़ा करते थे तो अस्सलाम अलैकुम व रहमतुल्लाह कहते हुए दोनों तरफ हाथ से इशारा करते थे। तो रसूलुल्लाह स0 ने फ़रमाया कि तुम अपने हाथों से इस तरह इशारे करते हो मानो कि वह सरकश घोड़ों की दुमें हैं। तुम्हारे लिए बस इतना काफ़ी है कि अपना हाथ रान पर रख लो, फिर सीधी तरफ और उल्टी तरफ अपने भाई को सलाम कर लो। (सहीह मुस्लिम)

इन दोनों रिवायतों के मिलाने से मालूम हुआ कि जिस रफ़अ यदैन से रोका गया है वह रफ़अ यदैन इन्दस्सलाम है न कि रफ़अ यदैन इंदर्रुकू लेकिन उलमा अहनाफ कहते हैं, पहली रिवायत में रफ़अ यदैन इंदर्रुकू की मनाही है और दूसरी में रफ़अ़ यदैन इनदस्सलाम की, दोनों अलग अलग हैं। दूसरी रिवायत पहली की व्याख्या नहीं करती बल्कि अलग एक घटना है। दो घटना होने के दो कारण भी बयान करते हैं, जो निम्न हैं।

पहली वजह:

पहली रिवायत में है कि ''आप बाहर तशरीफ़ लाए, दूसरी में है कि ''हम जब आप के पीछे नमाज़ पढ़ा करते थे।''

दूसरी वजह:

पहली में '' اسـكنوا فى الصلوٰة'' है अर्थात नमाज़ में ख़ामोश रहो दूसरी में यह शब्द नहीं हैं।

पहली वजह का जवाब

दोनों रिवायतों को मिलाकर इबारत इस तरह बनती है कि जब हम रसूलुल्लाह स0 के पीछे नमाज़ पढ़ा करते थे तो हाथ उठाया करते थे। एक दिन ऐसा हुआ कि आप स0 बाहर तशरीफ़ लाए और आप स0 ने हमें इस तरह करते हुए देख लिया तो फ़रमाया। क्या बात है कि तुम सलाम करते समय हाथ उठाते हो मानो कि वह सरकश घोड़ों की दुमें हैं, (जो बार बार उठती हैं न कि वक़्फ़ा से) नमाज़ में ख़ामोशी रखो आदि आदि।

दूसरी वजह का जवाब:

दूसरी रिवायत में भी "ख़ामोश रहो" (الا يسكن احدكم فى الصلوٰة) के शब्द मौजूद हैं। और यह रिवायत सहीह अबु अवाना में मौजूद है और मुसनदे इमाम अहमद रह0 में भी है।

चार:

इन दोनों रिवायतों के एक घटना के बारे में होने के तर्क यह हैं।

पहली:

रिवायत का मज़मून लगभग एक है अर्थात "ख़ामोश रहो" और "मानो कि सरकश घोड़ों की दुमें"

यह शब्द समान हैं।

दूसरी:

रावी एक हैं जाबिर बिन सुमरा रज़ि0।

तीसरी:

तमाम मुहद्दिसीन ने इन दोनों रिवायतों को सलाम के अध्याय में रिवायत किया है। जैसे इमाम बुख़ारी, इमाम मुस्लिम रह0, इमाम अबु दाऊद, इमाम नसाई, इमाम इब्न हब्बान, इमाम तहावी रह0 आदि।

इमाम बुख़ारी रह0 लिखते हैं।

فنهى النبى صلى الله عليه وسلم عن رفع الايدى فى التشهد ولايحتج بهٰذا من له حظ من العلم هٰذا معروف مشهور لا احتلاف فيه.

अर्थात रसूलुल्लाह स0 ने तशहहुद में सलाम करते समय हाथ उठाने से मना फ़रमाया था। और जिस व्यक्ति में ज़रा सी भी समझ है वह इस से रफ़अ यदैन इन्दर्रुकू न करने के लिए दलील नहीं लेता। यह मारूफ़ व मशहूर है। इस में मुहद्दिसीन का मतभेद ही नहीं है।

(كتاب رفع اليدين للامام البخارى صفحه ١٥)

यह रफ़अुल यदैन इन्दस्सलाम शीओं में अब तक प्रचलित है और जब वह ऐसा करते हैं तो बिल्कुल ऐसा मालूम होता है, जैसा कि सरकश घोड़ों की दुमें उठ रही हैं। शायद आप ने भी शीओं को ऐसा करते हुए देखा होगा।

पांचवी:

अगर इस हदीस से रफ़अ़ यदैन मना है तो फिर तमाम रफ़अ़ यदैन मना हो जाऐंगे, यहां तक कि शुरु नामज़ का रफ़अ़ यदैन। नमाज़ ईदैन में रफ़अ यदैन। नमाज़ वितर में रफ़अ़ यदैन कोई जाईज़ नहीं रहेगा, क्यों कि इस हदीस में किसी रफ़अ यदैन की विशेषता नहीं है।

इमाम बुख़ारी रह0 लिखते हैं।

ولو كان كما ذهبوا إليه لكان رفع الأيدى فى اول التكبيرة وايضاً تكبيرات صلوٰة العيد منهيا عند لانه لم يستثن رفعا دون رفع، (كتاب رفع اليدين للامام البخارى ص ١٥)

नवाब साहब! सोचिए क्या यह इन्तिहाई मकरूह कार्य अब भी नमाज़ों में मौजूद है या नहीं? अगर है तो क्यों?

अल्लाह इन मुक़ल्लिदों को हिदायत दे।

(6) क्योंकि अदमे रफ़अ़ यदैन के सिलसिले में यही एक हदीस है जो मुहद्दिसीन के नज़दीक सही है, अतः एड़ी चोटी का ज़ोर लगाया जाता है कि इस हदीस को हुज्जत बना कर रफ़अ़ यदैन को निरस्त माना जाए। मैं कहता हूं, अच्छा निरस्त सही लेकिन निरस्त क्यों है? इस लिए कि यह बहुत ही मकरूह काम से मिलता जुलता है। अर्थात सर कश घोड़ों की दुमों से। और जब यह इतना मकरूह काम है तो बड़े शद्दो मद्द के साथ हुज़ूर स0 ने इस की मनाही की होगी, लेकिन कहीं कोई रिवायत नहीं मिलती, हालांकि हर हदीस की कई कई सनदें होती हैं, कई कई सहाबी रज़ि0 रिवायत करते हैं। फिर हैरत है कि इतना मकरूह काम नबी करीम स0 की मनाही फिर भी इमाम हसन बसरी रह0 आदि के अनुसार तमाम सहाबा रज़ि0 रफ़अ़ यदैन करते थे।

अब इस पत्र को भेज रहा हूं। बाक़ी बातों का जवाब दूसरे पत्र में दूंगा सूचनार्थ है।

अपनी ख़ैरियत से सूचित फ़रमाऐं। अपने घर वालों को मेरा सलाम कह दें।

फ़क़त

ख़ादिम मसऊद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब मुहियुद्दीन खां साहब

अस्सलाम आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

2 माह ईद मुताबिक़ 2– 8–62

(अम्मां बाद) आज एक पत्र आप की सेवा में रवाना किया है। अब आप की बाक़ी बातों का जवाब लिख रहा हूं।

कुछ भ्रम

1– आप की इबारत। "और दूसरी दलील हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की हदीस बयान की थी कि यह हुज़ूर स0 का आख़िरी अमल था।"

जवाब:

अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की ऐसी कोई हदीस नहीं जिस का यह मतलब हो कि "यह नबी स0 का आखिरी अमल था।" न सहीह न ज़ईफ़।

2– आप के पत्र की इबारत "हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 हुजूर के ठीक पीछे पहली पंक्ति में खडे होते थे।"

जवाब:

किसी हदीस में यह मतलब या यह मज़मून नहीं है, न सहीह में न ज़ईफ़ में।

3- आप के पत्र की इबारत। "हुजूर स0 की हरकात व सकनात को ध्यान से देखते थे और अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 चूंकि कम उम्र थे और उन को दूसरी तीसरी पंक्ति में जगह मिलती थी, इस लिए हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 का दर्जा ज़्यादा है।"

जवाब:

इस इबारत में कई भ्रम हैं, यह बिल्कुल बे सुबूत है कि वह नबी स0 की हरकात व सकनात को ध्यान से देखते थे। अगर यह सही है तो फिर यह बताया जाए कि आख़िर उन से ग़लतियां क्यों हुई?

1- वह रुकू में ततबीक़ करते थे (सहीह मुस्लिम) बल्कि दूसरों को भी इस का हुक्म दिया करते थे यहां तक कि अपने शार्गिदों के हाथों को मार कर उन में ततबीक़ करके दोनों रानों के बीच में रख देते थे। अरबी शब्दें यह हैं:

فضرب ايدينا وطبق بين كفيه ثم ادخلهما بين فخذيه.

(सहीह मुस्लिम, अबु दाऊद आदि)

2- तीन आदमियों की जमाअत में एक को इमाम के दायीं तरफ़ और दूसरे को इमाम के बायीं तरफ़ कर लिया करते थे। (सहीह मुस्लिम) बल्कि इस का हुक्म दिया करते थे। उन का फ़रमान यह है।

"اذا كنتم ثلاثة فصلوا جميعا واذا كنتم اكثر من ذٰلك
فليؤمكم احدكم."

अर्थात जब तीन हों तो एक पंक्ति में नामज़ पढ़ो और जब तीन से ज़्यादा हों तो एक आगे खड़ा हो।

(सहीह मुस्लिम, अबु दाऊद आदि)

3- हुक्म देते थे कि रुकू में कलाईयों को रानों पर बिछा दिया

करो। शब्द यह हैं:

اذا رکع احدکم فلیفوش ذراعیه علیٰ فخذیه. (صحیح مسلم)

4– बिना अज़ान व इक़ामत के जमाअत कर लिया करते थे (सहीह मुस्लिम) आदि आदि।

दूसरा भ्रम

यह है कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 नबी स0 की हरकात व सकनात को ध्यान से नहीं देखते थे। यह आरोप है। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से ज़्यादा तो रसूलुल्लाह स0 की हरकात व सकनात को कोई देखता ही नहीं था। वह तो यहां तक देखते थे कि रसूलुल्लाह स0 सफ़र में कहां उतरते थे, कहां नमाज़ पढ़ते थे, कहां पेशाब करते थे। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 इन सुन्नतों पर भी अमल करते थे। यहां तक कि अगर उन को पेशाब न आता था तो ख़ाली ही बैठ जाया करते थे।

(सहीह बुख़ारी आदि में उन का यह अमल जगह जगह नज़र आता है।

तीसरा भ्रम

यह है कि अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 के अलावा कोई भी नबी स0 की हरकात व सकनात को ध्यान से नहीं देखता था। यमन के शहज़ादे हज़रत वाइल बिन हजर रज़ि0 ने तो दो बार मदीना का सफ़र ही इस उद्देश्य से किया था कि रसूलुल्लाह सल्ल0 की नामज़ को ध्यान से देखें। (अफ़सोस है उस व्यक्ति पर जिस ने रफ़अ यदैन के विरोध में हज़रत वाइल रज़ि0 को देहाती का ख़िताब दिया) दूसरी बार वह शव्वाल 10 हि0 में मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए थे।

(अलबिदाया वन्हिाया)

दूसरी बार के आने पर भी उन का बयान है कि रसूलुल्लाह

सल्ल0 और सहाबा रज़ि0 रफ़अ यदैन करते थे। (सहीह मुस्लिम) शब्द देखिए जिन से उन के आने का उद्देश्य स्पष्ट होता है।

قلت لا نظرن الیٰ صلوٰة رسول الله صلی علیه وسلم کیف یصلی قال فنظرت."

अर्थात मैंने कहा कि मैं ज़रूर देखूंगा कि रसूलुल्लाह सल्ल0 किस तरह नमाज़ पढ़ते हैं अतः मैंने देखा।

(किताब रफ़उल यदैन लिल इमामुल बुख़ारी पृ0 13)

चौथा भ्रम

यह है अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 कम उमर थे यह भी ग़लत है हां जवान थे, बूढ़े नहीं थे। इमाम बुख़ारी रह0 ने इस का भी खंडन किया है।

والعجب ان یقول احدهم کان ابن عمر صغیراً فی عهد النبی صلی الله علیه وسلم ولقد شهد النبی صلی الله علیه وسلم لابن عمر بالصلاح ......قال ابن عمر انی لاذکر عمر حین اسلم فقالوا صبأ عمر صبأ عمر فجاء العاص بن وائل فقال صبأ عمر صبأ..........

अर्थात हैरत है कि किसी ने यह कहा इब्ने उमर रज़ि0 छोटे थे। यद्यपि रसूलुल्लाह सल्ल0 ने उन के सुधार की शहादत दी थी........... वह कहते थे कि मुझे याद है जब उमर रज़ि0 इस्लाम लाए तो लोगों ने कहा उमर साबी हो गया उमर साबी हो गया। फिर आस बिन वाइल आया। उस ने भी यही कहा....... فترکوه ...... फिर वे लोग हज़रत उमर रज़ि0 को छोड़ कर चले गए।

(किताब रफ़उल यदैन लिल इमाम बुख़ारी पृ0 170)

पांचवां भ्रम

यह है कि **अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 कम इल्म थे। यह भी**

ग़लत है। रसूलुल्लाह स0 ने एक बार सहाबा रज़ि0 से पूछा बताओ वह कौन् सा पेड़ है जो मुसलमान की तरह है। तमाम सहाबा रज़ि0 बेबस हो गए। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 ने चाहा कि मैं कह दूं कि वह खुजूर का पेड़ है, लेकिन अदब की वजह से ख़ामोश रहे। फिर रसूलुल्लाहु स0 ने स्वयं बताया। इब्ने उमर रज़ि0 ने जब यह बात हज़रत उमर रज़ि0 से बयान की तो हज़रत उमर रज़ि0 ने कहा "अगर तुम बता देते तो मेरे लिए यह इतने इतने माल से भी ज़्यादा महबूब था।" (सहीह बुख़ारी किताबुल इल्म)

शायद इस मज्लिस में अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 भी होंगे। इस लिए कि वह तो कभी साथ छोड़ते ही न थे।

छटा भ्रम

यह है कि अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 के सिवा इस हदीस का कोई और रावी ही नहीं यह भी ग़लत है, रफ़अ यदैन की रिवायत हज़रत अबु बकर रज़ि0 हज़रत उमर रज़ि0 और हज़रत अली रज़ि0 से भी है और ये लोग निश्चय ही हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद से उमर में भी ज़्यादा थे और ज्ञान व नेकी और रसूल की संगत में भी। उन लोगों को छोड़ कर अब्दुल्लाह बिन उमर से मुक़ाबला करना धोखा देना है। (केवल अली रज़ि0 से शायद वह उमर में ज़्यादा होंगे)

सातवां भ्रम

यह है कि रफ़अ यदैन एक बहुत ही गहरा इल्मी और फ़िक़्ही मसला है और इस को फुक़हा ही समझ सकते हैं, छोटा बच्चा क्या समझे। यद्यपि रफ़अ यदैन का संबंध केवल आंख़ से है और यह चीज़ ब मुकाबले बूढ़े के बच्चा ही ज़्यादा अच्छी तरह से देख सकता है और ज़्यादा अच्छी तरह याद रख सकता है।

आठवां भ्रम यह है कि इब्ने मसऊद और इब्ने उमर रज़ि0 की हदीसें सेहत की दृष्टि से बराबर हैं, यद्यपि यह पूरी तरह ग़लत है। इब्ने उमर रज़ि0 की हदीस सहीहैन की बुख़ारी व मुस्लिम की हदीस है। इस के रावी सब के सब इमाम हैं। यह सिलसिलातुज़ ज़हब की हदीस है। सनदें असहहुल असानीद हैं। इब्ने उमर रज़ि0 से यह हदीस मुतवातिर है, बर ख़िलाफ़ इस के इब्ने मसऊद की हदीस अक्सर मुहद्दिसीन के नज़दीक ज़ईफ़ है। और उस का मतन ग़ैर महफ़ूज़ है। इब्ने मसऊद से यह रिवायत मुतवात्तिर नहीं है। आसिम बिन कुलैब रावी का इस में इंन्फिराद है। जब सेहत और महफ़ूज़ होने के लिहाज़ से बराबर नहीं तो मुक़ाबला क्या मायना? मुक़ाबला तो बराबर की चीज़ों में हुआ करता है। फिर इसके अलावा इब्ने उमर रज़ि0 की तरह रिवायत करने वाले सहाबा रज़ि0 की तादाद पचास के लग भग पहुंच जाती है। फिर इमाम हसन बसरी रह0 आदि की रिवायत के मुताबिक़ किसी सहाबी रज़ि0 से इस का छोड़ना साबित नहीं। अतः इब्ने मसऊद की हदीस किसी लिहाज़ से भी क़ाबिले हुज्जत नहीं, अगर सहीह भी हो तो उस में अब्दुल्लाह बिन मसऊद की भूल है। जैसे उन से और भूल हुई यह भी हुई। जैसे उस भूल पर कोई अमल नहीं करता इस पर भी नहीं करना चाहिए।

फ़क़त

ख़ाकसार

मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

मोहतरम जनाब मसऊद साहब

अस्स्लामु आलैकुम

पत्र लिखने में देरी हुई जिस के लिए शर्मिन्दा हूं और माफ़ी चाहता हूं। नमाज़ में रफ़अ यदैन न करे तो क्या, नमाज़ नहीं होती और क्या रफ़अ यदैन फ़र्ज़ है? रफ़अ यदैन न करने वाली हदीस जो हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 से रिवायत की गई है तिर्मिज़ी शरीफ़ उर्दू पहला भाग में इस को इमाम तिर्मिज़ी ने हसन कहा है और हसन हदीस का दर्जा सहीह हदीस के बाद है।

हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा पहला भाग में तक़्लीद के बयान में और भाग–2 मं हज़रत शाह वलीउल्लाह साहब रह0 लिखते हैं कि चारों इमामों के तरीक़े सुन्नत हैं और हर एक के पास तर्क मौजूद हैं। इस दृष्टि से तो हंफ़ी तरीक़ा भी सुन्नत हुआ और इस तरीक़ा पर अमल करना भी जायज़ हुआ।

अशरफ़ अली थानवी रह0 की लिखी हुई बड़ी बड़ी मोटी किताबें क्या सब बेकार हैं? क्यांकि वह तक़्लीद के हामी थे और क्या इमाम ग़ज़ाली रह0 की लिखी हुई किताबें भी अध्ययन योग्य हैं या नहीं। यह मैं इस लिए मालूम करता हूं कि मेरे पास यह सब भंडार मौजूद है। बाक़ी ख़ैरियत है, मेरी तरफ से सब की ख़िदमत में सलाम अलैक अर्ज़ है।

फ़क़त

ख़ादिम नवाब

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत मख़दूमी व मुकर्रमी जनाब नवाब साहब

अस्सलामु आलैकुम

(चक लाला 3– अप्रैल 1962 ई0)

(अम्मा बाद) बड़े इन्तिज़ार के बाद आप का पत्र ता0 29– मार्च वसूल हुआ आप के सवालों के जवाब यह हैं।

रफ़अ यदैन फ़र्ज़ है

सवालः नमाज़ में रफ़अ यदैन न करे तो नमाज़ नहीं होती? क्या रफ़अ यदैन फ़र्ज़ है।?

जवाबः नमाज़ फ़र्ज़ है। इस पर सब की सहमति है। अतः इस के अदा करने का तरीक़ा भी फ़र्ज़ है वर्ना लाज़िम आएगा कि हर मुसलमान मुख़तार है कि जिस तरीक़ा से चाहे नमाज़ पढ़े। तरीक़ा और सुन्नत दोनों हम माना शब्द हैं, अतः सुन्नत से जो तरीक़ा अदाइगी नमाज़ हम तक पहुंचा है वह फ़र्ज़ है। ख़ैर यह तो एक माकूल बात थी, जो मैं ने अर्ज़ कर दी। वरना नमाज़ के तरीक़ा का फ़र्ज़ होना क़ुरआन से साबित है। अल्लाह तआला फ़रमाता हैः

حافظوا على الصلوٰت والصلوٰة الوسطىٰ وقوموا لله قانتين فان خفتم فرجالا او ركبانا فاذا امنتم فاذكر والله كما علمكم مالم تكونوا تعلمون.

अर्थात नमाज़ों की हिफ़ाज़त करो, खासकर बीच

वाली नमाज़ की और अल्लाह के सामने अदब से खड़े रहा करो, फिर अगर तुम्हें काफ़िरों का डर हो तो पैदल चलते फिरते या सवारी पर ही नमाज़ अदा करलो। फिर जब शान्ति नसीब हो तो उसी तरीक़ा से अल्ल:ह का ज़िक्र करो जिस तरीक़ा से उस ने तुम्हें सिखाया है और जिस को तुम नहीं जानते थे।

(सुरह बक़रा 238–239)

ये शब्द अल्लाह का हुक्म प्रकट करते हैं। और अल्लाह का हुक्म फ़र्ज़ होता है अतः नमाज़ का यह तरीक़ा जो रसूलुल्लाह सल्ल0 द्वारा उस ने हमें सिखाया फ़र्ज़ है। मुझे तो वास्तव में उन लोगों पर हैरत होती है जो कह दिया करते हैं। कि سمع الله لمن حمده न कहे तो नमाज़ हो जायगी, रुकूअ व सज्दा में तस्बीह न पढ़े तो नमाज़ हो जायगी। दलील यह देते हैं कि उन का अदा करना सुन्नत है, फ़र्ज़ नहीं है। अगर उन के बिना नमाज़ नहीं होती तो हदीस में होता कि उन के छोड़ने से नमाज़ नहीं होती। अगर उन की इस दलील को मान लिया जाए तो फिर नमाज़ की शक्ल यह होगी कि खड़े हो कर सूरा फ़ातिहा पढ़ो। फिर रुकूअ करो और उस में कुछ न पढ़ो। फिर रुकूअ से सीधे सज्दा में चले जाओ, फिर बैठ जाओ, नमाज़ ख़त्म हो जाएगी। यह नमाज़ क्या हुई, मज़ाक़ हुआ। अब रही यह बात कि फिर सिर्फ़ सूरा फ़ातिहा के बारे में ऐसे शब्द क्यों फ़रमाए, तो इस की पृष्ठ भूमि है। वह यह कि आप स0 ने इमाम के पीछे पढ़ने से मना किया तो उसी समय यह भी फ़रमाया कि सूरा फ़ातिहा भी पढ़ना क्योंकि वह अगर इमाम के पीछे भी छोड़? दोगे तो नमाज़ न होगी।

(अबु दाऊद, तिर्मिज़ी)

मतलब यह कि उल्लिखित उसूल की रू से नामज़ का पूरा तरीक़ा फ़र्ज़ है, सिवाए इस चीज़ के जिस को स्वयं रसूलुल्लाह स0 ने कभी किया हो और कभी छोड़ दिया हो और कोई ऐसी चीज़ मेरे ज़ेहन में तो है नहीं, सिवाए इस के कि यह कहा जाए कि रफ़अ यदैन आप ने कभी किया और कभी छोड़ दिया लेकिन छोड़ने से रिवायत साबित नहीं होती अतः रफ़अ यदैन फ़र्ज़ हुआ।

2- रफ़अ यदैन की फ़र्ज़ियत की दूसरी दलील यह है कि मालिक बिन हुवैरिस रज़ि0 और उन के साथियों से आप स0 ने फ़रमाया था कि صلوا كما رايتمونى اصلى (नमाज़ ऐसे ही पढ़ा करना जिस तरह तुम ने मुझे पढ़ते देखा है) और मालिक बिन हुवैरिस रज़ि0 का बयान है कि रसूलुल्लाह सल्ल0 रफ़अ यदैन करते थे।

(सहीह बुख़ारी) क्योंकि हुक्म फ़र्ज़ होता है, अतः रफ़अ यदैन फ़र्ज़ है।

3- तीसरी दलील। हज़रत उमर रज़ि0 एक बार मस्जिद में आ निकले, लोग नमाज़ पढ़ रहे थे। हज़रत उमर रज़ि0 ने फ़रमायाः

"اقبلوا على بوجوهكم اصلى بكم صلوٰة رسول الله صلى الله عليه
وسلم التى كان يصلى ويأمربها فقام مستقبل القبلة ورفع يديه
حتى حاذى بهما منكبيه ثم كبر ثم ركع وكذٰلك حين رفع."

अर्थात मेरी तरफ़ मुतवज्जा हो जाओ मैं तुम्हें रसूलुल्लाह सल्ल0 की नमाज़ बताऊं जिस तरीक़ा से आप सल्ल0 स्वयं नमाज़ पढ़ते थे और जिस तरीक़ा से लोगों को पढ़ने का हुक्म दिया करते थे, अतः वह (हज़रत उमर रज़ि0) खड़े हो गए, क़िब्ला की तरफ़ मुंह किया और कंधों तक हाथ उठा कर अल्लाहु अकबर कहा और रुकूअ किया और उसी तरह उस समय भी किया जब रुकूअ से सर उठाया।

(अख़िलाफ़ियात बैहेक़ी, नस्बुर्राया पहलाभाग पृ0 416 व सनदहु सहीह

नमाज़ के अरकान में फ़र्ज़ व सुन्नत की तफ़रीक़

फ़र्ज़ व सुन्नत की तफ़रीक़ बहुत बाद की चीज़ है। सहाबा किराम रज़ि0 इस चीज़ के आदी नहीं थे, वे तो बस यह देखते थे कि रसूलुल्लाह स0 ने क्या किया? क्या फ़रमाया? अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 को देखिए कि रफ़अ यदैन न करने वाले को कंकरियां मारा करते थे जब तक कि वह रफ़अ यदैन न करे। (किताब रफ़अ यदैन इमाम बुख़ारी रह0, मुसनद अहमद रह0) आप भी फ़र्ज़ व सुन्नत की बहस में न पड़िए। बस जिस काम को रसूलुल्लाह स0 ने हमेशा किया और छोड़ना साबित नहीं, उसे करना ही चाहिए और अगर करना, न करना दोनों साबित हैं, तब भी करना सुन्नत होगा और छोड़ना जाइज़ नहीं ऐसी हालत में भी सुन्नत ही पर अमल मुनासिब है न कि जवाज़ पर।

सवालः

रफ़अ यदैन न करने की हदीस जो हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 से मरवी है। तिर्मिज़ी शरीफ़ उर्दू पहले भाग में उस को इमाम तिर्मिज़ी ने हसन कहा है और हसन का दर्जा सहीह हदीस के बाद है?

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की हदीस का मतन ग़ैर महफ़ूज़ है

जवाबः यह सही है कि इमाम तिर्मिज़ी रह0 ने इस हदीस को हसन कहा है और यह भी सही है कि हसन का दर्जा सहीह हदीस के

बाद है। इस हदीस की सनद बेशक हसन बल्कि सही है सनद में कोई ख़ास ख़दशा नहीं है, न सनद पर किसी ने कोई ख़ास जिरह ही की है, इस हदीस पर जो कुछ जिरह हुई है वह मतन के लिहाज़ से हुई है, अक्सर मुहद्दिसीन ने इस के मतन को ग़ैर महफ़ूज़ बताया है।

1- इमाम तिर्मिज़ी लिखते हैं:

قال عبد الله بن المبارک قد ثبت حديث من يرفع و ذكر حديثالزهری عن سالم عن ابيه ولم يثبت حديث ابن مسعود ان النبی صلی الله عليه وسلم لم يرفع الا فی اول مرة.

अर्थात इमाम अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह0 ने फ़रमाया है कि रफ़अ़ यदैन की हदीस साबित है और ज़िक्र किया उन्होंने इस हदीस को जो इमाम जुहरी रह0 ने हज़रत सालिम रज़ि0 से और उन्होंने अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से रिवायत की है और इब्ने मसऊद रज़ि0 की हदीस कि रसूलुल्लाह सल्ल0 ने रफ़अ यदैन नहीं किया सिवाए पहली बार के साबित नहीं।

इमाम तिर्मिज़ी रह0 ने इस इबारत के बाद इब्ने मसऊद रज़ि0 की हदीस बयान की है और फिर उस को हसन लिखा है। अहनाफ़ का यह कहना है कि इब्ने मुबारक रह0 ने किसी दूसरी हदीस को ग़ैर साबित किया है न कि उस को लेकिन दूसरी हदीस में इब्ने मुबारक रह0 नहीं हैं और इस हदीस की सनद में वह मौजूद हैं और यह सनद नसाई में मौजूद है। अतः उन्होंने इसी को ग़ैर साबित कहा है। उन के शब्दों को "रफ़अ की हदीस साबित है।" इसी बात की दलालत करते हैं कि अदमे रफ़अ की हदीस साबित नहीं चाहे वह कोई सी हो।

2- इस के मतन को मुलाहिज़ा फ़रमाइए, नसाई में है:

فقام فرفع يديه فى اول مرة ثم لم يعد

इब्ने मसऊद रज़ि0 खड़े हुए फिर पहली बार दोनों हाथ उठाए फिर नहीं उठाए। इब्नुल क़त्तान कहते हैं। ثم لا يعود منكر है यह वकी अपनी तरफ़ से कहा करते थे। (किताबुल वहम) इमाम दारे कुतनी ने भी ثم لم يعد को ग़ैर महफ़ूज़ बताया है। (किताबुल अलल) नसाई में दूसरी रिवायत इस तरह है। فصلى فلم يرفع يديه الا مرة واحدة. अर्थात इब्ने मसऊद रज़ि0 ने नमाज़ पढ़ी तो हाथ नहीं उठाए मगर एक बार मुसनद इमाम अहमद और लेखक इब्ने अबी शैबा में "واحدة" नहीं है। अबु दाऊद की एक रिवायत में इस तरह है। فرفع يديه فى اول مرة. दूसरी में इस तरह है। فرفع يديه مرة واحدة. अर्थात इब्ने मसऊद रज़ि0 ने दोनों हाथ उठाए पहली बार। सारांश यह कि किसी में दोबारा उठाने की नफ़ी है और किसी में कोई ज़िक्र नहीं है। बस पहली बार उठाने का ज़िक्र है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 ने तो नमाज़ पढ़ कर बताई थी। उस को अलक़मा रज़ि0 ने अपने शब्दों में बयान किया है और यह अलक़मा रज़ि0 के शब्द हैं, जो किसी रिवायत में कुछ और किसी में कुछ हैं। इब्ने मसऊद रज़ि0 से रिवायत करने वाले केवल अलक़मा रह0 हैं और अलक़मा रह0 से रिवायत करने वाले केवल अब्दुर्रहमान हैं और उन से रिवायत करने वाले केवल आसिम बिन कुलैब हैं और उन से रिवायत करने वाले सुफ़ियान सूरी रह0 हैं। इस के बाद रावी ज़्यादा हो जाते हैं। लेकिन ऊपर की सनद में केवल एक एक रावी की वजह से इस में ग़राबत पैदा हो जाती है। फिर अलक़मा रह0 के शब्द शायद आसिम बिन कुलैब ने कभी कुछ और कभी कुछ बयान किए हैं। क्योंकि इमाम हाकिम फ़रमाते हैं कि आसिम ने इस हदीस को सेहत के साथ रिवायत नहीं किया और आसिम सार कर लिया

करते थे और नक़ल बिल माना करते थे। (तसहीलुल क़ारी शरह सहीह बुख़ारी)

इसी वजह से इमाम अबु दाऊद ने इस हदीस के लिखने के बाद यह भी लिख दिया कि هذا حديث مختصر من حديث طويل وليس هو بصحيح على اللفظ علىٰ هذا المعنى: अर्थात यह हदीस एक तवील हदीस से सार कर ली गई है और यह हदीस इन शब्दों के साथ इन मायनों पर सहीह नहीं। मिशकात शरीफ़ में इस हदीस का मतन इस तरह है: فصلى ولم يرفع يديه الا مرة واحدة مع تكبيرة الافتتاح. अर्थात शुरू की तकबीर के साथ इब्ने मसऊद रज़ि0 ने रफ़अ यदैन न किया सिवाए एक बार के। अगर यह इबारत सही मानी जाए तो रफ़अ यदैन इन्दर्रुकूअ़ की इस से नफ़ी नहीं होती बल्कि इस का मतलब केवल इतना है कि नमाज़ शुरू करते समय केवल एक बार रफ़अ यदैन किया बार बार नहीं, इमाम अबी हातिम ने कहा है कि यह हदीस ख़ता है सिवाए सुफ़ियान के यह शब्द (अर्थात रफ़अ यदैन की नफ़ी) आसिम से किसी ने रिवायत नहीं किए हालांकि एक जमाअत आसिम से रिवायत करती है। (अली इब्ने अबी हातिम)

इमाम बुख़ारी रह0 फ़रमाते हैं: هذا محفوظ عند اهل النظر من حديث عبد الله بن مسعودؓ. अर्थात अहले इल्म के नज़दीक ततबीक़ वाली हदीस ही महफ़ूज़ है। दूसरी जगह लिखते हैं: ولم يثبت عند اهل العلم عن احد من اصحابه صلى الله عليه وسلم انه لم يرفع يديه. अर्थात अहले इल्म के नज़दीक किसी सहाबी रज़ि0 से तर्क रफ़अ यदैन साबित नहीं। फिर आगे चल कर लिखते हैं:

ولم يثبت عند اهل النظر ممن ادركنا من اهل الحجاز واهل العراق منهم عبد الله بن الزبير وعلى بن عبد الله بن جعفر ويحيىٰ بن معين واحمد بن حنبل و اسحاق بن راهويه، هؤلآء اهل العلم

مـن بين اهل زمانهم فلم يثبت عند احد منهم علم فى ترك رفع الايـدى عـن الـنبى صلى الله عليه وسلم لا عن احد من اصحاب النبى صلى الله عليه وسلم انه لم يرفع يديه.

अर्थात हिजाज़ और इराक़ के विद्वान जिन को हम ने पाया, जिन में से यह लोग भी हैं। इब्ने जुबैर रह0, अली बिन अब्दुल्लाह रह0, याहया बिन मुईन रह0, इमाम अहमद बिन हंबल रह0, इसहाक़ बिन राहूयह, यह अपने ज़माना के ज़बरदस्त आलिम थे। इन उलमा में से किसी के नज़दीक कोई हदीस साबित नहीं कि रसूलुल्लाह सल्ल0 ने रफ़अ यदैन न किया हो या किसी सहाबी रज़ि0 ने रफ़अ यदैन न किया हो।

(किताब रफ़उल यदैन लिल इमामुल बुख़ारी पृ0 16)

मतलब यह हदीस इमाम बुख़ारी रह0 के समय तक स्वयं उलमा–ए–इराक़ के नज़दीक साबित नहीं थी। इमाम अबु दाऊद रह0 के मुताबिक इस का मफ़हूम कुछ और था, अब जो मफहूम किया जाता है वह सहीह नहीं है। इमाम अबु दाऊद रह0 के इस कथन की पुष्टि इस बात से भी होती है कि इमाम मुहम्मद रह0 ने अपनी मोत्ता में इस हदीस को मुतलक़न बयान नहीं किया। यद्यपि उन को इस की बड़ी ज़रूरत थी। वह लिखते हैं: وفـــى ذلك اثـــار كثيرة. और अदमे रफ़अ के बारे में बहुत आसार हैं।

मतलब ज़ाहिर है कि हदीस कोई नहीं। अगर यह हदीस इन मायनों पर आधारित होती तो वह ज़रूर इस का ज़िक्र करते, इस के तमाम रावी कूफ़ी हैं। फिर इमाम मुहम्मद रह0 और क़ाज़ी अबु यूसुफ़ रह0 का इस से बेख़बर होना और अपने दलाइल में ज़िक्र न करना हैरत अंगेज़ है।

इस के बाद इमाम मुहम्मद रह0 ने अली रज़ि0 इब्ने अबी

तालिब का एक असर नक़्ल किया है जिस में एक रावी मुहम्मद बिन अबान झूठा है (तज़किरतुल मौज़ूआत) फ़िर इबराहीम नख़ई रह0 ताबअी का कथन पेश किया है। उस में भी वही झूठा रावी है। फ़िर इब्ने मसऊद रज़ि0 के असहाब का अमल पेश किया है। इस की सनद में हसीन है। जिस का हाफ़िज़ा आख़िर में ख़राब हो गया था, फ़िर इब्ने उमर रज़ि0 का अमल पेश किया है। इस की सनद में वही मुहम्मद बिन अबान कज़्ज़ाब है। फ़िर हज़रत अली रज़ि0 का असर दूसरी सनद से पेश किया है। यह भी कूफ़ी सनद हैं फ़िर भी सुफ़ियान सूरी रह0 (जो स्वयं भी अदमे रफ़अ के क़ायल हैं) इस असर का इन्कार करते हैं।

(किताब रफ़उल यदैन इमाम बुख़ारी रह0 पृ0 8)

इसके अलावा इस में आसिम रावी हैं, जो नक़्ल बिल मायना के आदी हैं। इमाम उसमान बिन सईद दारमी फ़रमाते हैं। "فقد روى من هذا الطريق الواهى तहक़ीक़ यह वाहियात सनद से मरवी है। (बैहेक़ी जिल्द 2 पृ0 80) इमाम शाफ़अी रह0 फ़रमाते हैं। "ولا يثبت عن على وابن مسعود يعنى مارو ده عنهما من انهما كانا لا يرفعان." अर्थात हज़रत अली रज़ि0 और इब्ने मसऊद रज़ि0 के अदमे रफ़अ की हदीस साबित नहीं। (बैहेक़ी भाग 2 पृ0 81) इमाम बुख़ारी रह0 ने भी इस पर जिरह की है। फिर इमाम मुहम्मद रह0 ने इब्ने मसऊद रज़ि0 का असर पेश किया है, जिस के शब्द यह हैं। انه كان يرفع يديه اذا افتتح الصلوٰة. अर्थात जब वह नमाज़ शुरू करते तो रफ़अ यदैन करते थे।" इस में रुकूअ़ का ज़िक्र ही नहीं और अदमे ज़िक्र से अदमे शय लाज़िम नहीं आती। फिर इस की सनद मुन्क़तअ है। इबराहीम रह0 ने इब्ने मसऊद रज़ि0 को नहीं देखा। मतलब यह कि कुल तीन सहाबियों और कुछ ताबइयों का कथन पेश करके इमाम मुहम्मद रह0 ने अपने मसला को साबित किया और वह इस सिलसिला में

कोई हदीस पेश न कर सके बल्कि सहाबियों का अमल भी सहीह सनद से पेश न कर सके। अगर अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की यह उच्च कोटि की हदीस कूफ़ा में रह कर उन को न मालूम हो तो फिर इस पर सन्देह करना बिल्कुल बजा है। इमाम नववी रह0 ने खुलासा में लिखा है कि मुहद्दिसीन की इस के ज़ुअफ़ पर सहमति है। नक़्ल बिल मायना की आदत की वजह से इमाम अली बिन मदीनी रह0 तो यहां तक कह गए। لايحتج بما انفرد به. "आसिम अकेले रिवायत करें तो रिवायत हुज्जत नहीं होती।" (मीज़ानुल एतेदाल) और इस रिवायत को सिवाए आसिम के और कोई बयान नहीं करता। फिर अब्दुर्रहमान के अलक़मा से सुनने पर भी संदेह व्यक्त किया गया है, यद्यपि सुनने की संभावना तो है लेकिन सुनना साबित नहीं। इमाम इब्ने हिब्बान तो यहां तक लिख गए।

هذا احسن خبر روى اهل الكوفة فى نفى رفع اليدين فى الصلوٰة عند الركوع وعند الرفع منه وهو فى الحقيقة اضعف شئ يعول عليه لان له عللا تبطلهٗ.

कूफ़ा वालों की यह सब से बेहतर दलील है और हक़ीक़त में यह भी बहुत ज़ईफ़ है कि इस पर एतेमाद किया जा सके। इस में बड़ी इल्लतें है। जो इसे बातिल बना देती हैं।

(नैलुल अवतार जुज़ 2 पृ0 151)

अब बताइए इमाम तिर्मिज़ी रह0 का हसन कहना कहां तक सही है, इसी लिए इमाम शौकानी रह0 लिखते हैं: اين يقع هذا التحسين والتصحيح من قدح اولئك الائمة الاكابر. अर्थात इमाम तिर्मिज़ी रह0 की सराहना और इमाम इब्ने हज़म रह0 की इसलाह की उन अकाबिर अईम्मा की जिरह के मुक़ाबले में क्या महत्व रह जाता है। यह मान लें रूदाद है। वरना विस्तार तो बहुत कुछ है। मान लें यदि इब्ने मसऊद रज़ि0 की हदीस हसन या सहीह भी हो

तो भी एक सहाबी रज़ि0 की रिवायत तमाम सहाबी रज़ि0 के मुक़ाबले में कमतर है। फिर इब्ने मसऊद रज़ि0 से और भी बहुत सी भूल हो गई हैं जिन में से कुछ मैं पहले लिख चुका हूं इसी लिए इमाम अबु बकर बिन इसहाक़ ने फ़रमाया है कि यह हदीस रफ़अ यदैन की हदीस के समान नहीं हो सकती। क्योंकि रफ़अ यदैन रसूलुल्लाह सल्ल0 से फिर खुल़फा–ए–राशिदीन रज़ि0, सहाबा रज़ि0 और ताबअीन रह0 से सहीह तौर पर साबित हुआ है और इब्ने मसऊद रज़ि0 का इस को भूल जाना कुछ हैरत नहीं, क्योंकि वह सूरह फलक़ व सूरह नास का क़ुरआनी सूरतें होना भूल गए। ततबीक़ का मंसूख़ होना भूल गए। आदि आदि। इस तरह उन्हांने दस बातें गिनाई हैं। (यह ग्यारहवीं भूल है) (बैहेक़ी भाग 2)

मतलब यह कि अनगिनत सहीह अहसदीस के मुक़ाबले में उस को हुज्जत बनाना हैरत अंगेज़ है बाक़ी बातों के जवाब दूसरे लिफ़ाफ़ा में रवाना करूंगा। इन्शा अल्लाह तआला। आप की तबलीग़ और उस के बारे में कशमकश मालूम हुई। अल्लाह तआला आप को कामयाब फ़रमाए और इस संघर्ष को क़ुबूल फ़रमाए। आमीन। तबलीग़ हक़ीक़त में यही है।

वह तबलीग़ ही क्या जिस में विरोध न हो। हक़ के प्रचारक के लिए फूलों की सेज नहीं होती बल्कि उस को काटों पर चलना होता है। वह तबलीग़ जिस से सब खुश रहें, हक़ीक़त में तबलीग़ ही नहीं, वह तो एक क़िस्म की सियासत है। अल्लाह ने यह नेमत आप को नसीब फ़रमाई है। यह उस का एहसान है, आप घबराएं नहीं।

ان الله مع الصابرين

फ़क़त

खा़कसार मसऊद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत जनाब नवाब साहब मख़दूमी व मुकर्रमी

अस्सलाम आलैकुम

(चक लाला 13 अप्रैल 1962)

अम्मा बाद! 10– अप्रैल को एक पत्र लिखा है, आज आप के बाक़ी सवालों के जवाब लिख रहा हूं।

सवाल 3– हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा में हज़रत शाह वलीउल्लाह साहब रह0 तहरीर फ़रमाते हैं। कि चारों इमामों के तरीक़े सुन्नत हैं और हर एक के पास तर्क मौजूद हैं। इस लिहाज़ से तो हंफ़ी तरीक़ा भी सुन्नत हुआ और उस पर अमल करना भी जायज़ हुआ।

इमाम हक़ पर थे लेकिन मुक़ल्लिद हक़ पर नहीं

जवाब– इस में शक नहीं है कि चारों इमामों ने जिस उसूल पर मसाइल की बुनियाद रखी वह उसूल सुन्नत है। क्योंकि उन लोगों ने मसाइल को कुरआन व हदीस की रोशनी में हल किया और कुरआन व हदीस को छोड़ कर किसी और व्यक्ति के कथन को दलील नहीं बनाया, न उस को हुज्जत समझा। अतः उन का यह तरीक़ा बे शक सुन्नत था और वे चारों हक़ पर थे। रहिमा हुमुल्लाह।

लेकिन इस के मायना यह नहीं कि उन से ग़लती नहीं हुई। बेशक हुई और इस ग़लती के सुबूत में तर्क निम्न भी हैं।

मुजतहिद ग़लती से पाक नहीं हैं

फ़िक़्ह का जाना माना उसूल

المجتهد قد يخطئ ويصيب

अर्थात मुजतहिद से ग़लती भी होती है और वह सही बात भी कहता है। अतः इस उसूल की बिना पर उन मुजतहिदीन से ग़लती का होना संभव है।

2– अंबिया अलैहिमुस्सलाम के अलावा कोई मासूम नहीं होता, क्योंकि दूसरे लोगों की पुश्त पर अल्लाह की वहय की रहनुमाई नहीं होती, अतः ख़ता का होना निश्चित है।

3– चारों इमामों के कथनों में हराम व हलाल का फ़र्क़ पाया जाता है। जैसेः

अः दारुल हर्ब में काफ़िर से सूद का लेन देन करना हंफ़ी मज़हब में हलाल और दूसरे मज़ाहिब में हराम।

बः हैवान की बैअ सलम हंफ़ी मज़हब में हराम, दूसरे में हलाल।

जः ज़बरदस्ती की तलाक़ हंफ़ी मज़हब में हो जाती है। दूसरे मज़ाहिब में हराम है, नहीं होती।

दः बिज्जू, गोह, घोड़ा, मेंढक, मुर्दा मछली जो पानी पर तैरें, हंफ़ी मज़हब में हराम और दूसरे मज़ाहिब में हलाल।

हः हिबा की हुई चीज़ हंफ़ी मज़हब में संतान से वापस ली जा सकती है। दूसरे मज़ाहिब में नहीं ली जा सकती।

वः कुरआन की शिक्षा की मज़दूरी हंफ़ी मज़हब में हराम और दूसरों

में हलाल।

ज़: रान खोलना हंफ़ी मज़हब में हराम, हंबली मज़हब में हलाल।

ह: लिंग छू जाने से वुजू हंफ़ी मज़हब में नहीं टूटता, शाफ़अी में टूट जाता है।

त: तवाफ़ के लिए हंफ़ी मज़हब में पाकी शर्त नहीं, शाफ़अी और हंबली में शर्त है।

य: सदक़तुल फ़ितर हंफ़ी मज़हब में काफ़िर गुलाम पर फ़र्ज़ है, शाफ़अी में फ़र्ज़ नहीं।

क: बिना वली के निकाह हंफ़ी मज़हब में जायज़ है। शाफ़अी में बातिल।

मतलब यह कि हलाल व हराम का फ़र्क़ कभी सुन्नत नहीं हो सकता।

सुन्नत तो यह है कि जो चीज़ रसूलुल्लाह सल्ल0 ने हलाल की क़यामत तक वह चीज़ हर मुसलमान के लिए हलाल है और जिस चीज़ को हराम किया वह हर मुसलमान के लिए हराम है। अब ज़ाहिर है कि एक ही चीज़ एक साथ हलाल और हराम नहीं हो सकती। अतः किसी न किसी इमाम से ग़लती का सुदूर लाज़मी है और जब मामला यहां आ पहुंचा कि एक न एक इमाम से ग़लती ज़रूर हुई है तो अब हर मुसलमान का यह फ़र्ज़ हो जाता है कि वह यह मालूम करे कि किस से ग़लती हुई अर्थात अल्लाह के हुक्म से वह कुरआन व हदीस की तरफ़ रुजू करे और जो ग़लती मालूम करके उस को तर्क करदे या क़रआन व सुन्नत का अनुसरण करे यह है इमामों का तरीक़ा और इस तरीक़ा के सुन्नत होने में कुछ सन्देह नहीं और जो व्यक्ति इस के ख़िलाफ़ चलता है वह हराम काम काता है। इमामे बर हक़ हज़रत इमाम इबु हनीफ़ा रह0 तो

यहां तक फ़रमाते हैं: لا يحل لاحد ان يأخذ بقولى مالم يعلم من أين قلتة अर्थात किसी व्यक्ति के लिए यह हलाल नहीं (अर्थात हराम है) कि मेरे कथन को अख़्तियार करे, जब तक उसे यह न मालूम हो कि मैं ने कहां से कहा है।

(मुक़दमा उम्दतुर्रिआया फी हल्ले शरहिल विक़ाया पृ0 9)

इस कथन के आगे रईसुल अहनाफ़ मुहम्मद बिन अब्दुस्सत्तार क़ादरी लिखते हैं:

"इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ने तक़्लीद की तरफ़ जाने से मना किया और दलील की मारफ़त की तरफ़ दावत दी।"

(मुक़द्दिमा उम्दतुर रिआया पृ0 9)

मानो इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के कथन से ही तक़्लीदन किसी चीज़ को मानना हराम हो गया अतः मुक़ल्लिदीन का तरीक़ा हराम हुआ और इस लिहाज़ से वह सुन्नत नहीं हो सकता। अतः खुलासा यह हुआ कि इमामों का तरीक़ा सुन्नत है और मुक़ल्लिदीन का तरीक़ा बिदअत और स्वयं इमामों का मना किया हुआ है।

फ़िक़ा हंफ़ी के गन्दे मसायल और इमाम अबु हनीफ़ा रज़ि0 की अलहदगी

शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 के बयान का जो नतीजा आप ने निकाला है कि हंफ़ी तरीक़ा भी सुन्नत हुआ" यह सहीह नहीं। इस लिए कि मौजूदा हंफ़ी मज़हब स्वयं इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के उसूल के ख़िलाफ़ है। और इस में ऐसी ऐसी गन्दगियां हैं कि अगर इमाम साहब रह0 ज़िन्दा होते तो इन मसायल बल्कि पूरे मज़हब से अपनी बेज़ारी का ऐलान फ़रमाते कुछ मकरूह

मसाइल देखिए (आप ने सतर्क जवाब के लिए इरर्शाद फ़रमाया है। इस लिए दिल पर जब्र करके यह मसाइल लिख रहा हूं)

ولو وطى ميتة أو بهيمة أو فى غير فرج وهو التفخيد أو قبل أو لمس إن أنزل قضىٰ وإلا فلا ولو أكل لحماً بين أسنانه مثل حمصة قضىٰ فقط وفى أقل منها لا.

अर्थात अगर मुर्दा औरत या जानवर से संभोग करे या ...... के इलावा अर्थात रान में करे या बोसा ले या छूऐ अगर इंज़ाल हो तो रोज़ा क़ज़ा करे, वर्ना नहीं, और अगर दांतों के बीच लगा हुआ गोश्त चने के बराबर भी खाले तो केवल क़ज़ा करे और अगर चने से छोटा हो तो क़ज़ा भी नहीं।

(शरह विक़ाया पहला भाग पृ0 312)

وقدر الدرهم من نجس غليظ كبول و دم وخمر وخرء دجاجة ...... وما دون ربع ثوب مما خف كبول فرس ...... عفو ......

अर्थात नमाज़ी के कपड़े में अगर दिरहम के बराबर निजासते ग़लीज़ा जैसे पेशाब, खून, शराब और मूर्गी की बीट लग जाए और निजासत ख़फ़ीफ़ा जैसे घोड़े का पेशाब चौथाई कपड़े तक माफ़ है।

(शरह विक़ाया पहला भाग पृ0 139)

फिर आगे जाकर दिरहम का तख़मीना हथेली की चौड़ाई बताया है।

(٣) لا وطى بهيمة بلا انزال.

जानवर से वती करे तो बिला इंज़ाल गुस्ल फ़र्ज़ नहीं।

(शरह विक़ाया पृ0 83)

आदि आदि कहां तक लिखूं।

क्या यह मसाइल सुन्नत हैं? क्या यह मसाइल इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के हैं? कदापि नहीं इन जैसे मसाइल को इस्लाम समझना या सुन्नत समझना, इमाम साहब रह0 का और इस्लाम का अपमान करना है। शाह साहब रह0 का मतलब केवल इतना है कि इमामों का तरीक़ा सुन्नत था न यह कि मुक़ल्लिदीन का गढ़ा हुआ मज़हब सुन्नत है। सुनिए शाह साहब रह0 तक़्लीद के बारे में क्या फ़रमाते हैं।

1– व ख़ूद रा मुक़ल्लिद महज़ बूदन हर्गिज़ रास्त नमी आयद व कारे नमी कुशायद। अर्थात मुक़ल्लिद मात्र होना कदापि रास्त नहीं आता और न उस से कार बर आरी होती है।

(मुतरकुल हदीद पृ0 44, इज़ालतुल ख़िफ़ा पृ0 257)

2– अगर यहूद का नमूना देखना चाहते हो तो उलमा–ए–सू (बिगड़े हुए उलमा) को देखो जो दुनिया के तालिब हैं और सल्फ़ की तक़्लीद के आदी हो गए हैं और किताब व सुन्नत से मुंह मोड़ते हैं ...... तमाशा कर्द गोया यह वही हैं।

(अलफ़ौज़ुल कबीर)

3– ولم يأت قرن بعد ذلک الا وهو أكثر فتنة وأوفر تقليداً. इस के बाद में जो ज़माना आता गया, फ़ितना ज़्यादा होता गया और तक़्लीद में ज़्यादती होती गई।

(इंसाफ़, मुतरकुल हदीद पृ0 20)

4– फ़रोई मसाइल में मुहद्दिसीन, जो हदीस व फ़िक़ह में जामे हैं, की पैरवी करो और हमेशा फ़िक़्ही तफ़रीआत को किताब व सुन्नत पर पेश करो। जो मुवाफ़िक़ हो उसे क़ुबूल करलो, वर्ना कहने वाले पर लौटा दो। उम्मत को कभी भी इस बात से इस्तिग़ना हासिल नहीं कि वह मुजतहिदात को किताब व सुन्नत पर पेश करें

और उन ख़ुश्क फ़ुक़हा की बात को जिन्होंने एक आलिम की तक़्लीद को दस्तावेज़ बना रखा है और को छोड़ रखा है, न सुनो, न उन की तरफ़ ध्यान करो, बल्कि उन की दूरी से अल्लाह की समीपता तलाश करो।

("वसीयत नामा" शाह वलीउल्लाह साहब रह0 पृ0 2–3)

बुज़ुर्गों की ग़लती

यहां तक मैंने यह बताने की कोशिश की है कि शाह साहब रह0 का इमामों के बारे में क्या ख़्याल है और मुक़ल्लिद के बारे क्या, इमामों को वह हक़ पर समझते हैं। लेकिन मुक़ल्लिदीन को नहीं। इस जवाब के बाद मैं एक और जवाब इसी शीर्षक के तहत भी देना ज़रूरी समझता हूं। देखिए हक़ हक़ है और जब आप सूझ बूझ की वजह से हक़ को पहचान लें, हक़ आप को मिल जाए और आप उस पर जम जाऐं तो फिर उस हक़ के ख़िलाफ़ कोई कुछ न कहें। आप कदापि उस तरफ़ ध्यान न दें। ऐसा कौन सा बुज़ुर्ग है जिस से ग़लती या कमी नहीं हुई। अगर किसी बुज़ुर्ग की ग़लती से हम भी ग़लती का शिकार हो जाऐं तो यह शैतानी वसवसा होगा। यह भी तक़्लीद ही होगी। अतः अगर शाह वलीउल्लाह साहब रह0 ने मान लें ऐसी बात कही है तो बस आप का फ़र्ज़ इतना है कि आप यह कहें अल्लाह उन्हें माफ़ फ़रमाए, हम उन की यह बात तस्लीम नहीं करते, क्योंकि यह हक़ से टकराती है और हम हक़ को किसी हालत में नहीं छोड़ सकते।

फिर शाह वलीउल्लाह साहब रह0 के बारे में यह भी कहा जा सकता है कि हंफ़ी घराने में पैदा हुए, धीरे धीरे तक़्लीद से विमुख हुए। शायद शुरू दौर में तक़्लीद के ख़िलाफ़ सख़्ती अख़्तियार नहीं

की होगी। बाद में जैसा कि "वसीयत नामा" के वाक्य **से मालूम** होता है, बहुत सख़्ती अख़्तियार कर ली।

सवाल 4– क्योंकि वह तक़लीद के समर्थक थे?

मौलवी अशरफ़ अली थानवी साहब रह0 की किताबों की हैसियत

जवाबः यूं तो हर किताब में कोई न कोई अच्छी बात मिल ही जाती है। थानवी साहब रह0 की किताब में कोई ठोस बात मुश्किल ही से मिलती है। ज़ईफ़ और मौज़ूअ़ हदीसें भी नक़्ल कर जाते हैं, फ़िक़ह के ग़लत और शर्म के मसाईल बड़ी बे बाकी से नक़्ल करते हैं और वह भी जवान लड़कियों के अध्ययन के लिए। हंफ़ी मज़हब के खंडन के लिए उन की किताबें मुफ़ीद होंगी। इस लिए कि ग़लत और निर्लज्ज मसाइल को उर्दू में ढालने में उन का बहुत बड़ा हिस्सा है। वैसे तो हिदाया, शरह विक़ाया, दुर्रे मुख़तार के अनुवाद हो चुके हैं लेकिन वह एक लम्बे समय से बहुत कम हैं और फिर उन की क़ीमतें भी अधिक हैं।

सवालः क्या इमाम ग़ज़ाली रह0 की लिखी **हुई कुतुब भी** अध्ययन योग्य हैं?

ग़ज़ाली की किताबें

जवाबः इमाम ग़ज़ाली रह0 की किताबें बहुत अच्छी है, बड़ी दिलकश हैं। दिल को ताज़ा करने वाली हैं। हां उन की कुछ किताबों में जैसे अहयाउल उलूम में कई कमियां भी है कि ज़ईफ़ बल्कि मौज़ूअ़ हदीसें भी नक़्ल कर जाते हैं। उलमा–ए–वक़्त ने उन

की ज़िन्दगी ही में उन पर बड़ी सख़्त चोट की और उन को सही बुख़ारी पढ़ने का मशवरा दिया। फिर बाद में वह सहीह बुख़ारी की तरफ़ मुतवज्जह हुए, यहां तक कि मौत के समय सही बुख़ारी उन के सीने पर थी। "अहयाउल उलूम" को उस की तख़रीज के साथ पढ़ा जाए तो यह दोष दूर हो सकता है, क्योंकि तख़रीज में हर हदीस पर बहस की गई है।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 को शुरू इस्लाम की नमाज़ याद रही

अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 को अदमे रफ़अ यदैन की हदीस के बारे एक बात याद आई। वह यह कि उन की नमाज़ में मंसूख़ शुदा या शुरू इस्लाम की कुछ बातें भी शामिल हो गई हैं। मालूम नहीं उन्हें भूलने का पता हुआ या नहीं और अगर हुआ तो बुढापे में या उस से पहले ही कुछ बातों को भूल गए।

इमाम बैहेक़ी लिखते है:

> **ففی حدیث ابن ادریس دلالة علیٰ ان ذلک کان فی صدر الاسلام کما کان التطبیق فی صدر الاسلام ثم سنت بعده السنن و شرعت بعده الشرائع حفظها من حفظها و اداها فوجب المصیر الیها.** (بیهقی)

> इब्ने इदरीस की हदीस में इस बात की दलालत है कि अदमे रफ़अ शुरू में सुन्नत था जिस तरह शुरू इस्लाम में ततबीक़ थी। फिर सुन्नतें और शरअ बाद में बनते चले गए तो जिस ने उन को याद रखा उस ने हक़ीक़त में नमाज़ को याद रखा और उस को फैलाया। बस इसी तरफ़ रुजूअ़ करना चाहिए।

एक और जगह तहरीर फ़रमाते हैं:

قد يكون ذلك فى الابتداء قبل ان يشرع رفع اليدين فى الركوع ثم صار التطبيق منسوخاً وصار الامر فى السنة الىٰ رفع اليدين عند الركوع ورفع الرأس منه. (معرفت السنن)

अर्थात ततबीक़ शुरू इस्लाम में शर्त केवल थी और उस समय तक रफ़उल यदैन मशरूअ़ नहीं हुआ था। फिर ततबीक़ निरस्त हो गई और रुकूअ़ से पहले और रुकूअ़ के बाद रफ़अ यदैन का हुक्म दिया गया।

(मारिफ़तुस्सुनन)

सब छोटे बड़े को सलाम कह दीजिएगा।

फ़िक़ह

ख़ादिम मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

मोहतरम जनाब मसऊद साहब

अस्सलाम आलैकुम

आप का पत्र मिला। पढ़ कर बड़ी खुशी हुई। मेरा इरादा था कि आप के दूसरे पत्र के वसूल होने के बाद फिर आप को पत्र लिखूंगा लेकिन रात एक अप्रिय घटना घटी। एक व्यक्ति कुछ लोगों के साथ इशा की नमाज़ के बाद मेरे पास मस्जिद में आया और बात शुरू हुई। उस ने निहायत बद अख़लाक़ी से गुफ़तगू शुरू की। जिस का मुझे अब तक दुख है। उस ने कहा कि हमारी हंफ़ी फ़िकह का हर हर मसला कुरआन व हदीस के अनुसार है। तू एतेराज़ कर, मैं तेरे हर मसला का जवाब कुरआन व हदीस से दूंगा। मैंने कहा तूं तो ग़ैर मुक़ल्लिद है तुझ को कुरआन व हदीस से क्या वास्ता और तुझ को कैसे मालूम हुआ कि हंफ़ी फ़िक़ह का हर मसला कुरआन व हदीस के अनुसार है। क्या तूने तहक़ीक़ किया है। क्योंकि मुक़ल्लिद का काम तो अंधे की तरह अपने इमाम के पीछे चलना है। अगर तूने तहक़ीक़ कर ली है कि सारे मसअले कुरआन व हदीस के अनुसार हैं तो फिर तू मुहक़्क़िक़ हुआ। उस ने कहा कि मैंने छः साल हदीस पढ़ी है। उस्तादों से हदीस सीखी है। मैंने कहा कि यह मेरे सवाल का जवाब नहीं है अगर तू हक़ पर है तो फिर देर किस बात की है। झट से कोई आयत या हदीस दलील में पढ़ दे जिस से लोगों को पता चल जाए कि हक़ीक़त क्या है।

उस ने कहा कि हमारा मज़हब तो पूरा दलील से भरा हुआ है, मगर कुरआन व हदीस तू क्या समझेगा मैं तो अरबी इबारत पढ़ूंगा और तू उर्दू जानता है तो किस तरह यह बात तेरी समझ में आ सकती है। मैंने कहा कि मैं इंशा अल्लाह अरबी समझ लूंगा, लेकिन जल्दी से वह दलील पढ़ दे जिस में चारों इमामों की तक़्लीद फ़र्ज़ की गई है या वाजिब। हक़ किसी बात से नहीं डरता। अगर तू हक़ पर है तो दलील देदे। मुझे इधर उधर ले जाने की कोशिश न कर। कहने लगा कि जाहिल मैं तो तेरी इस्लाह करने के लिए आया हूं कि तुझे राहे रास्त दिखलाऊं और मैं आलिम हूं। तुझ को मेरी बात मानना पड़ेगी। क्योंकि यह क़ायदा है कि अपने से अधिक इल्म वाले की बात मानी जाए और आलिमों से पूछने के लिए हुक्म भी कुरआन में मौजूद है।

कहने लगा। देख जब[1] हज़रत मुआज़ रज़ि0 मुहिम पर जा रहे थे तो हुज़ूर सल्ल0 ने फ़रमाया कि ऐ मुआज़ रज़ि0 तू वहां किस तरह करेगा, अर्ज किया या रसूलुल्लाह सल्ल0! मैं कुरआन में देखूंगा। फ़रमाया, अगर वहां न मिले तो, अर्ज़ किया फिर मैं आप की हदीस देखूंगा। फ़रमाया वहां भी हुक्म न मिले तो, अर्ज किया कि फिर मैं सहाबा रज़ि0 या नेक लोगों से मशवरा करूंगा। फ़रमाया वहां भी हुक्म न मिले तो अर्ज़ किया कि फिर मैं अपने क़यास से काम लूंगा। हुज़ूर सल्ल0 ने फ़रमाया। मरहबा मेरी उम्मत में ऐसे लोग मौजूद हैं आदि। तो इस से साबित हुआ कि मुजतहिद की राय पर अमल करना ज़रूरी है जिस से तक़्लीद साबित है। मैं ने कहा कि हज़रत आप को क़सम है ज़रा सच बताना क्या इस हदीस में हुज़ूर स0 ने चार इमामों के नाम लिए हैं। क्या इस हदीस में किसी भी इमाम या फ़िक़्ह का नाम है। फिर किस तरह

[1] यह हदीस मौज़ूअ यानी घड़ी हुई है।

यह जाहिल तक़्लीद का सुबूत इस हदीस से दे रहा है कहने लगा कि तू क्या मुहद्दिस है जो हदीस का मतलब निकाल रहा है और पन्द्रह दिन हदीस पढ़ कर इमाम आज़म रह0 की बराबरी का दावा कर रहा है। मैंने कहा यह तो मुझ पर बुहतान है।

मैंने कभी भी यह नहीं कहा कि मैं इमाम साहब रह0 की बराबरी का दावा कर रहा हूं मैं तो उन को अपना इमाम समझता हूं और बाक़ी तीनों, इमाम शफ़अ़ी रह0, इमाम मालिक रह0, और इमाम अहमद रह0, उन को भी इमामा समझता हूं और उन जैसा जो कोई बन्दा है, मुत्तक़ी परहेज़गार है वह भी मेरे नज़दीक नेक है। हर नेक आदमी की इज्ज़त करता हूं और सम्मान करता हूं लेकिन तेरी तरह सब नेक आदमियों का इन्कार करके एक के पीछे नहीं पड़ जाता हूं। मैं इमाम साहब रह0 का मुक़ल्लिद हूं, उन के कथन पर अमल करता हूं। उन्होंने फ़रमाया मेरा जो काम क़ुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ हो उस का रद्द कर देना। सहीह हदीस ही मेरा मज़हब है। बस जो बात सहीह हदीस में मुझे मिल जाती है, मैं इमाम साहब के कथन को इस के मुख़ालिफ़ देख कर छोड़ देता हूं फिर इस में झगड़े की क्या बात है? तुझ को किस ने दावत दी थी। क्या तुझ को मैंने मुनाज़िरा की दावत दी थी। फिर तू क्यों यहां मुनाज़िरा की ग़रज़ से आया। अब आ गया है तो सुन ले।

जो चीज़ क़ुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ होगी। वह मसअला जो फ़िक़ह में क़ुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ है, वह कदापि मुझे मंजूर नहीं है। ऐसी मन गढ़त बातों से मैं अल्लाह की पनाह मांगता हूं। कहने लगा, सारा फ़िक़ह क़ुरआन व हदीस के अनुसार है, कोई मसअला क़ुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ हमारे फ़िक़ह में नहीं है और फ़िक़ह से इन्कार करना कुफ़्र है, तू कोई मसअला बता मैं उस की दलील क़ुरआन व हदीस से दूंगा। मैंने कहा कि एक दलील तो तू

अब तक नहीं दे सका और दलील क्या देगा? कहने लगा कि हुज़ूर सल्ल0 ने स्वयं इमाम आज़म रह0 की तारीफ़ की है। हुज़ूर सल्ल0 ने पेश गोई फ़रमाई है कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 मेरी उम्मत का चराग़ हैं, इस से बढ़ कर क्या सुबूत होगा। मैंने कहा कि यह हदीस जो तू बयान कर रहा है, एक तो यह देखना पड़ेगा कि यह हदीस भी है या नहीं और इस पर उलमा किराम ने क्या लिखा है। लेकिन ख़ैर यह हदीस जो तूने बयान की है। इस में यह कहां है कि क़यामत तक के लिए इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की तक़्लीद फ़र्ज़ या वाजिब है? उस में लिखा है कि कुरआन व हदीस को छोड़ दो और सिर्फ़ फ़िक़ह हंफ़ी की फ़रमांबरदारी करो। ऐ लोगो, ज़रा सच सच बताना, क्या इस में तक़्लीद का शब्द या ज़िक्र है? हुज़ूर सल्ल0 का तरीक़ा है। क्या इमाम अबु हनीफ़ा रह0 सहाबी रज़ि0 थे जो तू इन की तक़्लीद को फ़र्ज़ और वाजिब कह रहा है। कहने लगा कि उम्मत का इजमा इन चारों मज़हबों पर हो गया है। उन की तक़्लीद के सिवा कोई चारा नहीं।

मैंने कहा कि किस ने इज्तिहाद का दरवाज़ा बन्द किया और इजमा–ए–उम्मत किस को कहते हैं। इजमा–ए–उम्मत किन लोगों को माना जाए। क्या मुक़ल्लिदीन का इजमा उम्मत के लिए हुज्जत है। अगर फ़र्ज़ कर लिया जाए कि चारों इमामों की तक़्लीद फ़र्ज़ व वाजिब है तो फिर तूने तीन इमामों की तक़्लीद को क्यों छोड़ दिया है, उन को बर हक़ कहता है, उन को सहीह रास्ता पर मानता है तो फिर उन के रास्ते पर क्यों नहीं चलता। क्यों उन के रास्ते से कतराता है। अगर मैं फ़ज्र की नमाज़ शाफ़ओ मसलक और ज़ोहर की नमाज़ मालिकी मसलक और असर की हंफ़ी मसलक की तरह अदा करूं तो यह जाइज़ है या ना जाइज़? कहने लगा बिल्कुल ना जाइज़ है। तुझ को तस्लीम सब को करना है लेकिन अमल केवल

हंफ़ी मसलक पर जाइज़ है यह मसअला उसूल फ़िल एतेक़ाद और उसूल फ़िल अमल से संबंधित है, तू जाहिल क्या समझेगा? इस की मिसाल ऐसी है कि एक व्यक्ति नमाज़ से इन्कार करता है कि नमाज़ जायज़ नहीं है, या नमाज़ से इन्कार नहीं करता लेकिन नमाज़ नहीं पढ़ता। अर्थात नमाज़ को तस्लीम करता है लेकिन अमल नहीं करता तो वह हक़ पर है और मुसलमान है।

इसी तरह शाफ़अी आदि नुबूवत और रिसालत में हक़ पर हैं लेकिन अमल में भिन्न हैं और शाफ़अी की नमाज़ में और हमारी नमाज़ में क्या फ़र्क़ है? मैंने कहा कि तुझ को अभी यह भी पता नहीं कि उन की नमाज़ का तरीक़ा क्या है तो फिर तू किस तरह मेरे पास मुनाज़िरा करने आ गया। देख मैं तुझ को बतलाता हूं कि वह नमाज़ में रफ़अ यदैन करते थे कहने लगा रफ़उल यदैन निरस्त हो गया है। यह अमल वह है जिस को हुज़ूर ने कभी किया और कभी नहीं किया। मैंने कहा कि यह फ़ेल किस ने निरस्त किया। वह कौन सी रिवायत है और हदीस है जिस में यह लिखा है कि निरस्त हो गया है और निरस्त शुदा काम को शाफ़अी रह0 ने कैसे क़ुबूल कर लिया। और तेरे नज़दीक जब यह काम निरस्त है तो फिर तू इस के करने वालों को हक़ पर क्यों कहता है, यह क्या अंधेर है? कहने लगा। उन का यह काम मकरूह है। हम उसूल फ़िल अमल से बहस नहीं करते क्योंकि हम अमल को ईमान का अंश नहीं समझते। मैंने कहा तू आमाल को ईमान का अंश नहीं समझता, लेकिन तक़्लीद को जिस की कोई दलील तेरे पास नहीं है ईमान का अंश समझ कर फ़र्ज़ और वाजिब क़रार देता है और तेरे पास रफ़अ यदैन निरस्त होने की क्या दलील है? ज़रा जल्दी से वह आयत या हदीस पढ़ दे, मगर पहली ही दलील तू अभी तक नहीं पढ़ सका तो दूसरी दलील क्या

1- सहाबी रज़ि0 की तक़्लीद भी फ़र्ज़ या वाजिब नहीं।

पढ़ेगा। अगर तेरे सारे बड़े जमा हो जाऐं तो भी कोई दलील नहीं ला सकते। कहने लगा, हदीस में पचासों दलीलें निरस्त के बारे में मौजूद हैं लेकिन इस समय मुझे कोई हदीस याद नहीं है। मैंने कहा। जब तुझ को स्वयं ही कोई चीज़ याद नहीं तो दूसरों की इस्लाह कैसे करेगा? कहने लगा कि दो दिन की छूट दे कि मैं तिर्मिज़ी शरीफ़ आदि देख कर तुझ को हदीस बतलाउंगा। मैंने कहा, दो दिन नहीं तुझ को दो महीने की छूट है खूब दिल खोल कर तलाश कर लेकिन सहीह हदीस जिस पर कोई जिरह न की गई हो वह मुझ को दिखलाना। कहने लगा तू तो मादर ज़ाद नंगा है, तुझ को हदीस बता कर क्या फ़ायदा तेरी समझ में कैसे आएगा। इस के बाद वह मुझे गालियां देने लगा।

मैंने कहा कि ख़ैर तू जितनी चाहे बद अख़लाक़ी कर लेकिन मैं कभी तेरी तरह बद अख़लाक़ नहीं बनूंगा। कहने लगा तू शाफ़ओ़ी शाफ़ओ़ी करता है। तुझ को मालूम है वह कौन थे। वह हमारे इमाम आज़म रह0 के शागिर्द और इमाम मुहम्मद रह0 के शागिर्द थे। मैंने कहा कि इस के बावजूद उन्होंने फ़िक़्ह हंफ़ी क़ुबूल नहीं की बल्कि अपनी अलग फ़िक़्ह और अलग मज़हब बना लिया। तू इन बातों को छोड़ और सीधी तरह से दलील दिखला दे। अगर हक़ तेरे पास है तो इंशा अल्लाह मैं क़ुबूल कर लूंगा। नहीं तो तू तस्लीम कर ले। कहने लगा कि तेरा क्या भरोसा, कल तक हम तुझ को एकेश्वर वादी समझ रहे थे। अपनी जमाअत का आदमी समझ रहे थे लेकिन तू तो ग़ैर मुक़ल्लिद निकला, कल तू मुन्किरे हदीस बन जाए तो क्या भरोसा। हमारे बाप दाद इस फ़िक़्ह पर अमल करते आए हैं, इस फ़िक़्ह से इन्कार करके कुफ़्र पर कैसे ज़िद की जाएगी। मैंने कहा– क्या तू ग़ैर मुक़ल्लिद को मुसलमान नहीं समझता, कहने लगा मुसलमान समझता हूं।

मैंने कहा कि क्या सहाबा किराम रज़ि0 आदि इमामों से पहले के लोग तक़्लीद करते थे? कहने लगा। वे तो सहाबी रज़ि0 थे, उन के अनुसरण का हमें तो हुक्म दिया गया है तू तो उस की ना फ़रमानी कर के क्यों हम को मजबूर करता है कि हम इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की तक़्लीद करें क्या इमाम अबु हनीफ़ा रह0 सहाबी रज़ि0 थे? कहने लगा वह अरबी दां थे, अहले ज़बान थे, कुरआन व हदीस को वही समझ सकते थे, क्योंकि यह किताबुल हिकमत है, इस में ज़ेर ज़बर आदि का फ़र्क़ है, इस लिए हम पर उन की तक़्लीद फ़र्ज़ है। मैंने कहा कि क्या उम्मत मुहम्मदी में सिवाए अबु हनीफ़ा रह0 के और किसी ने कुरआन नहीं समझा? तू किस दलील की बिना पर कहता है कि वे अहले ज़बान थे, तुझ को अभी तक यह पता नहीं कि वह कहां के रहने वाले थे और अहले ज़बान किस को कहते हैं? तू जाकर पहले अपनी फ़िक़ह को एक तरफ़ रख दे। फिर दीने इस्लाम का अज़ सरे नौ मुताला कर। कुरआन व हदीस का इल्म सीख़ कर मेरे पास आना। कहने लगा कि तू अपने सारे आलिमों को मेरे पास ले आ, मैं उन सब जाहिलों को काफ़ी हूं। मैं फ़िक़ह के हर हर मसअले और हर एक कथन के लिए कुरआन की आयत और हदीस पढ़ूंगा।

मैंने कहा कि तू मुझे अब तक एक दलील न दे सका, तो अब तक यह भी न समझा सका कि चार इमाम बर हक़ हैं तो फिर एक के गले का बार हो जाना किस के हुक्म से? किस दलील की बिना पर फ़र्ज़ और वाजिब हुआ। तो भला तू मेरे उलमा से क्या बहस कर सकता है? कहने लगा कि इस की दलील यह है कि जिस तरह चार किताबें बर हक़ हैं लेकिन अमल केवल कुरआन पर है, उसी तरह चार इमाम बर हक़ हैं लेकिन अमल केवल अबु हनीफ़ा रह0 पर है। उस के साथियो ने इस दलील पर वाह वाह की। मैंने कहा कि

कुरआन आने के बाद पहली किताबें अर्थात उन की शरीअत निरस्त हो चुकी। हुजूर स0 ने फ़रमाया कि अगर हज़रत मूसा अलैहि0 भी मेरे ज़माने में होते तो मेरा अनुसरण किए बिना उन को चारा न था लेकिन वह शरीअतें हुक्मे ईलाही से मंसूख़ हुई हैं और कुरआन और शरीअत मुहम्मदी अल्लाह के हुक्म से शुरू हुई अब तू यह बतला कि तीन इमाम की तक़्लीद किस के हुक्म से निरस्त हुई?

और इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की तक़लीद किस के हुक्म से शुरू हुई और क्या उन चारों इमामों की तक़लीद के लिए कोई वहय आई थी? अगर आई थी तो कौन से इलाह ने किस नबी पर नाज़िल फ़रमाई और कौन वहय ले कर आया और तू तो कहता है कि चारों बर हक़ हैं अमल एक पर है और मिसाल किताबों की देता है। कुरआन किताबे मुक़द्दस पहली किताबों के बाद नाज़िल हुई। अगर ख़्वाह मख़ाह इमामों को भी इसी तरह मान लिया जाए तो इमाम अहमद रह0 आख़िरी इमाम हैं तो अब इमाम अहमद रह0 की तक़लीद होनी चाहिए न कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की। कहने लगा कि कौन कहता है कि पहले की शरीअतें ख़त्म हो गई हैं। वे ख़त्म नहीं हुई हैं बल्कि वह सब कुरआन में आ गई हैं। मैंने कहा कि अगर ऐसा ही है तो फिर इमाम अहमद रह0 की फ़िक़ह में सब की फ़िक़ह आ जानी चाहिए। फिर वह बिगड़ गया और गालियां देने लगा। फिर एक दूसरे आदमी से मुख़ातिब हुआ। कहने लगा कि अंधे के आगे किताब पेश करना बेकार है।

फिर एक मिसाल थानवी की बयान की हुई सुनाने लगा कि एक बार कुछ अंधे हाथी देखने गए, किसी ने दुम पर हाथ फेरा समझा यही हाथी है। किसी ने कान पर हाथ फेरा समझा कि यही हाथी है। किसी ने सूंड पर हाथ फेरा समझा यही हाथी है। चूंकि अंधे थे इस लिए देख नहीं सकते थे, अगर आंखें होतीं तो मालूम हो जाता कि

सब के जोड़ को हाथी कहते हैं और सब अंगों के मिलाने से हाथी बनता है। मैंने कहा कि बस तू अपने इस कथन पर क़ायम रह चारों इमामों की पैरवी कर पूरा इस्लाम हासिल होगा मगर तू तो अंधा है, आंखें होतीं तो देख सकता। फिर कहने लगा कि मैं आलिम हूं तुझ को चाहिए कि मुझ से पूछ के अपना दीन सही कर ले। मैंने कहा कि तू तो अजीब बे वकूफ़ है, मेरी किसी बात का जवाब तो देता नहीं और अपने को आलिम कह रहा है तो इसी बहस में रात के लगभग 2 बज गए। मस्जिद में एक शोर हंगामा मचा दिया। फिर में घर आ गया और वह भी रात ही को अपने गांव वापस चला गया।

मुझे रात भर नींद नहीं आई। मैंने सोचा कि मेरा वह नया साथी शायद अब नहीं आएगा। मगर अल्लाह जल्ला शानुहु ने इस का ईमान और मज़बूत फ़रमाया और वह दूसरे दिन आया और कहने लगा कि रात की बहस से मुझे यक़ीन हो गया कि इस के पास सिवाए बकवास के कुछ नहीं है। यह सुन कर मुझे बड़ी ख़ुशी हुई। अल्लाह तआला का शुक्र व एहसान है। यह सब कुछ उस की ही कृपा है। आज एक तीसरा आदमी भी हमारी जमाअत में दाख़िल हुआ है। अल्लाह तआला सब मोमिनीन को सीधे रास्ते पर चलाएं। आमीन। अब आख़िर में दो बातों का जवाब चाहता हूं। शाह वलीउल्लाह साहब रह0 ने अपनी किताब "हुज्तुल्लाहुल बालिग़ा" भाग दो (नमाज़ के बयान) में लिखा है कि नमाज़ के चारों तरीक़ा सुन्नत हैं। इस के मायना यह हुए कि हंफ़ियों की नमाज़ सुन्नत के अनुसार है। उन्होंने यह भी लिखा है कि हर एक के पास मज़बूत दलील हैं।

2–उन्होंने दूसरे भाग में तक़लीद के बयान में यह लिखा है कि उन चारों इमामों की तक़लीद और उन मज़ाहिब पर उम्मत की सहमति हो चुकी है। इस का मतलब यह हुआ कि जिस बात पर

उम्मत की सहमति हो चुकी है वह बात हम को ज़रूर माननी है, क्योंकि उम्मत की सहमति जिस बात पर हो जाए उस को मानने पर हदीस में ताकीद है कृपा इन सवालात का जवाब ज़रूर दें कि मेरे दिल से यह खटका भी दूर हो जाए।

रात मैंने एक किताब पढ़ी। जिस का नाम "खुतबातुत तौहीद" है। हमीदुल्लाह मेरठी की लिखी हुई है। इस के आख़िर में दीन व दुनिया की नसीहतों के बारे में अदि खुतबा में पृ0 131–132 पर लिखा है कि हंफ़ी, मालिकी, शाफ़ओ़, अहले हदीस आदि सब एक दूसरे के पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं। इस की दलील में उन्होंने एक हदीस भी नक़्ल की है और हवाला बुख़ारी प्रकाशित निज़ामी पृ0 96 का दिया है और अबु दाऊद पृ0 166 पहला भाग का भी हवाला दिया है जिन की रू से हर एक के पीछे नमाज़ पढ़ना जाइज़ बतलाया है। कृपया इस पर भी रोशनी डालिए। यह बहुत ज़रूरी है। बाक़ी ख़ैरियत। पुरसाने हाल की ख़िदमत में सलाम अर्ज़ है।

फ़क़त

ख़ादिम नवाब मुहियुद्दीन

24 अप्रैल 1962 ई0

नोटः 1– मैं पत्र लिख कर मुकम्मल कर चुका था। और अब ख़ाक के हवाले करने ही वाला था।

कि आप का करम नामा मिला पढ़ कर बहुत खुशी हुई। मेरे दो सवालों में से एक का जवाब (तरीक़ा–ए–सुन्नत) के बारे में मिल गया और माशा अल्लाह तसल्ली व इतमीनान हो गया। अब उम्मत की सहमति वाले सवाल का जवाब भी दीजिए ताकि इत्मीनान हासिल हो।

2– मिशकात बाबुत्तहारत में हदीसें हैं कि चमड़े की दबाग़त के बाद वह पाक हो जाता है और इस का इस्तेमाल जाइज़ हो जाता है। फिर कुत्ते की खाल भी दबाग़त के बाद पाक हो जानी चाहिए, इस पर भी रोशनी डालिए।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला 5 मई 1962 ई0

बख़िदमत जनाब नवाब साहब

अस्सलाम आलैकुम

अम्मा बाद! आप का पत्र मिला। पढ़ कर बहुत ख़ुशी हुई मुनाज़िरा की कहानी मालूम हुई। यह अल्लाह का शुक्र है कि उस ने आप को कामयाब किया और अपने दीन की ख़िदमत का सौभाग्य प्रदान किया। आमीन

1- "अबु हनीफ़ा मेरी उम्मत का चराग़ है।" यह हदीस ज़ईफ़ नहीं बल्कि मौज़ूअ़ है। इस हदीस का दूसरा टुकड़ा यह है। "मेरी उम्मत में एक व्यक्ति होगा जिस का नाम मुहम्मद बिन इदरीस होगा, वह शयातीन से ज़्यादा हानिकारक होगा।" (तज़किरतुल मौज़ूआत इब्ने ताहिर हंफ़ी फ़तनी और मौज़ूआते कबीर मुल्ला अली क़ारी)

मुहम्मद बिन इदरीस, इमाम शाफ़ई रह0 का नाम है।

2- "मेरे सहाबा रज़ि0 तारों की तरह हैं जिनका अनुसरण करो गे, हिदायत पाओगे।" यह हदीस भी मौज़ूअ़ है।

(फ़तहुल बारी वग़ैरह)

3- कुरआन मजीद की अनेक आयात में मुबाहसा के समय अंदाज़े गुफ्तगू की तालीम दी गई है, इन आयाते मुबारकात की रोशनी में अर्ज़ है कि आप मुख़ालिफ़ की कड़वी बातों का जवाब कड़वाहट से न दीजिएगा बल्कि ख़ुश अख़लाक़ी से ही जवाब

दीजिएगा।

अब आप के सवालात का जवाब लिखता हूं।

क्या शाह वलीउल्लाह साहब रह0 तक़्लीद के समर्थक थे?

सवाल

शाह साहब रह0 ने भाग दो में तक़्लीद के बयान में यह लिखा है कि इन चारों इमामों की तक़लीद और इन मज़ाहिब पर सहमति हो चुकी है। इस का मतलब यह हुआ कि जिस बात पर उम्मत की सहमति हो चुकी है वह बात हम को ज़रूर माननी चाहिए?

जवाब

मेरे पास "हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा" नहीं है। मैंने एक साहब से लेकर दूसरा भाग का अध्ययन किया है। मुझे यह इबारत उस में नहीं मिली, कृपया इन की असल इबारत संदर्भ सहित नक़ल फ़रमा दीजिए ताकि मैं समझ सकूं कि वे क्या लिख रहे हैं।

1– इस का एक जवाब तो मैं "बुज़ुर्गों की ग़ुलतियां के शीर्षक से दे चुका हूं अगर उन्होंने यही लिखा है तो फिर यह जवाब काफ़ी है। मगर मैं समझता हूं कि ऐसा वह कैसे लिख सकते हैं जबकि:

अ: वह स्वयं लिखते हैं कि चौथी सदी से पहले लोग तक़लीद पर इकट्ठा नहीं हुए थे। (शायद पहले भाग में होगा) अतः तीन सौ साल तक तो लोग तक़लीद करते ही न थे, फिर सहमति कैसे हुई?

ब: उन की पूरी किताब "हुज्जतुललाहुल बालिग़ा" मुजतहिदाना शाहकार है, कहीं भी वह मुक़ल्लिदाना तौर पर कोई बात नहीं

लिखते। बल्कि यूं समझिए कि लगभग पूरी किताब में हंफ़ी मसलक के ख़िलाफ़ लिखते चले जाते हैं। अगर सहमति उन्हें तस्लीम है तो स्वयं सहमति के ख़िलाफ़ क्यों चलते हैं? तक़लीद क्यों नहीं करते?

जः उन की अक्सर इबारतें जो भिन्न भिन्न किताबों में पाई जाती हैं तक़लीद की निंदा से भरी हैं।

हः "वसीयत नामा में तक़लीद के परख़च्चे उड़ा कर रख दिए हैं।

2– दूसरा जवाब इस का यह है कि उम्मत की सहमति से मुराद यह है कि सहाबा रज़ि0 से लेकर क़यामत तक सब मुसलमान इस पर सहमति कर लें तो यह घटित नहीं हुआ, अतः उन का यह लिखना कि इस पर सहमति है, कैसे सही हो सकता है?

3– अगर चौथी सदी से इस पर सहमति हुई तो यह भी सही नहीं। इस लिए कि आमिल बिल हदीस हमेशा रहे। अल्लामा ज़हबी रह0 ने तज़किरतुल हुफ्फ़ाज़ में हर दौर के अनेक उलमा के नाम बताए हैं जो तक़लीद नहीं करते थे। इन का संक्षिप्त हाल आप को "अल इर्शाद इला सबीलुर्रशाद" में भी मिल जाएगा।

क्या मुक़ल्लिद की इमामत में नमाज़ हो सकती है?

सवाल

मौलवी हमीदुल्लाह साहब ने "खुतबातुत्तौहीद" में लिखा है कि हंफ़ी, शाफ़ई, मालिकी और अहले हदीस आदि सब एक दूसरे के पीछे नमाज़ पढ़ सकते हैं?

जवाब

हदीस में हैः

فمن احدث فيمها حدثا او اوى محمدثا فعليه لعنة الله و الملئكة

والناس اجمعين لا يقبل الله منه يوم القيمٰة صرفاً و لا عدلاً.

अर्थात जो व्यक्ति मदीना में बिदअत निकाले या बिदअती को जगह दे, उस पर अल्लाह की, फ़रिशतों की और तमाम लोगों की लानत, अल्लाह क़यामत के दिन उस के फ़र्ज़ क़ुबूल करेगा न नफ़िल। (बुख़ारी व मुस्लिम)

तक़लीद निश्चय ही बिदअत है क्योंकि पुराने ज़माने में इस का वजूद नहीं था अतः मुक़ल्लिद की नमाज़ ही क़ुबूल नहीं होती। इस के पीछे नमाज़ पढ़ने का सवाल ही पैदा नहीं होता। सहीह बुख़ारी के हवाले से जो कुछ लिखा है, वह हज़रत उसमान रज़ि0 का कथन है, हदीस नहीं है। हज़रत उसमान रज़ि0 ने इमाम फ़तना के पीछे नमाज़ पढ़ने की अनुमति दी थी। यहां एक बात यह देखनी है कि इमाम फ़तना का मतभेद क्या था? कोई मज़हबी मतभेद नहीं था। उस को हज़रत उसमान रज़ि0 के सियासी अहकाम से मतभेद था। एक व्यक्ति ने ज़ोहर की अज़ान में الصلوة خير من النوم कहा तो हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 ने कहा यह बिदअत है और मय अपने साथी के चले गए। वहां नमाज़ नहीं पढ़ी। (अबु दाऊद)

अबु दाऊद के हवाले से जो हदीस नक़ल की गई है वह ज़ईफ़ है इमाम अहमद रह0 ने इस का इन्कार किया। इमाम उक़ैलो रह0, इमाम दारे क़ुतनी रह0, इमाम बैहेक़ी, हाफ़िज़ इब्ने हजर रह0 सब ने इस को ज़ईफ़ कहा है। वह कहते हैं यह मूल साबित नहीं इमाम अहमद, अल हाकिम ने इस को मुंकर कहा है

(नैलुल औतार जुज़ 3 पृ0 138)

फ़क़त

मसऊद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मोहतरम जनाब मास्टर मुहम्मद नवाब साहब सल्लमहु रब्बिही

अस्सलामु आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बर कातुहु

मिज़ाज़ शरीफ़! मेरी तबीयत काफ़ी दिनों से ख़राब है, इलाज का सिलसिला जारी है, और थोड़ा फ़ायदा है। दुआ फ़रमाऐं।

मुझे विश्वसनीय सूत्रों से मालूम हुआ है कि आप ने तक़लीद इमाम अबु हनीफ़ा रज़ि0 को छोड़ कर अदमे तक़लीद की राह अपनायी है और इस के सरगर्म प्रचारक हैं, अगर यह वास्तव में हक़ीक़त है तो मुझे बड़े दुख के साथ साथ हैरत भी है कि क़ुरआन शरीफ़ और हदीस शरीफ़ से एक अपरिचित आदमी किस तरह इस कांटों भरी वादी में क़दम रखने की हिम्मत करता है। अल्लाह तआला सही समझ प्रदान करें। क्या आप के पीर व मुर्शिद हज़रत मौलाना अहमद अली लाहौरी रह0 ग़ैर मुक़ल्लिद थे। ख़ुदा के लिए कुछ सोचिए।

वस्सलाम

नूर मुहम्मद

नोटः यह पत्र मौलवी नूर **मुहम्मद** साहब शैखुल हदीस मदरसा हाशमिया, **सजावल** का नवाब मुहियुद्दीन के नाम है। इस का ज़िक्र नवाब साहब के अगले पत्र में है।

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब **नवाब साहब**

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब

अस्सलामु आलैकुम!

आप का भेजा हुआ पत्र मिला, शुक्रिया। मैं दो तीन दिन के लिए कराची गया था। मेरे साथ तय्यब साहब थे। वह मौलवी जो मुझ से मुनाज़िरा (मुजादला) करके दो दिन का समय ले कर गया था कि रफ़उल यदैन के निरस्त होने की हदीस लाकर दिखाऊंगा, आज तक नहीं आया। अपने शागिर्दों से कहता है कि हदीसें तो बहुत हैं लेकिन नवाब नहीं मानेगा। उस ने एक पत्र सजावल के मौलवी नूर मुहम्मद को लिखा था और फ़रियाद की थी कि नवाब गुलामुल्लाह में फ़ितना फैला रहा है ग़ैर मुक़ल्लिद हो गया है। बड़ा सरगर्म प्रचारक है आदि आदि। मौलवी नूर मुहम्मद ने मुझे पत्र लिखा, जो मैं इस पत्र के साथ नत्थी करके आप के पास भेज रहा हूं। मैंने उन को लिखा है कि मौलवी अशरफ़ साहब ने आप को ग़लत लिखा कि मैं यहां फ़ितने नहीं फ़ैला रहा हूं।

आप मेरे उस्ताद भी हैं और विद्वान भी। आप ही न्याय से कहिए कि क्या क़ुरआन व हदीस की तबलीग़ फ़ितना है? मेरा तो ख़्याल है कि क़ुरआन व हदीस की तबलीग़ हक़ है और इस से फ़ितने दूर हो जाते हैं और हक़ ज़ाहिर हो जाता है और लोगों को अपना भूला हुआ दीन असली जो हुज़ूर सल्ल0 ने सिखाया था और जिस पर सहाबा किराम रज़ि0 का, ताबअीन रह0 का बल्कि तबअ़ ताबअीन का अमल था, याद आ जाता है। फिर मैंने अशरफ़ के मुनाज़िरा का

हाल लिखा और मौलवी नूर मुहम्मद साहब को सवालात के जवाबात दिए। मैंने लिखा कि आप कुरआन व हदीस को काटों से भरी वादी फ़रमा रहे हैं, यह क्या ग़ज़ब है। अल्लाह तआला स्वयं अपने कलाम के बारे में फ़रमाता है कि यह बहुत आसान और गुमराहों को राह दिखलाने वाला और जाहिलों को विद्वान बनाने वाला है और रसूल मासूम ने फ़रमाया कि मैं बड़ी आसान तरीन शरीअत ले कर आया हूं लेकिन आप हैं कि कलाम पाक को कांटों भरी फ़रमा रहे हैं।

अगर मैं ग़लत रास्ते पर हूं और राह से भटक गया हूं तो आप मेरे उस्ताद हैं, आप मुझे हक़ की राह दिखलाइए आप को इस काम के लिए सवाब मिलेगा। जब हंफ़ियत हक़ पर है तो फिर दलाइल क्यों ख़त्म हो गए हैं? लोग हंफ़ियत से निकल रहे हैं। ऐसे नाज़ुक समय में इन दलीलों को मैदान में आना चाहिए, मैं कुरआन व हदीस पर अमल करता हूं और वही मेरा ईमान है और हर समय अल्लाह तआला जल्ला शानुहु से दुआ करता हूं कि मेरा ख़ात्मा कुरआन व हदीस पर हो। अगर आप इस बात को बेकार समझते हैं तो फिर इस बात को बेकार साबित कीजिए। क्या आप को मेरे इस्लाम क़ुबूल कर लेने से दुख हुआ है? उस्तादे मोहतरम! आप को तो खुश होना चाहिए, ईद मनानी चाहिए कि एक व्यक्ति (नवाब) दीने इस्लाम में दाख़िल हो गया है और हक़ को क़ुबूल कर लिया है, आप तो बजाए खुशी के अफसोस कर रहे हैं, क्या आप को यह अफसोस है कि नवाब आप की जमाअत से निकल कर सीधे रास्ते की तरफ़ चला गया और इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

आप ने जो यह लिखा है कि क्या तुम्हारे पीर व मुर्शिद ग़ैर मुक़ल्लिद थे तो यह आप ने एक अजीब बात लिखी। क्योंकि मुर्शिद

साहब का ग़ैर मुक़ल्लिद न होना मेरे लिए कोई हुज्जत नहीं और यह बैअत जिहालत के दिनों की बैअत थी जो हक़ ज़ाहिर होते ही ख़त्म हो गई। दूसरे यह कि मुर्शिद साहब वफ़ात से पहले अपने रिसाला "खुद्दामुद्दीन" में इस बात का ऐलान फ़रमा चुके है कि तक़्लीद न ईमान का अंश है, न फ़र्ज़ न वाजिब, और हिंसा करने वाले विद्वानों को खूब डांटा भी है। इस के कुछ दिनों बाद मेरा दामाद स्वयं मेरे पास मिलने आया। उस ने कहा कि मौलवी नूर मुहम्मद साहब ने पत्र को पढ़ा और पढ़ने के बाद फ़रमाया कि नवाब हमारी जमाअत से निकल गया। अफसोस! पत्र का कोई जवाब नहीं दिया। फ़रमाया कि अब जवाब देना बेकार है। उस पत्र को मदरसा के सब शागिर्दों ने पढ़ा। फिर मेरा दामाद जब जाने लगा तो मैंने एक और पत्र मौलवी नूर मुहम्मद साहब को लिखा कि आप मेरे उस्ताद हैं। मुझे बताइए कि हक़ किधर है, मैं क़सम खाता हूं कि अगर हक़ आप के पास होगा तो मैं तुरन्त कुबूल कर लूंगा।

मैंने अपने दामाद से कहा कि मैं तेरे सामने क़सम खाता हूं कि अगर मौलवी नूर मुहम्मद साहब के पास हक़ है तो मैं तुरन्त कुबूल कर लूंगा और बजाए हक़ के उन के पास बिदअत है तो मैं कभी कुबूल नहीं करूंगा। तुम उस्ताद से कहो कि मुझे हक़ बात समझाऐं और दलाइल लिख कर भेजें, क्योंकि बिना दलाइल के तो नबियों को और पैग़म्बरों को भी क़ौमों ने नहीं माना। अर्थात उन से भी दलाइल तलब किए और दलाइल मिल जाने के बाद जिन्होंने इंकार किया वह कफ़िर हो गए और बर्बाद हो गए। मेरे दामाद ने कहा कि ठीक हैं। अतएव वह मेरा पत्र ले कर गया और मौलवी नूर मुहम्मद साहब को दिया और जवाब लिखने को कहा तो मौलवी साहब ने फ़रमाया कि अब जवाब लिखना बेकार है, इस से पत्र व्यवहार का

सिलसिला बढ़ जाएगा और मैं अपनी तकलीद पर बेहद सन्तुष्ट हूं आदि। मैंने अपने दामाद से पूछा कि अब बताओ हक़ किधर है और यह तक़्लीद शख़्सी बिदअत है या नहीं? उस ने कहा कि बेशक तक़लीद बिदअत है।

तय्यब साहब और दूसरे साथी गुलाम हुसैन साहब आप का सलाम अर्ज़ करते हैं और आप से मुलाक़ात के इच्छुक हैं। अब मैं कुछ सवालात लिखता हूं उन के जवाब दलाइल की रोशनी में दीजिए।

हज़रत शाह वलीउल्लाह साहब रह0 "हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा" पहला भाग अध्याय–4 पृ0 360 पर लिखते हैं कि "इस मक़ाम के मुनासिब यह है कि इन मसाइल पर लोगों को सचेत कर दिया जाए कि जिन के क़दम बहक गए, वे लग़ज़िश खा गए और क़लमों ने कज रवी की, उन में से एक मसला यह है कि चारों मज़ाहिब जो संकलित हो चुके हैं और लिखे जा चुके हैं, तमाम उम्मत या वे लोग जो इस उम्मत में भरोसे मन्द हैं, सब ज़माना में उन की तक़लीद के जाइज़ और ठीक होने पर सहमत हैं और इस तक़लीद में बहुत सी मसलहतें हैं जो पोशीदा नहीं। ख़ास कर इस ज़माने में लोग निहायत ही कम हिम्मत हो गए हैं और इन के दिल नफ़सानी इच्छा से भर गए और हर व्यक्ति अपनी ही राय पर गर्व करने लगा।"

शाह वलीउल्लाह साहब रह0 के "वसीयत नामा" का आप ने पिछले पत्र में ज़िक्र किया था। वह "वसीयत नामा" किस किताब में मिलेगा, इस किताब का नाम और पता ज़रूर लीखिए।

ख़ादिम नवाब

24 मई 1962 ई0

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

31 मई 1962 ई0

बख़िदमत नवाब साहब

अस्सलाम आलैकुम!

(अम्मा बाद) आप का पत्र ता0 24 मई मिला, आपकी तबलीग़ी कामयाबी से बहुत खुशी हुई। اللهم زده فزده शाह वलीउल्लाह साहब रह0 की किताब ''हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा' पहले भाग पृ0 360 की जो इबारत आप ने नक़ल की है, उस का मफ़हूम जो मैं समझा हूं, उस का विलोम है जो आप समझे हैं, इस से तो तक़लीद की बुराई साबित हो रही है। कृपया इस के आगे की इबारत और नक़ल करके भेजें ताकि मैं अपने मफ़हूम पर मुतमइन हो कर विस्तार से आप को लिख सकूं और इसी लिए इस समय यह संक्षिप्त पत्र लिख रहा हूं, आप स्वयं भी इस के मफ़हूम पर सोच विचार कीजिए।

शाह वलीउल्लाह साहब रह0 का वसीयत नामा अलग छपा हुआ मेरे पास है। और शायद यह किसी बड़ी किताब का अंश नहीं है। मुरदार की खाल दबाग़त से पाक हो जाती है लेकिन कुत्ते की नहीं। इस लिए कि कुत्ता दरिन्दा है और दरिन्दों की खाल इस्तेमाल करने की मनाही है, उस को बिछाना मना है। (तिर्मिज़ी) दरिन्दों की खाल पर बैठना मना है। (अबु दाऊद) पहनना मना है। (अबु दाऊद)

इन हदीसों की रोशनी में दरिन्दों की खाल को अपवाद करना लाज़िमी है।

फ़क़त

मसऊद

بِسۡمِ اللّٰهِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِيۡمِ

मिन जानिब नवाब

बख़िदमत जनाब मोहतरम मसऊद साहब!

अस्सलाम आलैकुम!

सख़्त इंतिज़ार के बाद कल आप का कार्ड ता0 13 मई 1962 ई0 मिला। हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा पहले भाग की जो इबारत मैंने नक़्ल की थी, उस के बाद की तहरीर में तो बे शक तक़लीद की बुराई का पहलू निकलता है। मगर मैं केवल इस हिस्सा तहरीर के बारे में जानना चाहता था कि जिस में यह लिखा है कि यह चारों मज़ाहिब जो संकलित हो चुके हैं या तहरीर में आ चुके हैं तमाम उम्मत या वे लोग जो इस उम्मत में भरोसे योग्य हैं, सब इस ज़माना में उन की तक़लीद के जाइज़ और सही होने पर सहमत हैं और इस तक़लीद में बहुत सी मसलेहतें हैं जो पोशीदा नहीं हैं। तो यह जो लिखा है कि तमाम उम्मत ने सहमति कर ली है इस से क्या मतलब है? क्या यह उम्मत की सहमति नहीं हुई। बस इस के बार में जानना चाहता हूं। इसी पर रोशनी डालिए कि यह उम्मत की सहमति है या नहीं? क्योंकि शाह साहब रह0 के शब्दों से मालूम होता है कि उम्मत ने तक़लीद जाइज़ होने पर सहमति कर ली है तो फिर यह उम्मत की सहमति हो गयी या नहीं। शायद तिर्मिज़ी की हदीस है। एक मौलवी ने मुझे एक हदीस दिखलाई जो मिश्कात में मौजूद है।

इब्ने माजा की हदीस है। "जमाअत का अनुसरण करो" तो जो व्यक्ति जमाअत से अलग हुआ उस को अकेले आग में डाला

जाएगा'' उस ने कहा कि आप जमाअत छोड़ कर अलग हो गए, इस समय जमाअते तक़लीद करने वालों की ही जमाअत है अगर आप इस को जमाअत नहीं मानते तो फिर बतलाइए कि वह कौन सी जमाअत है जिस के बारे में यह हदीस है। हदीस सब मुसलमानों के लिए है या नहीं? जो लोग क़यामत तक पैदा होंगे, वे भी उन हदीसों पर अमल कर सकते हैं या नहीं? अगर नहीं कर सकते तो फिर यह हदीस बेकार है और अगर कर सकते हैं तो फिर हमारी जमाअत ही जमाअते हैं। मैंने देखा कि मिश्कात शरीफ़ पहला भाग में यह हदीस मौजूद है। मैंने उस मौलवी से कहा कि यह हदीस इब्ने माजा की है।

इब्ने माजा में असल हदीस देखनी चाहिए कि आया मुहद्दिसीन ने उस पर जिरह तो नहीं की है और उस का रावी कौन है? यह सब देखने के बाद ही कुछ किया जा सकता है। उस ने कहा ठीक है। आप इब्ने माजा में हदीस देख कर अपना इत्मीनान करके जमाअत में लौट आइए। उस ने कहा कि अगर आप यह कहें कि इस हदीस के मुख़ातिब सहाबा किराम रज़ि0 थे तो अब तो सहाबा किराम रज़ि0 नहीं हैं और मुसलमानों को हुक्म हुआ है कि जमाअत का अनुसरण करो। तो अब हमारी जमाअत ही जमाअते कसीर है। ख़ूब ग़ौर कर लीजिएगा मसऊद साहब इस हदीस के बारे में ज़रूर लिखिए। यह हदीस सहीह है या मौज़ूअ़ है और इस का क्या मतलब है। मुझे आप के जवाब का सख़्त इंतिज़ार रहेगा। उस मौलवी ने सिलसिल–ए– कलाम जारी रखते हुए कहा कि हम मुसलमान नहीं हैं? हम कलिमा पढ़ते हैं, क़िब्ला की तरफ़ मुंह करते हैं, हज करते हैं, ज़कात देते हैं, नमाज़ पढ़ते हैं। यही ठीक ठीक ईमान है। फ़राइज़ और सुन्नत आदि में हम से किसी को मतभेद नहीं है।

फ़ज्र की दो सुन्नत, दो फ़र्ज़ हम भी पढ़ते हैं और आप भी ज़ोहर, असर के चार फ़र्ज़ आप भी पढ़ते हैं और हम भी। मग़रिब के तीन फ़र्ज़ आप भी पढ़ते हैं और हम भी और इशा के चार फ़र्ज़ आप भी पढ़ते हैं और हम भी, तौहीद में भी कोई मतभेद नहीं है। क्या फिर भी आप हम को इस्लाम से बाहर समझते हैं? हुज़ूर सल्ल0 की नुबूवत और रिसालत पर भी हमारा ईमान है। फिर किस जुर्म में आप हम को इस्लाम से बाहर समझते हैं। यद्यपि तक़्लीद करते हुए भी हम इन सारी बातों के क़ाइल हैं। और ईमाने कामिल रखते हैं और हम तक़्लीद इसी लिए करते हैं कि ईमान सलामत रहे, कोई व्यक्ति हमारे ईमान पर डाका न डाल सके। जिस तरह आप को जमाअत से तोड़ लिया गया, कल को शीआ हज़रात की दलीलें सुन कर आप शीआ हो जाऐंगे। परसों क़ादियानियों की दलीलें सुन कर आप क़ादियानी हो जाऐंगे ऐसी हालत के बारे में हुज़ूर सल्ल0 ने भविष्य वाणी की है कि क़यामत से पहले क़यामत के क़रीब ऐसा ज़माना आएगा कि आदमी रात को मुसलमान होगा फिर सुबह को काफ़िर हो जाएगा और सुबह को मुसलमान होगा तो शाम को काफ़िर।

तुम्हारा सम्प्रदाय सूफ़ीवाद के ख़िलाफ़ है। यद्यपि सूफ़ीवाद नाम है नफ़्स की सफ़ाई का और नफ़्स की सफ़ाई वही कर सकता है जो पाबन्द शरीअत हो और पाबन्द शरीअत बड़े बड़े बुजुर्ग गुज़र चुके हैं और मौजूद हैं और होंगे। देखिए अहमद अली साहब लाहौरी, मदनी साहब, बादशाह पीर, मुईनुद्दीन साहब चिश्ती आदि और ये सब लोग मुक़ल्लिद थे। जिन की करामतों से तारीख़ की किताबें भरी पड़ी हैं। चांद से ज़्यादा रौशन करामतें प्रकट हुई हैं और होंगी, लेकिन आप आज सब को झुठला कर जन्नत के

ठीकेदार बन गए हैं। न बुज़ुर्गों, औलिया अल्लाह का लिहाज़ न ख़्याल। अल्लाह तआला फ़रमाता है कि जो मेरे वली को कष्ट देगा मैं उस से जंग करूंगा और आप हैं कि करामतों को झुठला कर सब को इस्लाम से निकाल रहे हैं। फिर कहने लगा कि जनाब यह क़यामत की निशानी है आख़िरी दौर है, लोग जमाअत से निकल रहे हैं। अपना अपना दीन बना रहे हैं।

उस ने एक घटना सुनायी कि ठट्ठा के एक बुज़ुर्ग जो मर चुके हैं जिन का नाम मुहम्मद हाशिम था। वह जब रोज़ा–ए–मुबारक पर गए तो वहां पहुंच कर अर्ज़ किया। अस्सलामु आलैकुम या रसूलुल्लाह। रोज़ा–ए–मुबारक से जवाब आया। व अलैकुमुस्सलाम मुहम्मद हाशिम। उस समय रोज़ा–ए–मुबारक पर बहुत लोग थे और मुहम्मद हाशिम नाम के भी बहुत लोग थे और लगभग सब ही ने सलाम अर्ज़ किया था इस लिए आपस में मतभेद हुआ। हर मुहम्मद हाशिम कहने लगा कि मुझे जवाब आया है। फिर दोबारा सलाम अर्ज़ किया गया तो जवाब आया कि वअलैकुमुस्सलाम मुहम्मद हाशिम ठट्ठवी। वह कहने लगा कि बुज़ुर्ग मुहम्मद हाशिम हंफ़ी और पक्के हंफ़ी थे, अभी तक उन के शागिर्द और ख़लीफ़ा ठट्ठा में मौजूद हैं। अगर हंफ़ी इस्लाम से ख़ारिज होते तो हुज़ूर सल्ल0 क्यों नाम ले कर सलाम का जवाब देते। इसी क़िस्म की एक और घटना मुझ से सजावल में नूर मुहम्मद साहब ने सुनायी थी कि हुसैन अहमद मदनी साहब रह0 को भी रोज़ा–ए–मुबारक से सलाम का जवाब आया था। मदनी साहब रह0 पक्के हंफ़ी थे। मगर जिन्नात भी आकर उन से दर्स लेते थे। फिर उस मौलवी ने कहा कि हुज़ूर सल्ल0 बुज़ुर्ग मुहम्मद हाशिम साहब रह0 की ज़िन्दगी में अपने चारों यारों को लेकर ठट्ठा आया करते थे।

हंफ़ियों की तो यह शान है। मास्टर साहब आप अपनी ख़ैर मनाइए, बतलाइए कि क्या ऐसा कोई वली बा कारामत आप की जमाअत में भी गुज़रा है। एक खुबसूरत सा नाम अपने लिए पसन्द कर लिया, मगर हासिल क्या हुआ? जमाअत से टूट गए। जमाअत की नमाज़ के सवाब से महरूम हो गए। जुमा की नमाज़ और सवाब से महरूम हो गए। ज़िक्र भी छूट गया, बल्कि अब तो अल्लाह के ज़िक्र का विरोध करने लगे और इस ग़लत फ़हमी में पड़ गए कि सब मुश्रिक और काफ़िर हैं। आप अंग्रेज़ी दानों की इस जमाअत में दाख़िल हो गए हैं जिन्होंने चार पांच परस्परविरोधी फ़रोआी मसाइल को अपना ट्रेड मार्क बना लिया है। हुजूर सल्ल0 ने यह भविष्य वाणी और ताकीद फ़रमा दी कि जमाअत का अनुसरण करो।

हमारी जमाअत आज जितनी इस्लाम की ख़िदमत कर रही है वह रोज़े रौशन की तरह साफ़ है। आप स्वयं ही सोचिए आप को रंज और ग़म है कि कोई आप की बात सुनता नहीं। आप दुनियाए, इस्लाम से कट कर अलग हो गए। बल्कि घर में बन्द हो गए। उस मौलवी की गुफतगू बड़ी लम्बी चौड़ी थी, मगर मैंने सार कर दिया। जब उस ने बहस ख़त्म की तो मैंने उस से कहा कि आप ने अपनी तरफ़ में खूब तक़रीर की। आप अपनी कसरत का रोब जमाना चाहते हैं। हुज़ूर सल्ल0 तो फ़रमाते हैं कि मेरी उम्मत 73 सम्प्रदायों में बंट जाएगी। केवल एक सम्प्रदाय जन्नत में जाएगा और 72 सम्प्रदाय जहन्नम में जाऐंगे। अर्थात 73 आदमी हों तो केवल एक आदमी जन्नत में जाएगा और 72 आदमी जहन्नम में जाऐंगे। इस हदीस से मालूम हुआ कि जन्नत में जाने वाले कम संख्या में होंगे और जहन्नम में जाने वाले अकसरियत में होंगे, अब आप अपनी अक्सरियत पर गर्व कीजिए, और मैंने कहा कि सहाबा रज़ि0 के

मालूम करने पर हुजूर सल्ल0 ने फ़रमाया, जन्नती सम्प्रदाय वह होगा जो मेरे और मेरे असहाब रज़ि0 के तरीक़े पर होगा।

अब रही वह हदीस कि जमाअत कसीर का अनुसरण करो तो जमाअते कसीर से मुराद सहाबा रज़ि0 की जमाअत है बस हुक्म हो रहा है कि सहाबा रज़ि0 के तरीक़ा अर्थात तरीक़ा–ए–मुहम्मदी का अनुसरण करो और यह बात, यह नेमत आप को नसीब नहीं, क्योंकि आप ने दीने इस्लाम के चार टुकड़े कर डाले और हर एक ने अलग अलग शरीअत ठहराई और आप की अक्सरियत वाली जमाअत ने तो शरीअत बना कर दीने इस्लाम को नोच डाला है और फिर भी बड़ी दिलैरी से अपने आप को अहले सुन्नत वल जमाअत कहलवाते हैं और करामतों का दावा करते हैं। मैंने देखा कि वह मौलवी मेरी बात सुन कर कुछ घबरा गया और इधर उधर की बातें करने लगा। कहने लगा कि मैं फिर किसी समय आकर आप से मुनाज़िरा करूंगा, तब तक आप भी हदीस आदि देख कर तय्यार रहिए। मसऊद साहब वह तो चला गया, लेकिन मैं तो मुनाज़िरा से घबराता हूं और स्वयं को इस क़ाबिल नहीं पाता कि हर सवाल का जवाब दे सकूं।

मसऊद साहब मैंने इस की गुफतगू जो निहायत नर्म माहौल में हुई, वह लगभग सब लिखने की कोशिश की है। आप मुझे कोई ऐसी दलील ज़बरदस्त लिखिए कि फिर बात बनाए न बने, मुझे आप के ख़त का सख़्त इंतिज़ार रहेगा। मेरा ख़्याल है कि उस मौलवी को मेरे पास भेजने में किसी का हाथ था। तय्यब साहब और गुलाम हुसैन साहब आप को सलाम कहते हैं। तय्यब साहब से कई लोग और ख़ास तौर से उन के ख़ानदान वाले उन के सख़्त विरोधी हो

1– यह जवाब सही नहीं, इसी किताब में देखिए।

गए। उन के वालिद ने सरे बाज़ार उन से झगड़ा किया लेकिन अल्लाह तआला कुदरत वाला है, तय्यब साहब अपने मसलक पर मज़बूती से जमे हुए हैं। यह सब कुछ अल्लाह तआला का फ़ज़ल व करम है, आज कल हमारी मस्जिद पर बिदअतियों का क़ब्ज़ा हो चला है। एक बिदअती सख़्त क़िस्म का हेड क्लर्क हो कर आया है और दूसरा प्राइमरी का मास्टर भी आया है। दोनों ने अपनी पार्टी बना ली है और मस्जिद पर क़ब्ज़ा कर लिए है। हम लोग घर में नमाज़ पढ़ लेते हैं। दुआ कीजिए कि ये दोनों बिदअती यहां से दफ़अ हो जाऐं या सीधी राह पर आ जाऐं। यह हलक़ा बांध कर ज़िक्र करते हैं और या दस्तगीर के नारे लगाते हैं या ग़ौसुल मदद पुकारते हैं।

मेरी तरफ़ से सब की ख़िदमत में सलाम अर्ज़ करें बच्चे सब सलाम अर्ज़ करते हैं।

फ़क़त

ख़ादिम नवाब

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला 14 जून 1962 ई0

बख़िदमत मोहतरमी मुकर्रमी मोहियुद्दीन खां साहब

अस्सलाम आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

(अम्मा बाद) कल आप का पत्र मिला, जवाब कल ही लिखने बैठ गया था लेकिन एक साहब तशरीफ़ ले आए, अतः लिख न सका। मौलवी नूर मुहम्मद साहब का पत्र भेज दिया है। अब आप अपने सवालों के जवाब सुनिए।

शाह वलीउल्लाह रह0 की तहरीर से तक़्लीद का रद्द

1- शाह वलीउल्लाह साहब रह0 ने लिखा है कि तक़्लीद भी उन मसाइल में से है जिन में बड़े बड़े लोग ठोकर खा गए और ग़लत फ़हमी से कुछ का कुछ समझ गए और कुछ का कुछ लिख गए। ग़लत फ़हमी यह हुई कि उन लोगों ने यह समझ लिया कि तक़्लीद जाइज़ है। इस पर सहमति है आदि आदि, यद्यपि हक़ीक़त में न यह जाइज़ है, न इस पर सहमति है। उन बड़े बड़े उलमा को धोखा हुआ जो वह ऐसा समझे। यह है शाह साहब रह0 का असल मंशा अगर उन का मंशा यह न होता तो फिर बाद की तहरीर से तक़लीद की बुराई का पहलू कैसे निकल सकता है? और किस तरह उन की पूरी किताब मुजतहिदाना तहरीर से भरी होती।

2– तिर्मिज़ी में बेशक यह हदीस है कि "मेरी उम्मत गुमराही पर जमा न होगी" और अल्लाह तआला का शुक्र है कि तक़लीद पर उम्मत जमा नहीं हुई।

3–इब्ने माजा में हदीस है: اذا رأيتم اختلافاً فعليكم بالسواد الاعظم. "जब मतभेद देखो तो सवादे आज़म को लाज़िम पकड़ो।" इमाम अबुल हसन सिन्धी लिखते हैं:

> "وفى الزوائد فى اسناده ابو خلف الاعمىٰ واسمه حازم بن عطأ وهو ضعيف رقد جاء الحديث بطرق فى كلها نظر.
>
> ज़वाइद में है कि इस हदीस की असनाद में अबुल ख़लफ़ुल आमा जिस का नाम हाज़िम है, ज़ईफ़ है, यह हदीस और भी तरह से मरवी है लेकिन सब में ज़ईफ़ है।"

(हाशिया इब्ने माजा अबुल अबवाबुल फ़ितन भाग–2 पृ0 464)

इस हदीस का जवाब यह है:

"बड़ी जमाअत की पैरवी करो" का सही मतलब

1– यह हदीस ज़ईफ़ है, अतः हुज्जत नहीं।

2– हक़ीक़त में इस का संबंध सियासी मामलों से है जैसा कि इन अहादीस का मज़मून इस पर दलील है। रसूलुल्लाह सल्ल0 फ़रमाते हैं:

> من رأى من اميره شيئاً يكرهه فليصبر فانه ليس أحد يفارق الجماعة شبراً فيموت الا ّمات ميتة جاهلية.
>
> (صحیح بخاری وصحیح مسلم)
>
> "जो व्यक्ति अपने अमीर की कोई बात ऐसी देखे जो

उसे ना पसन्द हो तो वह सब्र करे क्योंकि जो व्यक्ति जमाअत से बालिश्त भर भी अलग हो उसकी मौत अज्ञानता की मौत होगी।''

रसूलुल्लाह सल्ल0 फ़रमाते हैं:

من خرج من الطاعة وفارق الجماعة فمات مات ميتة جاهلية.

''जो व्यक्ति अमीर के आज्ञा पालन से विद्रोह करे और जमाअत से अलग हो जाए,उस की मौत अज्ञानता की मौत है।'' (सहीह मुस्लिम)

रसूलुल्लाह सल्ल0 फ़रमाते हैं:

"من اتاكم وامركم جميع علىٰ رجل واحد يريد ان يشق عصاكم او يفرق جماعتكم فاقتلوه." (صحيح مسلم)

''जो व्यक्ति तुम्हारे पास इस हाल में आए कि तुम सब एक व्यक्ति की इमारत पर जमा हो और वह तुम्हारी कुव्वत को तोड़ना चाहे या तुम्हारी जमाअत में फूट पैदा करे तो उस को क़त्ल कर दो।''

एक रिवायत में यह शब्द हैं ''كائنا من كان'' चाहे वह कोई भी हो। (सहीह मुस्लिम)

मतलब यह है कि जहां मामलात शूरा से तै होते हों, वहां सवादे आज़म की बात तस्लीम होगी। अक़लियत या फ़र्द की बात मानने से फूट पैदा होगी। जैसे अगर सवादे आज़म ने किसी को अमीर बना कर लिया, तो सवादे आज़म का साथ देना होगा।

3- इस हदीस का संबंध किसी तरह दीनी उमूर से नहीं है। अगर दीनी मामलों से हो तो फिर हर वह मसअला जिस पर सवादे आज़म हां करे दीनी मसअला बन जाएगा और यह اليوم اكملت لكم دينكم के पूरी तरह ख़िलाफ़ है।

"बड़ी जमाअत की पैरवी करो" के आरोपित जवाब

4– इस ज़माना में बरेलवियों की अधि संख्या है तो फिर देवबन्दियों को चाहिए कि बरेलवियों में शामिल हो जाऐं।

5– लगभग हर ज़माना में हंफ़ी अधि संख्या में रहे और अब भी हैं तो फिर ये लोग मालिकियों, शाफ़ियों, हंबलियों को दावत क्यों नहीं देते कि इस हदीस की रोशनी में हंफ़ी हो जाओ क्योंकि वे तीनों सम्प्रदाय इस हदीस पर अमल करने के लिए न कभी तैयार थे और न अब हैं तो फिर वे गुमराह क्यों नहीं, वे जहन्नम में क्यों न डाले जाऐं और वे भी अकेले अकेले जैसा कि हदीस के दूसरे टुकड़े में है, उन गुमराह और जहन्नमियों को आज तक हक़ पर क्यों तस्लीम किया जाता है?

6– मौजूदा ज़माना के हालात व आसार से यह अंदेशा होता है कि निकट भविष्य में क़ादियानियों की अधि संख्या हो जाएगी। क्या उस ज़माना में भी इस हदीस पर अमल होगा या नहीं?

7– इन के झूठ पर इन के हदीस के मतलब के झुठलाने पर सब से ज़्यादा अहम दलील यह है:

"यह तो ज़ाहिर है कि मुक़ल्लिदीन अहदे रिसालत सल्ल0 में नहीं थे, सहाबा के दौर रज़ि0, ताबअीन रह0 के दौर में भी नहीं थे। हर सम्प्रदाय की जब इब्तिदा होती है तो इब्तिदा में वह सम्प्रदाय अल्पसंख्यक ही में होता है पहले सम्प्रदाय का संस्थापक अकेला होता है, फिर दो होते हैं, फिर तीन और इसी तरह सम्प्रदाय प्रगति करता चला जाता है। मुक़ल्लिदीन के सम्प्रदाय की भी आख़िर कोई

शुरूआत है। जो शाह वलीउल्लाह साहब रह0 के कथना नुसार चौथी सदी है। तो फिर इस शुरू के दौर में निश्चय ही वह कम संख्या में होंगे और ग़ैर मुक़ल्लिदीन अधि संख्या में मुक़ल्लिदीन की कम संख्या उस समय इस हदीस की मुख़ातब होगी। यह हदीस पुकार पुकार कर कह रही होगी कि ऐ मुक़ल्लिदीन की कम संख्या अधि संख्या में गुम हो जाओ। अगर वह गुम हो जाते तो आज उन का वजूद न होता। लेकिन उन्होंने जहन्नम में जाना पसन्द किया और अक़्सरियत में गुम नहीं हुए। इस हदीस के इस मायना की रोशनी में वे लोग गुमराह, बातिल परस्त और जहन्नमी हुए। यह हैं मौजूदा दौर के मुक़ल्लिदीन के पेशरू। उन्होंने बातिल पर रह कर अपने सम्प्रदाय को बाक़ी रखा, यही अधि संख्यक सम्प्रदाय जो उस समय बातिल पर था, बढ़ते बढ़ते अधि संख्यक में तब्दील हो गया। तो क्या अब यह हक़ पर हो गया। इस हदीस से तो मुक़ल्लिदीन की बुनियाद ही बातिल पर है और फिर भी उन्हें अपनी मौजूदा अधिक संख्या पर गर्व है।

8- हक़ के मामले में अधि संख्या अल्प संख्या, कोई मेयार नहीं बल्कि दलीलों की रू से अल्प संख्या का हक़ पर होना ज़्यादा ज़ाहिर है और वह दलीलें यह हैं:

1-قل لا يستوى الخبيث والطيب ولو اعجبک کثرة الخبيث فاتقوا الله ياولى الالباب لعلكم تفلحون. (سورة مائده)

"कह दीजिए कि नापाक और पाक बराबर नहीं हो सकते, यद्यपि नापाक की अधिकता तुम को अच्छी ही क्यों न मालूम हो या हैरत ही में क्यों न डाले। ऐ अक़लमन्दो! अल्लाह से डरो ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

٢- وقليل من عبادى الشكور (سورة سبا ١٣)

"मेरे बन्दों में शुक्र गुज़ार थोड़े ही होते हैं।"

٣- ان كثيرا من الخلطاء ليبغى بعضهم علىٰ بعض الا الذين امنوا وعملوا الصلحت وقليل ما هم (سورة ص ٢٤)

"अधिकांश शरीक एक दूसरे पर ज़्यादती ही करते हैं। सिवाए उन लोगों के जो ईमान लाए और सद कर्म करते हैं और ऐसे लोग थोड़े ही होते हैं (अर्थात मोमिनीन, सालिहीन की तादाद कम होती है।)"

4- सूरह–ए–हूद के आख़िरी रुकूअ़ और سيقول के आख़िरी रुकूअ़ में भी इस तरह की आयात हैं, देख लीजिएगा।

٥- ان كثيرا من الناس لفاسقون.

"बेशक अधिक लोग अवज्ञाकारी होते हैं।" (माइदा 49)

6- रसूलुल्लाह सल्ल0 ने फ़रमाया:

انما الناس كالابل المائة لا تكاد تجد فيها راحلة. (صحيح بخارى و صحيح مسلم)

"आदमियों की मिसाल ऐसी है जैसे सौ ऊंट। क़रीब है कि तुमको एक भी ऊंट सवारी के क़ाबिल न मिले, अर्थात नाक़िस लोगों की अधिसंख्या होगी।"

4- आगे जब कभी उन मौलवी साहब से बात हो तो उन से पूछिए कि आप ने जिन अक़ीदों और कर्मों का ज़िक्र किया है, यह अक़ीदे और कर्म क़ादियानियों के भी हैं तो क्या वे भी मुसलमान हैं। फिर यह कि तौहीद का आप केवल ज़बान से इक़रार करते हैं। वैसे आप के अक़ीदों और कर्म तौहीद के मुनाफ़ी हैं।

ولايشرك فى حكمه احدا. (كهف ٢٦) ام لهم شركؤا شرعوا لهم من الدين مالم يأذن به الله (شورىٰ)

اتخذوآ احبارهم ورهبانهم ارباباً من دون الله. (توبه ٣١)

आदि आयात की रोशनी में शरीअत साज़ी अल्लाह अकेले का हक़ है। उलमा का शरीअत साज़ी करना शिर्क है और क्यों कि तक़्लीद को जो कि ख़ैरुल कुरून में नहीं थी, राइज करके दीन में दाख़िल कर लिया गया है। अतः ये लोग शिर्क करने वाले हुए।

फिर तक़लीद के साथ शरीअत साज़ी मुस्तक़िल सूरत में मुक़ल्लिदीन में दाखिल होती चली गई।

1- जैसे शरीअत में इमाम बनाने के लिए केवल चार चीज़ों का ज़िक्र था, अर्थात सब से बड़ा क़ारी, अगर (इस में) सब बराबर हों तो सुन्नत का सब से बड़ा आलिम। अगर उस में भी सब बराबर हों तो हिजरत में सब से ज़्यादा मुक़द्दम। अगर अब भी बराबरी हों तो उम्र में सब से बड़ा। (सहीह मुस्लिम) लेकिन उन्होंने इस में अनेक चीज़ों की वृद्धि की जैसे अगर अब भी बराबर हों तो वह वर्ना वह ...... जो सब से ज़्यादा सुन्दर हो ...... जिस की बीवी सब से ज़्यादा ख़ूबसूरत हो। ثم الاكبر رأسا والاصغر عضواً (दुर्रे मुख़तार)

2- किसी सहीह हदीस से मर्द व औरत की नमाज़ में फ़र्क़ साबित नहीं होता। लेकिन उन्होंने दोनों की नमाज़ के अलग अलग तरीक़े मुक़र्रर किए।

3- सर के मसह का तरीक़ा अर्थात तीन उंगलियां मिलाकर सर के बीच से पीछे ले जाएं और हथेलियों को सर आस पास से वापस आगे लाए। अंगूठे और शहादत की उंगली उठी रहें, गदर्न का मसह पुश्ते कफ़ से किया जाए, यह तमाम तरीक़ा मनगढ़ा है।

4- गांव वाले ईद की नमाज़ से पहले क़ुरबानी कर सकते हैं। शहर वाले भी शहर से बाहर जानवर ले जाकर नमाज़े ईद से पहले क़ुरबानी कर सकते हैं। (हिदाया) यह तमाम की तमाम शरीअत साज़ी है बल्कि हराम को हलाल करने का हीला है।

5- कुत्ते को उठा कर नमाज़ पढ़े तो नमाज़ हो जाएगी।

(दुर्रे मुख़तार)

6- "اوجامع فی دون الفرج ولم ینزل" तो रोज़ा नहीं टूटता (दुर्रे मुख़तार) या संभोग करे फ़ुरुज़ के अलावा में तो इंज़ाल नहीं हुआ तो रोज़ा नहीं टूटता।

7- नशा की हालत में बेटी का बोसा लिया तो उसकी पत्नी उस पर हराम हो गई। (दुर्रे मुख़तार)

मतलब यह कि इस तरह के हज़ारहा मसाइल हैं जिन से फ़िक़ह की किताबें भरी पड़ी हैं। यह सब गढ़े गए हैं। गढ़ना भी शिर्क है और उस का मानना भी शिर्क है। मैं फिर कहता हूं कि इमाम हक़ पर थे लेकिन मौजूदा मज़ाहिब और तक़्लीद बातिल और शिर्क हैं। इमाम उन सब से पूरी तरह बरी हैं न उन के यह मसाइल, न उन का यह मसलक, हां यह बात अपनी जगह पर अटल है कि उन इमामों में से भी अगर किसी का कथन हदीस के ख़िलाफ़ हो तो इस कथन को मानना शिर्क है।

5- हदीस तो सहीह है कि रसूलुल्लाह सल्ल0 ने फ़रमाया कि आदमी सुबह को मोमिन होगा और शाम तक काफ़िर हो जाएगा और शाम को मोमिन होगा, और सुबह तक काफ़िर हो जाएगा। लेकिन बे मौक़ा व बेमहल इस्तेमाल किया गया है इन शब्दों के आगे यह शब्द भी हैं। .يبيع دينه بعوض من الدنيا अर्थात दीन को दुनिया के माल के बदले बेच देगा। (सहीह मुस्लिम)

और चूंकि आप का अहले हदीस हो जाना अल्लाह के लिए है न कि दुनिया के लिए, अतः यह हदीस आप पर फिट नहीं हो सकती।

अहले हदीस कोई सम्प्रदाय नहीं है

1- अहले हदीस कोई सम्प्रदाय नही है, न इस सम्प्रदाय का कोई संस्थापक है, न इमाम ने इस सम्प्रदाय की कोई ख़ास किताबें लिखी हैं। उन की किताबें वही हैं जो दीन की असल हैं अर्थात कुरआन व हदीस। इमाम वही है जिस को अल्लाह ने इमाम बनाया, अर्थात हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ल0 को, अल्लाह के बनाए हुए इमाम की मौजूदगी में दूसरे को इमाम बनाना और उन की तक़लीद करना यह भी शिर्क है, लोगों के लिए इमाम बनाना अल्लाह का काम है न कि बन्दों का।

(यहां इमाम से मुराद दीनी रहनुमा है न कि ख़लीफ़ा या विद्वान) कुरआन व हदीस का अनुसरण करने वाले हमेशा से हैं। शुरू ज़माना में अहले हदीस की अधिकता थी और रिसालत काल में भी केवल यही थे।

7- कोई अहले हदीस नफ़स की सफ़ाई का इंकार नहीं करता, वह लोगों के मन गढ़त सूफ़ीवाद व तरीक़त का इंकार करता है।

करामत वलायत का पैमाना नहीं

8- तक़लीद एक तो ज्ञान का नाम नहीं, अज्ञानता का नाम है। उसूल फ़िक़ह जैसे स्पष्टीकरण आदि की इबारतें इस पर गवाह हैं, अतः अल्लाह का वली कभी जाहिल नहीं हो सकता। दूसरे– तक़लीद बिदअत है, शिर्क है, अतः कोई वलीअल्लाह मुक़ल्लिद भी नहीं हो सकता। अब अगर किसी मुक़ल्लिद से करामात का प्रकटन भी हो तो वह ऐसा ही है जैसा कि हिन्दू साधुओं से होता है। अतः यदि कोई मुक़ल्लिद वली मशहूर हो तो हम उस को वली तस्लीम

नहीं करेंगे और अगर वास्तव में वली हो तो उस को मुक़ल्लिद तस्लीम नहीं करेंगे, इसलिए कि इस प्रकार की हठ बातिल है। करामत वलायत का पैमाना नहीं, बल्कि रसूल सल्ल0 का अनुसरण वलायत का पैमाना है।

मीज़ाने कुबरा इमाम शोअ़रानी में है। "वलायत पर जिस का **क़दम** पहुंच गया, वह उलमा की तक़लीद नहीं करता।"

(अल इर्शाद पृ0 238, लेखक अबु याहया मुहम्मद)

अल्लामा शैख़ कुरदी अपने रिसाला में लिखते हैं। "मशाइख़ का तरीक़ा सुन्नत का अनुसरण और अदमे तक़्लीद है।"

(अल इर्शाद पृ0 238)

इस तरह की और भी इबारतें हैं। अल इर्शाद देखें।

9- सहाबा किराम रज़ि0, ताबअीन रह0, अइम्मा-ए-दीन, सब के सब ग़ैर मुक़ल्लिद थे और सब के सब वली। मशहूर इमामुल हदीस हज़रत इमाम हसन बसरी रह0 क्या मुक़ल्लिद थे? हज़रत निज़ामुद्दीन रह0 औलिया का कथन मशहूर है: अबु हनीफ़ा के[1] के बारे में इससे बेहतर और सच्ची बात दूसरा नहीं कह सकता।

मतलब यह कि हर भरोसे मन्द वली ग़ैर मुक़ल्लिद था। कहां तक लिखूं? रहा यह कि वे मुक़ल्ल्दि कहलाते हैं, तो यह तो मुक़ल्लिदीन

1- इमाम अबु हनीफ़ा रह0 कौन होते हैं कि उन के कथन को रसूलुल्लाह की हदीस के मुक़ाबले में पेश करूं।" अहले हदीस ही में औलिया अल्लाह हुए और इतने हुए हैं कि उन की गिनती ना मुमकिन है। हज़रत शैख़ सय्यद अब्दुल क़ादिर जीलानी रह0 अहले हदीस थे। और अहले हदीस को नाजी सम्प्रदाय शुमार करते थे। (गुनियतुत्तालिबीन) बल्कि उन्होंने हंफ़ियों को गुमराह सम्प्रदाय में शुमार किया है। हज़रत ख़्वाजा सय्यद मुइनुद्दीन हसन चिश्ती अजमेरी रह0 भी अहले हदीस थे, वह रात को दुआ मांगा करते थे।

اجعلنی فی زمرة اهل الحديث يوم اليمة.

" ऐ अल्लाह! मुझे क़यामत के दिन अहले हदीस की जमाअत से कीजियो।"

(तज़किरतुस्सालिहीन।" लेखक मौलाना शमसुद्दीन अकबर आबादी भाग-3 पृ0 249)

का हमेशा तरीक़ा रहा है कि वह हर एक को बदनाम कर देते हैं, यहां तक कि इमाम इब्ने तैमिया रह0 और इमाम इब्ने कय्यम रह0 तक को उन्होंने हंबली मशहूर कर दिया। शाह वलीउल्लाह साहब रह0 और उन के ख़ानदान के चश्म व चराग़ सब मुक़ल्लिद मशहूर हैं।

10- मुहम्मद हाशिम ठट्ठवी को सलाम का जवाब आना वग़ैरह यह सब अंधविश्वास हैं, हमारे नज़दीक हुज्जत नहीं। हुज्जत केवल कुरआन व हदीस है।

11-यह आरोप है कि इस जमाअत को अंग्रेज़ों ने इस्लाम में फूट डालने के लिए बनाया था, यह जमाअत मौलाना सय्यद अहमद शहीद और मौलाना सय्यद इसमाईल शहीद के ज़माने से 1947 ई0 तक अंग्रेज़ों से लड़ती रही। उन के आख़िरी अमीर मौलाना फ़ज़ल इलाही वज़ीर आबादी रह0 पाकिस्तान बनने के बाद चंबड़ से पाकिस्तान चले आए। जमाअते मुजाहिदीन को तोड़ दिया, चंबड़ सरहदी इलाक़ा में एक मक़ाम है पूरे डेढ़ सौ साल तक यह जमाअत अंग्रेज़ों से लड़ती रही, फांसियां भी हुईं, गिरफ़तारियां भी हुईं, काले पानी भी भेजे गए। हां अहया–ए–इस्लाम का उस ज़माने में केवल एक मदरसा था और वह दिल्ली में था। इस के मुक़ाबिल एक मदरसा देवबन्द में क़ाइम किया गया, उस से ही फूट की बुनियाद पड़ी और डूबती हुई हंफ़ियत को सहारा मिल गया। उस मदरसे ने दीन की ख़िदमत तो ख़ाक की उल्टा कुरआन व हदीस को रद्द करने का मसाला तय्यार किया।

12-आप उस मौलवी से यही मुतालबा कीजिए कि उन चार इमामों कि तक़लीद लाज़िम होने पर कुरआन व हदीस पेश करें। फिर ज़बान से नीयत करने की हदीस पेश करें। गर्दन का मसह

पुश्ते कफ़ से करने की हदीस पेश करें, आदि आदि। अगर न कर सकें तो कहिए कि यह तुम्हारा मज़हब इस्लाम नहीं, तुम्हारा गढ़ा हुआ मज़हब है। लोगों की रायों का पुलिन्दा और लज्जा जनक मसाइल का केन्द्र है।

अल्लाह तआला आप की मदद फ़रआए। आमीन

तय्यब साहब और गुलाम हुसैन साहब और बच्चों को सलाम कहिएगा।

फ़क़त

मसऊद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब

अस्सलाम आलैकुम!

आप का पत्र मिला। बड़ी खुशी हुई, आप ने जो कुछ समझाया वह मैंने अच्छी तरह समझ लिया है, बेहतरीन दलाइल से आप ने हर एक चीज़ व्याख्या के साथ बयान फ़रमा दी है। आप के सारे पत्र ही बेहतरीन दलाइल से भरे हुए हैं। लेकिन आप के इस पत्र में जो मज़ा आया वह बयान नहीं कर सकता। पत्र पढ़ने के बाद मुझ पर एक बे खुदी की सी कैफ़ियत तारी रही।

मेरी ज़बरदस्त इच्छा है कि आप की और मेरी पत्र व्यवहार जल्द ही प्रकाशित हो जाए। आप के सारे पत्र अब मैं नईम साहब को करांची रवाना कर रहा हूं। ताकि जल्द किताब प्रकाशित हो जाए। लेकिन एक बात इस पत्र में अधूरी रह गई है। वह यह कि उस मौलवी ने जो यह कहा था कि हम क़िब्ला की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़ते हैं। अल्लाह की वहदानियत तौहीद पर ईमान रखते हैं, हुजूर सल्ल0 की रिसालत व नुबुवत पर ईमान रखते हैं, कलिमा गो हैं, ईमान की जो शाखें हदीसों में आई हैं उन सब पर हमारा ईमान है। तो क्या फिर भी हम मुसलमान नहीं हैं? और इस का जवाब उस ने मांगा था, जहां मैं ख़ामोश हो गया था, उस पर भी रोशनी डालिए।

मौलवी अशरफ़ जिस से मेरा मुनाज़िरा हुआ था, कुछ रोज़ हुए

मालूम हुआ है कि उस ने रफ़उल यदैन शुरु कर दी है। वह अपने को अब मुहक़्क़िक़ कहलाता है मुझे यह सुन कर बड़ी खुशी हुई। संयोग से दूसरे दिन मौलवी अशरफ़ गुलामुल्लाह आया था। मुझ से मस्जिद में मुलाक़ात हुई। उस ने कहा कि मैं अब मुहक़्क़िक़ हंफ़ी हूं, अंधा मुक़ल्लिद नहीं हूं। अंधी तक़्लीद के ख़िलाफ़ हूं, जिस तरह अब्दुल हई लखनवी और सनाउल्लाह साहब आदि मुहक़्क़िक़ हंफ़ी थे, ये लोग बड़े पाए के मुहद्दिस थे लेकिन हंफ़ी थे। जैसे मुल्ला अली क़ारी, शाह वलीउल्लाह साहब रह0 हंफ़ी आदि कहा कि इतने बड़े बड़े मुहक़्क़िक़ बुजुर्ग जिन्होंने दीन की तहक़ीक़ की, वह सब इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के ही मुक़ल्लिद थे। कहा कि आज कल के नए शिक्षित लोग दो चार किताबें पढ़ कर इजतिहाद का दावा करने लगते हैं और मुहद्दिस बन जाते हैं, दुनिया के सारे ग़ैर मुक़ल्लिदों को मेरा चैलेंज है। जो मेरे मुक़ाबले पर आएगा मैं उस को मुंह तोड़ जवाब दूंगा ग़ैर मुक़ल्लिद जितने हैं सब वहाबी हैं।

वहाबी हैं मैंने कहा कि जनाब हज़रत सनाउल्लाह अमृतसरी तो अहले हदीस थे, आप हंफ़ी का लक़ब उन के नाम के साथ क्यों चिपका रहे हैं? कहने लगा कि वह मुहक़्क़िक़ थे। मैंने उस से बुख़ारी शरीफ़ के बारे में सवाल किया तो कहने लगा कि सनाउल्लाह अमृतसरी के कथनानुसार बुख़ारी की सारी हदीसों पर तो एक आदमी अमल नहीं कर सकता, क्योंकि उस में बहुत सी हदीसें ज़ईफ़ हैं, कहने लगा कि बुख़ारी के दो तीन उस्ताद शीआ थे। इस लिए उस पर शीओं का रंग ग़ालिब है। उस ने बहुत सी हदीसें शीओं को खुश करने को लिख दी हैं। हम मुहक़्क़िक़ लोग तहक़ीक़ करने के बाद ही हदीस पर अमल करते हैं। कहा कि इमाम इब्ने क़य्यम रह0 और इमाम इब्ने तैमिया रह0, उन लोगों में और

हम में कोई फ़र्क़ नहीं है, एक बात का फ़र्क़ है। हम लोग वसीला के क़ाइल हैं और वे लोग क़ाइल न थे। कहा कि हज़रत ख़लीलुर्रहमान साहब ने एक किताब लिखी है और उस को रद्द करने के लिए दस हज़ार रुपए इनाम मुकर्रर कर रखा है, मगर आज तक किसी ग़ैर मुक़ल्लिद से उस का जवाब बन नहीं पड़ा। यह ग़ैर मुक़ल्लिद तो हमारे मुक़ाबले पर आते हुए डरते हैं, यह तो केवल जाहिलों को फ़ांसते हैं। लोग अक़ाइद में पक्के वहाबी हैं।

मैंने कहा कि जब आप ने तहक़ीक़ कर लिया है तो फिर तहक़ीक़ के बाद हंफ़ी क्या मायना। यह क्या तुक है, कहीं मजिस्ट्रेट भी क़ैदी बन सकता है। आप जब मुहक़्क़िक़ बन गए तो आप ने क्या तहक़ीक़ की। मौलवी अब्दुल हई साहब ने तो यह तहक़ीक़ फ़रमायी कि फ़िक़ह की किताबें झूठी हदीसों में भरी पड़ी हैं, और बहुत से मसअले कुरआन व हदीस के ख़िलाफ़ हैं। कहने लगा कि इस के बावजूद वह हंफ़ी थे। उन्होंने इमाम अबु हनीफ़ा रह0 का दामन नहीं छोड़ा यह है ईमान की पुख़्तगी। इस की बेजा मंतिक़ का क्या जवाब हो सकता है? मैं तो हैरान रह गया, मेरी समझ में नहीं आया कि हंफ़ियत में ऐसी क्या बात है कि तहक़ीक़ के बावजूद भी आदमी इस से चिपका रहता है। क्या हंफ़ियों या मुक़ल्लिदों के पास ऐसी कोई ख़ुफ़िया चीज़ मौजूद है कि जिस की वजह से ये लोग तहक़ीक़ करने के बाद भी तक़लीद नहीं छोड़ते बल्कि अहले हदीस होने को बुरा समझते हैं।

आप इस पर कुछ रोशनी डालिए ताकि यह गुत्थी सुलझ जाए। इस का यह मतलब नहीं है कि मुझे कोई शक अपने मसलक पर हुआ है। हमारा मसलक तो माशाअल्लाह पाक व साफ़ है। और इस से बेहतर कोई मसलक ही नहीं और जब तक इंसान इस मसलक

पर नहीं आएगा तब तक इस का मामला संदिग्ध है और यह बिल्कुल बजा और सही बल्कि हक़ीक़त ही है मगर मैं इन हंफ़ियों की हठ धर्मी की वजह जानना चाहता हूं कि तहक़ीक़ के बाद यह हंफ़ी क्यों कहलाते हैं। मेरे साथी तय्यब साहब के दिल में भी वसवसा आता है। उन्होंने इस का इज़हार मुझसे कई बार किया। उन्हीं तय्यब साहब का लड़का इसी मौलवी अशरफ़ का शागिर्द है। इस मौलवी के गांव में रहता है। मौलवी अशरफ़ ने उस को खूब भर दिया है, इस लिए उस लड़के ने बाप को छोड़ दिया है। मौलवी के गोठ में रहता है। वहां तय्यब का सारा ख़ानदान बाप आदि सब तय्यब के ख़िलाफ़ हो गए हैं। गावं वाले और उन के ख़ानदान वाले सब उन को बे दीन और वहाबी कहते हैं, नमाज़े जुमा का छोड़ने वाला कहते हैं। कहते हैं तू वलायती मास्टर नवाब के पीछे चल रहा है और उस ने तुझ को बे दीन कर दिया है। यहां तय्यब साहब तो माशा अल्लाह अपने मसलक पर क़ाइम हैं लेकिन इस वसवसा का इज़हार उन्होंने किया था जिस का मैंने ऊपर ज़िक्र किया है। मैं आप का हर पत्र मियां तय्यब को सुनाता हूं। वह बड़े शौक़ से सुनते हैं। इस लिए आप वज़ाहत से इस चीज़ पर रोशनी डालिए।

दौराने क़याम सजावल में मौलवी नूर मुहम्मद साहब ने मुझ से कहा था कि इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के ज़माना तक हदीसों की रिवायत करने वाले कम थे, इस के बाद रावी बढ़ गए और रावियों के बढ़ जाने की वजह से हदीस के शब्द क़ाइम और महफ़ूज़ नहीं रह सकते। ज़रूर कमी बेशी हो जाती है। इस लिए हम हिफ़ाज़त दीन की ख़ातिर इमाम साहब रह0 के क़ौल पर अमल करते हैं और इमाम साहब के कथनों को उन के शागिर्दों ने महफ़ूज़ कर लिया था। यही वजह है कि हम तक़्लीद को वाजिब क़रार देते हैं। कोई

व्यक्ति हमारे इमाम की शान में बे अदबी करेगा तो हम उस के पीछे नमाज़ नहीं पढ़ेंगे। यही बात मौलवी अशरफ़ ने भी दोहराई तो क्या उन की हठ धर्मी का यही राज़ है और क्या यह सच हो सकता है। सजावल में तबलीग़ी इजतिमाओं में तक़रीर किया करता था, लेकिन मौलवी नूर मुहम्मद ने मुझ को मना कर दिया कि उपदेश और तक़रीर करना हमारा अर्थात आलिमों का काम है, आप उपदेश व तक़रीर नहीं कर सकते। आप के उपदेश और तक़रीरें ईमान के लिए ख़तरा हैं। आइंदा से आप उपदेश और तक़रीर न किया कीजिए बल्कि केवल नमाज़ रोज़े की ताकीद की कीजिए। मुझे उन की यह बात अभी तक याद है। मुझे इस बात से बड़ा दुख हुआ था। मैंने उन से कहा था कि मैं भी तो कुरआन और हदीस ही के आदेश बतलाता हूं। उन्होंने कहा था कि आप स्वयं वाक़िफ़ नहीं तो दूसरों को क्या बतलाएंगे। क्या यह सहीह है कि हम को कुरआन व हदीस के आदेश बतलाने का हक़ नहीं है?

कल एक व्यक्ति मेरे पास आया, कहने लगा आप एक मसअला मुझे बतला दीजिए, मैं अहले हदीस बनने के लिए तैयार हूं वह यह कि एक आदमी है, वह जुंबी है, उस का जानवर मर रहा है, नमाज़ का समय ख़त्म हो रहा है अब वह क्या करे जानवर को ज़बह करता है तो नमाज़ जाती है, अगर गुस्ल करता है पाक होने के लिए तो जानवर मर जाता है। इस बारे में हदीस दिखाइए, हदीस न मिले तो फिर फ़िक़ह की तरफ़ आना पड़ेगा। जिस से आप को फ़िक़ह के महत्व का अंदाज़ा हो जाएगा। इस के साथ और भी लोग थे। मालूम होता है कि शरारतन किसी ने उस को भेजा था। मैंने कहा कि मैं हदीस देख कर बतलाऊंगा और अगर हदीस में न मिलेगा तो फिर अहले ज़िक्र से पूछ कर बतलाउंगा। क्योंकि अल्लाह तआला का

यही हुक्म है। अल्लाह तआला का हुक्म यह नहीं है कि हंफ़ी फ़िक़ह में ही देखो, या हंफ़ी ही से पूछूं, या शाफ़अी ही से पूछो जो भी अहले ज़िक्र होगा उस से पूछो कर बतलाऊंगा। फिर मैंने कहा कि आप के चेहरा पर दाढ़ी नहीं है, आप दाढ़ी मुंडे हैं, आप दाढ़ी मूंडने का हुक्म फ़िक़ह में बतला दें, मैं अभी हंफ़ी बन जाने को तैयार हूं। आप नमाज़ नहीं पढ़ते। फ़िक़ह में नमाज़ न पढ़ने की इजाज़त दिखादें। मैं अभी हंफ़ी हाने को तैयार हूं। जब आप नमाज़ ही नहीं पढ़ते तो फिर जानवर के मरने का आप को क्या अफ़सोस है,और हंफ़ी फ़िक़ह जिस का आप बार बार गर्व के साथ ज़िक्र करते हैं, क्या चीज़ है? क्या वह कोई आसमानी किताब है जिस के पढ़ने और उस पर अमल करने का हम को अल्लाह और रसूल सल्ल0 ने हुक्म दिया है। हम तो शरीअत के आदेशों को शरीअत के ख़ज़ाना ही में ढूंडेंगे, और वह ख़ज़ाना कुरआन व हदीस है, या सहाबा किराम रज़ि0 का अमल देखेंगे या अहले ज़िक्र से पूछेंगे। फिर वे लोग यह कह कर चले गए कि अच्छा आप हदीस देख कर दलील के साथ जवाब देना।

मैं ख़्याल करता हूं कि यह सब उन लोगों की शरारत है, उन से बात करना या बहस करना बेकार है, क्योंकि उन को अपनी इस्लाह तो मंजूर है ही नहीं। तहक़ीक़ करना ही नहीं चाहते। बेकार में फ़साद की नीयत से आते और परेशान करते हैं। इस लिए मैंने अब यह सोचा कि ख़ामोश रहना चाहिए और किसी से कोई बहस नहीं करना चाहिए। अतएव कल रात ही का क़िस्सा है कि एक व्यक्ति मेरे पास एक हदीस लेकर आए कि देखिए जनाब! यह हदीस है लिखा है कि इमाम की क़िरअत मुक़तदी की किरअत है। मैंने कहा कि बहुत अच्छा मुबारक हो।

कहने लगे, फिर आप मत पढ़िए, मैंने कहा मैं ज़रूर पढ़ूंगा आप मुझे कैसे रोक सकते हैं? फिर वह ख़ामोश हो गए। मैंने कहा कि देखिए, हज़रत इमाम शाफ़अी रह0 बर हक़ हैं वह पढ़ते हैं, इस लिए मैं भी पढ़ता हूं। आप शाफ़अी हज़रात को रोकिए। मालिकी, हंबली, अहले हदीस सब पढ़ते हैं, जाकर उन सब को रोकिए और मेरा मज़हब तो कुरआन और हदीस है। इसलिए मैं तो हदीस पर अमल करूंगा, आप की निराली मंतिक़ पर नहीं चलूंगा। फिर वह चला गया, चूंकि इस का इरादा मात्र शरारत था, इसलिए मैंने इस से ऐसी बात की। इस से फ़ायदा यह है कि लोग शरारत नहीं करेंगे। बेकार में परेशान नहीं करेंगे।

आप मेरे नाम के साथ अहले हदीस लिखा कीजिए, यह भी एक क़िस्म की तबलीग़ है या अगर आप की नज़र में लिखना मुनासिब न हो तो न लिखिए। मैं इंशा अल्लाह कल कराची आऊंगा। बाक़ी ख़ैरियत है। तय्यब भी साथ होंगे, बच्चे आदि सब कराची चले गए हैं। तय्यब साहब और गुलाम हुसैन साहब सलाम कहते हैं।

फ़क़त

नवाब

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

मिन जानिब नवाब

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब मद्दा जिल्लहु

अस्सलाम आलैकुम!

कुछ दिन पहले एक पत्र भेजा था, शायद मिला होगा। मैं तय्यब साहब के साथ कराची गया था। कराची में एक साहब ने मुझे एक किताब दी जिस का नाम "فیوض الحرمین" (अनुवादित) है यह किताब हज़रत शाह वलीउल्लाह साहब रह0 की लिखी हुई है। قرآن محل(मुहम्मद सईद एण्ड़ सन्ज़) ने प्रकाशित की है। इस किताब के अध्ययन से तो मामला ही उल्टा हो जाता है। कुछ बातें मेरी समझ में नहीं आती हैं। एक अहले हदीस को मैंने यह किताब दिखाई, तो उन्होंने कहा कि आप यह किताब फ़ौरन वापस कर दीजिए। बेकार किताब है, बेकार है, कदापि न पढ़िए। आदि।

मैंने कहा जनाब मैं इस का क़ाइल नहीं हूं, मैं तो इस की तहक़ीक़ करूंगा कि क्या यह हवाले जो इस किताब में दिए गए हैं सही हैं या नहीं। अगर मैं ऐसा नहीं करूंगा तो मेरे दिल में एक वसवसा रहेगा, मगर बावजूद कोशिश के वे किताबें मुझे न मिल सकीं जिन का हवाला इस किताब में दिया हुआ है। मैं कुछ बातें आप को नक़्ल कर रहा हूं। कृपया इस पर रोशनी डालिए कि क्या यह हवाले सही हैं, क्योंकि अगर उन को सही मान लिया जाए तो शाह साहब रह0 की दूसरी किताबें ग़लत हो जाती हैं, और अगर सही नहीं हैं तो इस का मुंह तोड़ जवाब जल्द प्रकाशित होना

चाहिए।

उसका मैटर यह है।

"फ़ुयूज़ुल हरमैन" अनुवाद उर्दू, लेखक हज़रत शाह वलीउल्लाह साहब मुहद्दिस देहलवी रह0

अनुवादक: मौलवी आबिदुर्रहमान सिद्दीक़ी कांधलवी

प्रकाशक: मो0 सईद एण्ड सन्ज़ क़ुरआन महल कराची, मुक़ाबिल मौलवी मुसाफ़िर ख़ाना कराची।

हकीमुल उम्मत शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के मुक़ल्लिद थे, और मसाइल फ़रोआ में बिल्कुल हंफ़ी थे, स्वयं ही मुक़ल्लिद न थे बल्कि उन का कहना है कि मुक़ल्लिद ही रहने पर रसूलुल्लाह सल्ल0 ने तीन वसीयतों में से एक वसीयत चारों मज़ाहिब के साथ मुक़ल्लिद रहने की फ़रमाई है और इस बात की कि उन से बाहर न रहूं और उन में थोड़ी ताक़त हम आहंगी पैदा करूं। (फ़ुयूज़ुल हरमैन)

इन चारों मज़ाहिबे में से ख़ास कर मज़हब हंफ़ी को अपनाने और हंफ़ी बनने की हज़रत शाह वलीउल्लाह रह0 को जनाब रसूलुल्लाह सल्ल0 ने हिदायत फ़रमाई है।

ایاک ان تخالف القوم فی الفروع فانه تناقض لمراد الحق.

(فیوض الحرمین)

"ख़बर दार फ़रोआत में क़ौम की विरोध से बचना, क्योंकि यह हक़ के ख़िलाफ़ हैं।"

यह हज़रत शाह साहब रह0 की अपनी शहादत है कि मैं हंफ़ी हूं और इस से बढ़ कर और क्या शहादत हो सकती है। मशहूर ग़ैर मुक़ल्लिद आलिम नवाब सिद्दीक़ हसन खां रह0 फ़रमाते हैं कि उन का सारा तरीक़ा हंफ़ी था और शरीअत फ़िक़ह है। इसी पर सल्फ़

और ख़ल्फ़ रहे हैं। في ذكر الصحاح الستة. नवाब साहब ने केवल यह नहीं बताया कि शाह वलीउल्लाह रह0 हंफ़ी थे बल्कि पूरे ख़ानदाने शाह वलीउल्लाह रह0, शाह अब्दुल अज़ीज़ रह0, शाह अब्दुल हक़ रह0 और शाह इसमाईल शहीद रह0 के बारे में फ़रमा दिया कि लोग इन हस्तियों को वहाबी कहते हैं, हालांकि यह घराना सारे का सारा ख़ालिस हंफ़ी है। "هم بيت علم الحنفية"

शाह मुहम्मद इस्माईल रह0 शहीद और शाह अब्दुल हई रह0 इस ख़ानदान के चश्म व चराग़ और मौलवी सय्यद अहमद बरेलवी के निष्ठावान मुरीदों में से हैं, सय्यद साहब और उन के साथियों के बारे में अंग्रेज़ की नापाक सियासत ने दूसरे आरोपों के अलावा यह भी आरोप लगाए हैं कि वह हंफ़ी नहीं हैं। इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के मुक़ल्लिद नहीं हैं। सय्यद साहब ने इस आरोप का खंडन करते हुए एक बयान में अपना और अपने साथियों का मसलक ज़ाहिर किया है कि बाप दाद से हंफ़ीउल मसलक हैं। क़ारी अब्दुर्रहमान पानी पती "कश्फ़ुल हिजाब" में तहरीर फ़रमाते हैं कि शाह अब्दुल अज़ीज़ और शाह मुहम्मद इसहाक़ हंफ़ी थे और सख़्त भी थे सुन्नी हंफ़ी थे मतलब कि शाह साहब रह0 के ख़ानदान का एक एक व्यक्ति हंफ़ी था, मुक़ल्लिद था और मुक़ल्लिद भी। इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के थे। ग़ैर मुक़ल्लिद आलिम अब्दुर्रहमान मुबारक पूरी रह0 ने अपनी किताब "तहक़ीक़ुल कलाम" में हज़रत शाह को हंफ़ी तस्लीम किया है।

इन तथ्यों की रोशनी में शाह साहब को ग़ैर मुक़ल्लिद बतलाना ज्ञान की दुनिया में बहुत बड़ी ग़ैर ज़िम्मेदाराना बे बाकी है। हिन्दुस्तान में इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की तक़लीद वाजिब है। शाह साहब ने केवल इसी चीज़ पर बस नहीं किया कि तक़लीद शख़्सी

वाजिब है बल्कि यह भी स्पष्ट फ़रमाया कि मज़ाहिब तो चार हैं और चारों हक़ हैं, मगर हिन्दूस्तान में केवल इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की तक़्लीद वाजिब है। अतएव फ़रमाते हैं कि जब इन्सान बे इल्म हिन्दुस्तानी शहरों और मावराउन्नहर का रहने वाला हो, वहां कोई विद्वान शाफ़अी, मालिकी और हंबली न हो तो उस पर इमाम तक़्लीद वाजिब है। और इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के मज़ाहिब से निकलना हराम है। क्योंकि उस समय वह अपनी गर्दन से शरीअ़त का पट्टा निकाल देता है और वह बेकार रह जाएगा। हज़रत शाह साहब रह0 फ़रमाते हैं कि फ़िक़ह हंफ़ी में केवल शख़्सी राय नहीं है, बल्कि यहां इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के साथ इमाम अबु यूसुफ़ रह0 और इमाम मुहम्मद रह0 भी हैं और यह दोनों इमाम साहब के शागिर्द हैं। इन तीनों में से जिस का कथन इर्शादे नुबुवत के ज़्यादा क़रीब हो इसी पर फ़तवा है और बस। अगर किसी मक़ाम पर ये तीनों ख़ामोश हों तो अहनाफ़ में से किसी के कथन को अपना लिया जाए, इसी का नाम हंफ़ियत है और शाह साहब रह0 फ़रमाते हैं कि यह बात मेरी स्वयं की गढ़ी हुई नहीं है, बल्कि मुझे जनाब रसूलुल्लाह सल्ल0 ने बतलाया है कि मज़हब हंफ़ी में बेहतरीन तरीक़ा है। (फ़ुयूज़ुल हरमैन)

और शाह साहब ही फ़रमाते हैं कि इमाम बुख़ारी रह0 और दूसरे मुहद्दिसीन की जमा करदा अहादीस के हंफ़ियत ही ज़्यादा क़रीब है। هی اوفق الطرق بالسنة المعروفة التی جمعت ونقحت فی زمان البخاری واصحابه. (فیوض الحرمین)

शाह साहब रह0 ने इसी किताब के समापन पर मज़ाहिब की हक़ीक़त से बहस की है, पहले मज़हब की हक़ीक़त का मतलब बतलाया है कि: معنی حقیقة المذهب ان تکون احکامه مطابقة لما ماله رسول

الله صلى الله عليه وسلم ولما كان عليه القرون المشهود لها. (فيوض الحرمين)

इस के बाद आगे लिखते हैं कि जब यह प्रस्तावना हो चुकी तो अब पते की बात भी सुनो, वह यह कि मुझे नज़र आया कि हंफ़ी मज़हब में एक बड़ा गहरा भेद है, मैं इस पर ग़ौर करता रहा यहां तक मुझे पता चल गया और अपनी आंख़ों से देख लिया कि मज़हब हंफ़ी का दूसरे मज़ाहिब के बारे में पलडा भारी है।

(फ़ुयूज़ुल हरमैन)

हवाले ख़त्म हुए।

मैं चाहता हूं कि इस का जवाब ज़रूर लिखा जाए, वरना नए लोग इस को पढ़ कर गुमराह हो जाऐंगे, इस का जवाब आप ज़रूर लिखें। इस तहरीर के पढ़ने के बाद तो मुझे तक़्लीद से और भी नफ़रत हो गई है। मैं गुनहगार इन्सान हूं, अपने सारे गुनाहों से तौबा करता हूं। अल्लाह तआला ही मुश्किल आसान फ़रमा सकते हैं, उन के पास कोई कमी नहीं, आप से दुआ का तालिब हूं, मेरी तरफ़ से अहले हदीस हज़रात की ख़िदमत में सलाम अर्ज़ है।

ख़ादिम नवाब

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला 15 जून 1962 ई0

बख़िदमत जनाब मख़दूमी व मुकर्रमी नवाब साहब

अस्सलाम आलैकुम!

(अम्मा बाद) आप का पत्र मिला। आप ने लिखा था कि मैं कराची जा रहा हूं इस लिए मैंने जान बूझकर जवाब में देरी की, अब आप का दूसरा पत्र मिला, इस से आप का वापस आना मालूम हुआ। आप तो शायद मौसम गरमा की छुट्टियों में गए होंगे फिर इतनी जल्दी क्यों वापस आ गए।

अब आप के सवालों का जवाब लिखता हूं।

1- "मौलवी साहब ने कहा था कि हम क़िब्ला की तरफ़ मुंह करके नामज़ पढ़ते हैं, अल्लाह की वहदानियत पर हमारा ईमान है, हुजूर सल्ल0 की रिसालत पर ईमान है आदि आदि तो क्या फ़िर भी हम मुसलमान नहीं हैं?

बहुत से कलिमा पढ़ने वाले भी मुश्रिक होते हैं

इस सवाल का जवाब मैंने उस पत्र में दिया था। ग़लती हुई कि मैंने ऊपर सवाल नक़्ल नहीं किया था, ख़ैर अब फिर लिखता हूं।

जवाब

इन सब बातों के बावजूद भी आप मुसलमान नहीं हैं, इसलिए कि आप शिर्क कर रहे हैं, कुरआन की आयत है: وما يؤمن كثرهم بالله الا وهم مشركون. अर्थात बहुत से लोग अल्लाह पर ईमान लाने के

बावजूद भी मुश्रिक होते हैं।" (सूरा–ए–यूसुफ़ आयत न0 106)

दूसरी आयत में इर्शाद बारी है:

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَلَمْ يَلْبِسُوْآ اِيْمَانَهُمْ بِظُلْمٍ اُولٰئِکَ لَهُمُ الْاَ مْنُ وَهُمْ مُهْتَدُوْنَ.(الانعام ٨٣)

"जो लोग ईमान लाए और उन्होंने अपने ईमान को ज़ुल्म के साथ लिप्त नहीं किया। उन्हीं के लिए अमन है और वही हिदायत पर हैं।" (सूरह अनआम–83)

जब यह आयत उतरी तो सहाबा किराम रज़ि0 बहुत घबराए कि हम में ऐसा कौन है जो ज़ुल्म से बिल्कुल महफूज़ हो।

अल्लाह तआला ने यह आयत नाज़िल फ़रमाई:

ان الشرک لظلم عظیم.

"बेशक शिर्क ज़ुल्म अज़ीम है।"

अर्थात इस आयत में ज़ुल्म से तात्पर्य शिर्क है। (सहीह बुख़ारी)

मतलब यह हुआ कि अमन व हिदायत उन के हिस्से में है जो ईमान लाने के बाद शिर्क न करें और क्योंकि आप कलिमा गो होने के बावजूद शिर्क करते हैं, अतः नतीजा साफ़ है।

तक़लीद बिदअत है, यह दीन में इज़ाफ़ा है, दीन में कमी बेशी अल्लाह का काम है क्योंकि आप ने तक़लीद को दाख़िल फ़िदीन किया, उस को वाजिब क़रार दिया, अतः आप शिर्क कर रहे हैं।

आप के यहां शरीअत साज़ी हुई, मसाइल गढ़े गए, जैसे

1– चुहा कुंए में गिर जाए तो इतने डोल पानी निकालो।

2– एक दिरहम से कम निजासत ग़लीज़ा माफ़ है, नमाज़ हो जाएगी।

3– शहर वाले नमाज़े ईद से पहले इस तरह कुरबानी कर सकते हैं कि जानवर को शहर के बाहर ले जाकर ज़बह कर दें।

आदि आदि।

क्योंकि आप इन मसाइल को वाजिबुत्तामील मानते हैं। अतः ام لهم شركوا شرعوا لهم من الدين مالم يأذن به الله. (شورىٰ) के तिहत शिर्क के अपराधी हुए।

आप लोग अहादीस सहीहा के ख़िलाफ़ अपने मज़हब को मानते हैं, जैसे हदीस है कि जो व्यक्ति सुबह की नमाज़ की एक रकअ़त आफ़ताब उदय होने से पहले पाले उसे नमाज़ मिल गई। (सहीह बुख़ारी) लेकिन आप के मज़हब में है कि वह नमाज़ नहीं हुई, इस से बड़ा शिर्क और कुफ़्र क्या होगा? इस तरह के बे शुमार मसाइल हैं।

ब: इस सवाल में जो बातें पैदा हुई हैं। उन सब बातों पर बरेलवियों, मिरज़ाइयों, राफ़ज़ियों, मुंकिरीने हदीस और सारे असत्य सम्प्रदायों की सहमति है तो क्या वे सब मुसलमान हैं?

मुक़ल्लिद मुहक़्क़िक़ नहीं हो सकता

2- मौलवी अशरफ़ अली साहब ने कहा कि मैं मुहक़्क़िक़ हंफ़ी हूं, अंधा तक़्लीदी नहीं हूं जिस तरह अब्दुल हई रह0, सनाउल्लाह अमृतसरी रह0, मुल्ला अली क़ारी और शाह वलीउल्लाह साहब रह0 मुहक़्क़िक़ हंफ़ी थे...... ग़ैर मुक़ल्लिद जितने हैं सब वहाबी हैं ...... दुनिया के सारे ग़ैर मुक़ल्लिदों को मेरा चैलेंज है।"

जवाबः इस वाक्य से साफ़ हुआ कि वे मुहक़्क़िक़ भी हैं और ग़ैर मुक़ल्लिद भी अर्थात सभी कुछ हैं।

तक़्लीद की परिभाषा

ا – التقليد اتباع الانسان غيره فيما يقول او يفعل معتقد الحقيقة

فيـه مـن غيـر نـظـر وتأمل فى الدليل كان هذا المتبع جعل قول الغير أو فعلهٔ قلادة فى عنقه من غير مطالبة الدليل. (حاشيه حسامى)

तक़्लीद दूसरे इंसान की करनी व कथनी के अनुसरण का नाम है, इस एतेक़ाद के साथ कि वही हक़ीक़त है। बिना इस के कि वह स्वयं दलील को देखे और उस में ग़ौर करे कि क्या यह मुक़ल्लिद ऐसा है कि उस ने ग़ैर के कथन या अमल को अपनी गर्दन का क़लादह (पट्टा) बना लिया है, बिना इस बात के कि वह दलील का मुतालबा करे।

2– التـقـليـد الـعـمل بقول الغير من غير حجة तक़लीद दूसरे व्यक्ति की बात पर बिना दलील जाने अमल करने का नाम है।

(मुसल्लमतुस्सबूत)

फ़िक़ह की परिभाषा

العلم الاحكام الشرعية عن ادلتها التفصيلية.

अर्थात शरअी अहकाम को तफ़्सीली दलाइल के साथ जानना।

(मुसल्लमतुस्सुबूत)

क़रीब क़रीब यही शब्द स्पष्टी करण में भी हैं।

फ़िक़ह की परिभाषा दूसरे शब्दों में: معرفة النـفس مالها وماعليها. इंसानी कर्तब्यों की पहचान है। (तौज़ीह)

فالمعرفة ادراک الجزئيات عن دليل فخرج التقليد.

और पहचान के मायना यह हैं कि मसाइल को दलील से समझा जाए। अतः तक़्लीद इस इल्म (फ़िक़ह) से ख़ारिज है। (तौज़ीह) अर्थात मुक़ल्लिद को दलाइल की पहचान नहीं होती। अतः वह फ़क़ीह अर्थात धर्म शास्त्र नहीं हो सकता।

لايقال على المقلد لتقصيره عن الطاقة.

अर्थात फ़क़ीह का लक़ब मुक़ल्लिद के लिए नहीं बोला जा सकता। इस वजह से कि वह दलाइल की पहचान की ताक़त नहीं रखता। (तौज़ीह)

तक़लीद और फ़िक़ा की परिभाषा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मुक़ल्लिद इल्म से कोरा होता है। उस को फ़क़ीह नहीं कह सकते, लेकिन मुहक़्क़िक़ के लिए दलाइल की पहचान का होना ज़रूरी है वरना वह मुहक़्क़िक़ किस बात का, अतः ज्यों ही दलाइल की पहचान उसे हासिल हुई, वह मुक़ल्लिद नहीं रहा। अतः एक ही व्यक्ति मुक़ल्लिद भी हुआ और मुहक़्क़िक़ भी यह कभी नहीं हो सकता क्योंकि यह चीज़ बातिल है।

(स्पष्टीकरण मुसल्लमातुस्सुबूत। हिसामी। हंफ़ी उसूले फ़िक़ह की किताबें हैं। फ़िक़ह की किताबें दूसरी हैं)

बहुत से उलमा-ए- अहले हदीस को मुक़ल्लिदीन ने मुक़ल्लिद मशहूर कर दिया

और लोग तो ख़ैर हंफ़ी मशहूर हैं लेकिन अल्लामा अबुल वफ़ा सनाउल्लाह अमृतसरी रह0 को हंफ़ी कहना इंसाफ़ का ख़ून करना है, सारी ज़िन्दगी तक़्लीद के खंडन में गुज़री फिर भी वह मुक़ल्लिद मशहूर हैं।

बहर हाल इस बात से इतना तो साबित हुआ कि कोई व्यक्ति कितना ही बड़ा अहले हदीस क्यों न हो यह उसे मुक़ल्लिद बनाए बग़ैर नहीं छोड़ते हज़ारहा उलमा–ए–दीन ऐसे हैं जो अहले हदीस थे लेकिन सब मुक़ल्लिद मशहूर हैं। शाह वलीउल्लाह साहब रह0 और अब्दुल हई रह0 साहब का अहले हदीस होना स्वयं उन वाक्यों से ज़ाहिर है। अब भी अगर कोई उन के मुक़ल्लिद होने पर आग्रह

करता है तो ख़ैर हम उस आग्रह से इसको तस्लीम भी कर लें तो हम पर इसका क्या असर होगा। मुक़ल्लिदीन की सूची में एक की और वृद्धि हो जाएगी लेकिन हमारा उसूल जहां है वहीं रहेगा, अनुसरण केवल कुरआन व हदीस ही है, कोई माने या न माने।

3- अल्लामा अबुल वफ़ा सनाउल्लाह अमृतसरी रह0 ने लिखा है कि बुख़ारी शरीफ़ की सारी हदीसों पर तो एक आदमी अमल नहीं कर सकता, क्योंकि इस में ज़ईफ़ हदीसें भी हैं।

जवाब: क्या सबूत है कि यह कथन अल्लामा सनाउल्लाह साहब रह0 का है, उन की सैंकड़ों किताबें हैं, लेकिन कहीं उन्होंने यह नहीं कहा कि सहीह बुख़ारी में ज़ईफ़ अहादीस भी हैं, यह हो सकता है कि उन्होंने निरस्त कहा हो और यह ज़ईफ़ समझे हों, इस लिए कि निरस्त का ज़िक्र तो आ सकता है, लेकिन अमल निरस्त करने वाले पर किया जाता है, अमल निरस्त पर नहीं होता। और यह कोई आपत्ति की बात नहीं। जैसे सहाबा रज़ि0 के शराब पीने की घटना और फिर शराब के हराम का हुक्म नाज़िल होना। तो बेशक यहां केवल हुरमत पर अमल होगा न कि शराब पीने लग जाएं। कोई जाहिल ही यह बात कह सकता है कि निरस्त पर अमल करना चाहिए।

सहीह बुख़ारी में तो केवल सात हज़ार अहादीस ही हैं। मुसनद इमाम अहमद रह0 में तो पच्चास हज़ार अहादीस हैं, इमाम अहमद बिन हंबल रह0 फ़रमाते हैं कि मैंने कोई हदीस नहीं लिखी जब तक उस पर अमल नहीं किया। यहां तक कि पुछने भी लगवाए और फिर पुछने लगाने की हदीस बयान की। अब अगर पचास हज़ार अहादीस पर एक आदमी अमल कर सकता है तो सात हज़ार पर अमल करना क्या मुश्किल है? फिर यह लाज़िम ही कब है कि हर

हदीस पर अमल किया जाए तो नजात होगी।

जैसे रसूलुल्लाह सल्ल0 क़र्ज़ लिया करते थे। अब अगर कोई व्यक्ति सारी उम्र क़र्ज़ न ले तो क्या वह गुनहगार है? या पुछने न लगवाए तो वह मुजिरम है? या लौकी खाने का उसे इत्तिफ़ाक़ न हो तो उस का इस्लाम नाक़िस है?

4- "इमाम बुख़ारी रह0" के दो तीन उस्ताद शीआ थे, इस लिए उन पर शीअत का रंग छाया हुआ है। उन्होंने बहुत सी हदीसें शीओं को खुश करने के लिए लिख दी हैं।"

जवाबः यह बड़ा भारी आरोप है। क्या सहीह बुख़ारी में पाक पत्नियों रज़ि0 सिद्दीक़ अकबर रज़ि0, उमर फ़ारूक़ रज़ि0 आदि रज़ि0 के फ़ज़ाइल नहीं हैं? *क्या सहीह बुख़ारी में शीओं के मसाइल* का खंडन नहीं है। जैसे वज़ू में पैर धोने को बड़े जोर शोर से साबित किया है हज़रत अली रज़ि0 के फ़ज़ाइल का ज़िक्र अगर शीअत है तो सुबहानल्लाह हम सब को मुबारक हो, और इमाम नसाई रह0 को तो फ़ज़ाइले अली रज़ि0 बयान करने पर ही तो मारा गया। मतलब यह कि अगर कोई उस्ताद अली रज़ि0 की मुहब्बत में हद से बढ़ता है या उन को श्रेष्ठतम उम्मत समझता है लेकिन और कोई बेहूदगी नहीं करता, किसी की शान में गुस्ताख़ी को कुफ़्र समझता है। सच बोलता है और सच की हिमायत करता है तो ऐसा व्यक्ति अगर शीआ मशहूर हो जाए तो क्या उस की बात न मानी जाएगी। ख़ास तौर पर इस सूरत में कि उस की बात की हिमायत दूसरी अहादीस से भी होती हो। अगर इमाम बुख़ारी रह0 का कोई इस क़िस्म का उस्ताद हो तो कोई बात नहीं। आख़िर इमाम अबु हनीफ़ा रह0 भी तो मरजिया मशहूर हैं और उन्हीं की ख़ातिर अहनाफ़ को मरजियों की दो क़िस्में करनी पड़ी हैं।

मरजिया अहले सुन्नत, मरजिया अहले बिदअत। अगर कोई व्यक्ति इस तरह का हो कि अहले सुन्नत होते हुए अली रज़ि0 का भी क़ाइल हो तो क्या शीओं की दो क़िस्में नहीं हो जाऐंगी, शीआ अहले सुन्नत, शीआ अहले बिदअत। यह है विस्तार इस बात का कि बुख़ारी रह0 के दो तीन उस्ताद शीआ थे, हक़ीक़त में वे शीआ थे नहीं। हां मशहूर कर दिए गए या किसी ने मात्र पक्षपात या तहक़ीक़ न होने से शीआ कह दिया। यह बात बिल्कुल ग़लत है कि इमाम बुख़ारी रह0 गुमराह सम्प्रदायों से संबंध रखने वाले लोगों से अहादीस लिया करते थे और उन्हें हुज्जत समझते थे।

5– "अल्लामा इब्ने तैमिया रह0 और हाफ़िज़ इब्ने क़य्यम रह0 और हम में कोई फ़र्क़ नहीं।"

जवाब: यह बिल्कुल झूठ है, वह सख़्त क़िस्म के ग़ैर मुक़ल्लिद थे। वह इल्म दीन के बहुत बुलन्द मीनार थे, कहां वे और कहां यह। हाफ़िज़ इब्ने क़य्यम रह0 की किताब "आलामुल मोक़िईन" तक़्लीद के खंडन से भरी पड़ी है और शार्गिद हैं अल्लामा इब्ने तैमिया रह0 के।

6– "क्या हंफ़ियों या मुक़ल्लिदों के पास ऐसी कोई खुफ़िया चीज़ है कि जिस की वजह से ये लोग तहक़ीक़ करने के बाद भी तक़्लीद नहीं छोड़ते।"

तक़्लीद क्यों नहीं छुटती

जवाब: हक़ीक़त यह है कि वे तक़्लीद छोड़ देते हैं। लेकिन इसे व्यक्त आप के सामने नहीं करते अर्थात वह आप से बैर रखने की वजह से अपनी कमज़ोरी को आप के सामने पेश करके आप को खुश करना नहीं चाहते। इस को वह अपनी हार के जैसा समझते

हैं। उन का दिल जो कुछ जानता और मानता है, वह ज़बान् पर नहीं आता। वह जान बूझ कर हक़ का विरोध करते हैं जिस तरह यहूदी रसूलुल्लाह सल्ल0 को खूब पहचानने के बाद भी उन का विरोध करते थे। वह इस हक़ीक़त का स्वीकरण अवाम के सामने नहीं कर सकते, क्योंकि उन्हें अवाम से ख़ौफ़ होता है। उन से उन के सांसारिक फ़ायदे जुड़े होते हैं जो स्वीकरण के बाद ख़त्म हो जाते हैं। मानो इस तरह आयाते करीमा के अनुसार आख़िरत के बदले दुनिया को ख़रीद रहे हैं जिस तरह बादशाह हरक़िल तृतीय ने रसूलुल्लाह सल्ल0 को पहचान लिया। आप सल्ल0 के पास पहुंचने और आप सल्ल0 के पैर धोने की तमन्ना की। लेकिन हुकूमत जाने के डर से ईमान कुबूल नहीं किया और इस्लामी फ़ौजों के ख़िलाफ़ जंग करता रहा। शाह वलीउल्लाह साहब रह0 ने इस का जवाब बहुत अच्छा दिया है। वे लिखते हैं:

अनुवाद: जब यह मालूम हो जाए कि हदीस निरस्त नहीं है और उलमा की बड़ी संख्या उस पर अमल करती है और उस का विरोध केवल क़यास या इज्तिहाद से कोई बात कहता है तो ऐसी हालत में हदीस का विरोध करने का कोई सबब नहीं।

"الا نفاق خفی او حمس جلی."

सिवाए खुफ़िया कपट के या खुली मूर्खता के।

(उक़्दुल जय्यद)

इमाम अबु हनीफ़ा रह0 की जमा की हुई अहादीस कहां गई?

7- इमाम अबु हनीफ़ा रह0 के ज़माना तक हदीस के रिवायत करने वाले कम थे। बाद में रावी बढ़ गए। अतः शब्द क़ाइम और

महफ़ूज़ न रह सके ज़रूर कमी बेशी हुई, इसी लिए हम इमाम साहब के कथनों पर अमल करते हैं और इमाम साहब के कथन को उन के शार्गिदों ने महफ़ूज़ कर लिया था। यही वजह है कि हम तक़्लीद को वाजिब क़रार देते हैं।''

जवाब: रावियों के बढ़ जाने से हदीस ग़ैर महफ़ूज़ नहीं होती। जैसे अगर किसी हदीस को हम अपनी सनद से रसूलुल्लाह सल्ल0 तक पहुंचाऐं तो यह ज़रूर है कि हमारे और रसूलुल्लाह सल्ल0 के बीच लगभग बीस पच्चीस रावी होंगे लेकिन वह रिवायत ग़ैर महफ़ूज़ कैसे हो जाएगी जब कि वह इमाम मालिक रह0, इमाम बुख़ारी रह0 और इमाम मुस्लिम रह0 की किताबों में महफ़ूज़ कैसे हो सकती हैं, और अगर महफ़ूज़ नहीं थीं और इमाम साहब और उन के शागिर्दों ने महफ़ूज़ नहीं कीं और बाद में रावियों की कसरत के कारण वह बर्बाद हो गई तो क्या यही वह इस्लाम है जिस पर हमें और उन को गर्व है। अफ़सोस कि इमाम साहब के शार्गिदों ने इमाम साहब के कथनों को तो महफ़ूज़ किया और अहादीस रसूल सल्ल0 को नष्ट होने दिया। अगर हम इस को मान भी लें तो इस के यह मायना होंगे कि सही बुख़ारी की अहादीस ग़ैर महफ़ूज़ हैं हालांकि उलमा अहनाफ़ ने एक मत होकर उसे सही तस्लीम किया है। यहां तक कि अनवर शाह साहब ने तो इस के पूरी तरह ठीक होने का स्वीकरण किया है जो उन की किताब शरह सही बुख़ारी में मौजूद है।

8- क्या हम को क़ुरआन व हदीस के अहकाम बतलाने का हक़ नहीं है। नूर मुहम्मद साहब ने फ़रमाया कि सिवाए आलिमों के कोई तक़रीर नहीं कर सकता?

जवाब: क्यों नहीं है? हां तक़रीर करने का हक़ केवल दो

आदमियों को हासिल है। अमीर को या अनुयायी को, लेकिन न यहां कोई अमीर है न अनुयायी है। अतः हर व्यक्ति को بلغوا عني पर अमल करने का हक़ हासिल है। जब ख़िलाफ़ते राशिदा क़ाइम हो जाएगी तो फ़िर देखा जाएगा, क्योंकि मौलवी नूर मुहम्मद साहब न अमीर हैं न अनुयायी। अतः उन्हें भी तक़रीर का हक़ नहीं पहुंचता, मतलब वह भी हदीस के विरुद्ध तक़रीर करते हैं।

9– एक आदमी जुन्बी है। उस का जानवर मर रहा है। नमाज़ का समय ख़त्म हो रहा है। अब वह क्या करे?

जवाबः हमारे बुजुर्ग रह0 तो यह पूछते थे कि क्या ऐसा हुआ है? अगर वह कहते कि नहीं तो जवाब देते कि जाओ जब ऐसा हो तो सवाल करना। मैं कहता हूं यह मसअला फ़र्ज़ी है। न ऐसा हुआ है, न इंशाअल्लाह आइन्दा होगा। जब अल्लाह तआला ने इस मसअला के हल करने के लिए कोई क़ानून हमें नहीं दिया तो हमें क्या हक़ है कि पहले मसअला गढ़ें और फिर उस का जवाब गढ़ें अर्थात हम क़ानून साज़ हैं कि कोई क़ानून बना दें और जब किसी व्यक्ति को ऐसा मसअला पेश आए तो वह हमारे बनाए हुए क़ानून पर अमल करे। यह शरीअत साज़ी उन्हीं को मुबारक हो। हमारा तो केवल इतना काम है कि कुरआन या हदीस में इस मसअला का हल हो तो जवाब दे दें, वरना ख़ामोश रहें, हम क्यों अपने आप को क़ानून साज़ बनाकर गुनाहगार हों जिसको ऐसा मामला पेश आएगा वह जाने और उस का ईमान और इज्तिहाद जाने। जो उस की समझ में आए वह निष्ठा के साथ करे। वह इंशा अल्लाह मुजिरम नहीं होगा लेकिन अगर वह हमारे गढ़े हुए क़ानून पर अमल करता है तो मुश्रिक होगा। अतः हम तो ऐसे बेकार मसाइल से बचते रहते हैं।

राय और फ़तवा बाज़ी की निंदा

आप उन की शरारतों से न घबराइए। दृढ़ता से जमे रहिए। आप अगर ख़ामोश हो गए तो तबलीग़ रुक जाएगी। आप अल्लाह के भरोसा पर काम जारी रखिए, अल्लाह आप की मदद फ़रमाएगा। ان تنصروا الله ينصركم ويثبت اقدامكم (सुराः मुहम्मद) उन की शरारत बे शक आप को नागवार गुज़रती है। लेकिन इसी में बेहतरी है। ''عسى ان تكرهوا شيئا وهو خير لكم. हो सकता कि तुम किसी चीज़ को ना पसन्द करो और वह तुम्हारे लिए बेहतर हो।''

(बक़रा 212)

आप अगर किसी समय बहस में ख़ामोश भी हो जाऐं तो इस से दुखी न हों। इस लिए कि आप ने कब कहा कि मैं विद्वान हूं, सर्वज्ञाता हूं। यहां दारमी शरीफ़ के हवाले से सहाबा रज़ि0 और अइम्मा ताबअीन रह0 के कुछ कथन नक़्ल कर रहा हूं इन बे हूदा सवालों के लिए आप के काम आऐंगे। इन से अंदाज़ा होगा कि हमारे अइम्मा किराम कितने सादा लोग थे। फ़िक़ही उठा पठक वहां नहीं थीं।

1- अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 फ़रमाते हैं। ''जब तुम हम से कोई बात कुरआन या हदीस की पूछोगे तो हम बताऐंगे और नई बातें जो तुम ने निकाल ली हैं वह हमारी कुदरत से बाहर हैं।''

2- क़तादा रह0 मशहूर ताबअी इमाम फ़रमाते हैं। ''मैंने तीस बरस से कोई बात अपनी राय से नहीं कही।''

3- इमाम अबु हलाल ताबई रह0 फ़रमाते हैं: ''मैंने चालीस बरस से कोई बात अपनी राय से नहीं कही।''

4- हज़रत इमाम अता रह0 फ़रमाते हैं: ''मुझे अल्लाह से शर्म

आती है कि दुनिया में मेरी राय का आज्ञापालन किया जाए।'' इन्हीं इमाम अता रह0 के बारे में इमाम अबु हनीफ़ा रह0 ने फ़रमाया था कि मैंने उन से बेहतर आदमी नहीं देखा।

5- हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 फ़तवा देने से ज़्यादा यह कहते थे कि ''मैं नहीं जानता।''

6- अब्दुल्लाह बिन मसऊद फ़रमाते हैं: ''फ़तवा केवल कुरआन व हदीस से दो इन के अलावा कोई बात करोगे तो स्वयं भी हलाक होगे और दूसरों को भी हलाक करोगे।''

7- अब्दुल्लाह बिन मसऊद फ़रमाते हैं: ''जो व्यक्ति तमाम मसअलों में फ़तवा दे वह दीवाना है।''

8- इमाम शोअ़बी रह0 फ़रमाते हैं। ''मैं नहीं जानता।'' कहना आधा इल्म है। अगर क़यास करोगे तो हलाल को हराम और हराम को हलाल करोगे।

9- हज़रत अली रज़ि0 फ़रमाते हैं ''जब मुझ से कोई बात पूछी जाए जो मैं नहीं जानता तो इस बात में कलेजा के लिए सब से ज़्यादा ठंडी बात यह है कि मैं कहूं। ''वल्लाह आलम''

10- इमाम शोअ़बी रह0 फ़रमाते हैं। ''अगर लोग हदीसे रसूल सुनाऐं तो इस को अख़्तियार करो और जो बात अपनी राय से बताऐं तो उसको पाख़ाने में डाल दो।''

11- इमाम मुहम्मद बिन सीरीन रह0 फ़रमाते हैं। ''मैं तुझ से हदीसे रसूले स0 बयान करता हूं और तू यह कहता है कि फ़लां फ़लां यह कहते हैं, अब तुझ से बात न करूंगा।

21- हज़रत सईद बिन जुबैर रज़ि0 फ़रमाते हैं ''मैं हदीस बयान करता हूं और तू उस में कुरआन के साथ इशारे करता है। रसूलुल्लाह सल्ल0 तुझ से ज़्यादा कुरआन जानते थे।'' आख़िर

रसूलुल्लाह सल्ल0 के इर्शाद गिरामी पर इसे ख़त्म करता हूं, आप फ़रमाते हैं। जिस को फ़तवा देने पर ज़्यादा जुरअत है उस को जहन्नम पर ज़्यादा जुरअत है।" (दारमी)

अब आप के दूसरे पत्र का जवाब लिखता हूं। आप ने जो वाक्य नक़्ल किए हैं वह "फ़ुयूज़ल हरमैन" के होते तो मज़मून इस तरह होता कि "मुक़ल्लिद हों।" यद्यपि वाक्य में इस तरह है कि "शाह साहब मुक़ल्लिद थे।" अब यह बताइए कि अनुवादक ने अपनी ओर से लिखा है या शाह साहब रह0 की किसी किताब का हवाला दिया है? नवाब सिद्दीक़ हसन रह0 का हवाला अगर सही है तो नवाब साहब रह0 को ग़लत फ़हमी हुई है। मैं शाह वलीउल्लाह रह0, शाह अब्दुल अज़ीज़ और शाह इसमाइल रह0 तीनों को उन की इबादत से ग़ैर मुक़ल्लिदीन साबित कर सकता हूं। फिर नवाब साहब रह0 की किताब का हवाला नही दिया। अब अगर क़ारी अब्दुर्रहमान साहब रह0 या कोई और उन को हंफ़ी कहते हैं तो कहने वाले तो उन को बरेलवी भी कहते हैं। अहले हदीस, देवबन्दी बरेलवी, हर एक उन को अपना बताता है। देखना यह है कि उन की किताब "हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा" या "उक़्दुल जय्यद" क्या कहती है?। तफ़सीर अज़ीज़ी और "तनवीरुल अनीन" क्या कहती हैं? क्योंकि हंफ़ी उन को हंफ़ी कहते हैं अतः अहले हदीस इस से फ़ायदा उठा कर यह कहा करते हैं कि देखिए फ़लां हंफ़ी विद्वान यह कहता है, वह हक़ की तरफ़दारी करता है और तुम इंकार करते हो यद्यपि उन को हक़ीक़त में हंफ़ी मानता नहीं है क्योंकि शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 हिन्दुस्तान में तहरीक अहले हदीस के पहले संस्थापक हैं। शाह साहब रह0 की इबारतः "हंफ़ी मज़हब में एक बड़ा गहरा भेद है" ...... पलड़ा भारी है।" समझ में नहीं आई, आगे

पीछे से पूरी इबारत हो तो कुछ मतलब समझ में आए। मैं इंशा अल्लाह इस का जवाब लिखने के लिए तैयार हूं। फ़िल हाल "दो इस्लाम" का जवाब तैयार कर रहा हूं। फ़क़त

ख़ादिम मसऊद

بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

मिन जानिब नवाब
हेड मास्टर मिडिल स्कूल गुलामुल्लाह
,ज़िला ठट्ठा

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब मद्दा जिल्लहु
अस्सलामु आलैकुम!

अभी आप का पत्र ठीक इन्तिज़ार की हालत में मिला। बड़ी खुशी हुई। आप का पत्र आने में देरी हो जाने के कारण मैं यह समझा था कि शायद आप निरंतर पत्राचार से नाराज़ हो गए हैं। आप ने जो कुछ लिखा है मैंने खूब पढ़ा और खूब समझा। आप से पत्र –व्यवहार में मेरी खूब इस्लाह हुई और हो रही है। तय्यब साहब, और मेरे घर वाले कराची में थे उन को लाने के लिए मैं कराची गया था इसलिए जल्द वापस हो गया क्योंकि जूलाई 1962 ई0 को स्कूल खोलना था। कराची में मोहतरम अब्दुल ग़फ्फ़ार साहब से मुलाक़ात की, नसीम साहब से मुलाक़ात की और बहुत से अहले हदीसों की मसाजिद में नमाज़ें पढ़ीं। आप के भाई जनाब महमूद से भी मुलाक़ात और बहस हुई। आख़िर में उन्होंने फ़रमाया कि वह आइन्दा हदीसों पर अमल करने की कोशिश करेंगे। खुदावन्द तआला उन को शक्ति प्रदान फ़रमाए। (आमीन) अब्दुस्सलाम साहब से मुलाक़ात हुई थी। तय्यब साहब बेचारे एक ग़रीब आदमी हैं एक ज़मींदार के बारी हैं लेकिन अल्लाह तआला ने ऐसा सौभाग्य प्रदान किया है कि कुरआन व हदीस पर जान देते हैं। हमारी ग़ैर मौजूदगी में यहां के हालात बड़े ख़राब हो गए, मौलवी सलीम के साथ सब

लोग हो गए। मौलवी सलीम ने कहा, जो कोई भी तुम लोगों से दीन की बात करे उस को मारो, सब को मार पीट की खुली छूट दे दी। मौलवी सलीम ने ऐलान किया कि मैं शीध्र ही नवाब को यहां से निकाल दूंगा। संयोग से इस दिन में ठट्ठा गया हुआ था जब वापस आया तो सारा हाल मालूम हुआ। तय्यब साहब के बाप ने तय्यब से साहब से अलहदगी अख़्तियार कर ली। तय्यब साहब का लड़का भी उन से अलग हो गया क्योंकि वह मौलवी अशरफ़ के पास फ़िक़ह हंफ़ी पढ़ता है। अब मैं और तय्यब साहब यहां लगभग नज़र बन्द हो कर रह गए हैं, परेशानियां हद को पहुंच गई हैं। दूसरी तरफ़ दिल को सुकून हासिल है। अल्लाह तआला पर ईमान कामिल है कि वह मुझे उन बिदअतियों के हाथों रुसवा न फ़रमाएगा।

इंशाअल्लाह तआला कराची में मेरी सुसराल में मेंरे साले जिन पर परवेज़ियत का रंग चढ़ा हुआ था और मुझ से नाराज़ थे, उन से मुलाक़ात हुई। उन से रात दो बजे तक बहस होती रही। आख़िर में वह क़ाइल हुए न केवल हदीस के महत्व से वाक़िफ़ हुए बल्कि साम्प्रदायिक्ता से भी अलग हो गए। मेरी लड़की भी आई हुई थी, वह जब वापस वापस हुई तो उस ने सजावल में अपने पति के पास हंफ़ी नमाज़ पढ़ने से इन्कार किया और रफ़उल यदैन से नमाज़ बे शक पढ़े मगर सख़्ती और शिद्दत छोड़ दे। मेरे दामाद ने माशा अल्लाह तस्लीम किया कि तक़लीद शख़्सी बिदअत है। मगर यह लिखा कि मैं चूंकि उन लोगों में शिक्षा पा रहा हूं और मैं अपने बड़ों के ज़िम्मे हूं इस लिए शिद्दत से डरता हूं आदि।

बाक़ी सब ख़ैरियत है। मेरी तरफ़ से सब की ख़िदमत में सलाम अर्ज़ है बच्चे भी सलाम अर्ज़ करते हैं। फ़क़त।

ख़ादिम नवाब 22–7–62

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

बख़िदमत शरीफ़ आली जनाब मोहतरम मसऊद साहब

अस्सलाम आलैकुम!

आप का कार्ड वसूल हुआ, अपनी परेशानियों की वजह से मैं समय रहते जवाब न दे सका माफ़ फ़माइए, यहां मेरा विरोध हद दर्जा बढ़ गया है। जिस को मैंने अपने पहले ख़त में भी लिखा था। एक हाजी साहब मेरे पास आए थे, दो घन्टा तक मुझ से बहस करते रहे। बिल आख़िर दीने हक़ कुबूल कर गए और बिदअत से तौबा की तक़लीद शख़्सी से तौबा की। फिर दो चार रोज़ बाद एक और हंफ़ी मौलवी मुझ से मिलने आया और स्कूल पहुंचा। मैं उस को देख कर डर गया कि शायद फिर कोई फ़ितना आया उस मौलवी ने कोई तीन घन्टे मुझ से हर पहलू पर बहस की। उस ने यूं बहस शुरू की कि हमारी फ़िक़ह की किताबों पर आप आरोप लगाते हैं कि कुत्ता नापाक नहीं है, गधा पाक है। आदि आदि। मैंने कहा कि जनाब कुत्ता और गधा आप को मुबारक हो, हम किसी पर आरोप नहीं लगाते। आप की फ़िक़ह की किताबें मेरी लिखी हुई नहीं हैं जिन्होंने लिखा है उन से जा कर पूछिए। इसपर रोशनी डालिए, वही पुराना जवाब कि वह बुजुर्ग थे आदि आदि। इस पर बहस होती रही, फिर नमाज़ का मसअला आया। मैंने कहा कि जनाब आप का फ़िक़ह कहता है कि इमाम के पीछे सूरा फ़ातिहा पढ़ोगे तो नमाज़ नहीं होगी जहन्नम में जलाए जाओगे, जहन्नम की आग मुंह में डाली जाएगी

और शाफ़ई रह0 कहते हैं कि सूरह फ़ातिहा पढ़ना फ़र्ज़ है, न पढ़ोगे तो नमाज़ न होगीं अब कौन सी चीज़ सही है, न पढ़ना भी सही और पढ़ना भी सही। दोनों सही कैसे हो सकते हैं? अब इस झगड़े का फ़ैसला किस से कराऐं? क्या आप के मुक़ल्लिद विद्वानों से पूछें वे तो वही बताऐंगे जो ऊपर ज़िक्र किया गया। इधर उधर की हांकने लगा। आख़िर में वह मौलवी ताइब हो गया और हाथ उठा कर हंफ़ियत से तौबा की और कुछ किताबें मुझ से लेकर गया। यह सब कुछ अल्लाह तआला का फ़ज़ल व करम है, वह जिस को तौफ़ीक़ देना चाहते हैं देते हैं, वह ग़ुफ़ूर्रहीम हैं।

मतलब यही मुनाज़िराना रंग रोज़ रहता है, मगर जिन को अल्लाह तआला तौफ़ीक़ देते हैं वे मान लेते हैं और अपने बातिल अक़ीदों से तौबा कर लेते हैं। अल्लाह का शुक्र है कि मेरा दामाद राहे रास्त पर आ गया है और तक़्लीद शख़्सी को छोड़ कर कुरआन व हदीस के आगे सर झुका दिया है। अब मैं कुछ बातें आप से मालूम करता हूं केवल अपनी मालूमात के लिए। वह यह कि ......

शाह वलीउल्लाह साहब रह0 और शाह इसमाइल रह0 ने अपनी किताबों "सिराते मुस्तक़ीम" और शिफ़ाउल अलील" आदि में सूफ़ीवाद के बारे में और ज़िक्र करने का तरीक़ा जैसे एक ज़रबी ज़िक्र, दो ज़रबी ज़िक्र आदि के बारे में जो लिखा है तो क्या यह भी पीरी मुरीदी करते थे। कराची में अब्दुस्सत्तार साहब इमाम गुरबा अहले हदीस, इमाम की बैअत को लाज़िम बतलाते हैं, पत्र लम्बा हो गया है इस लिए ख़त्म करता हूं, बच्चे सलाम कहते हैं, तय्यब साहब भी सलाम कहते हैं। सब अहले हदीस हज़रात को सलाम अर्ज़ करते हैं।

फ़क़त

ख़ादिम नवाब

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला 18 अगस्त 1962 ई0

बख़िदमत जनाब नवाब साहब

अस्सलाम आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

अम्मा बाद! आप का पत्र ता0 9 अगस्त को मिला। खै़रियत व हालात से आगाही हुई, अल्लाह तआला आप की परेशानियों को दूर फ़रमाए। आमीन, गुलामुल्लाह् किस तरफ़ वाके़ है? कराची से आते समय दरिया–ए–सिन्ध पार करना पढ़ता है या नही, ठट्ठा से कितनी दूर है? सजावल से आप कितनी दूर हैं? क्या कभी सजावल जाना होता है या नहीं? वहां के आलिम और अलीमुद्दीन साहब से मिलना होता है या नहीं? ये लोग अब किस तरह मिलते हैं। सुबह व शाम यह दुआ पढ़ा कीजिए।

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِکَ مِنَ الْهَمِّ وَالْحُزْنِ! وَاَعُوْذُبِکَ مِنَ الْعِجْزِ وَالْکَسْلِ وَاَعُوْذُبِکَ مِنَ الْجُبْنِ وَالْبُخْلِ وَاَعُوْذُبِکَ مِنْ غَلَبَةِ الدَّیْنِ وَقَهْرِ الرِّجَالِ."

यह दुआ रसूलुल्लाह सल्ल0 ने एक सहाबी को बताई थी। उन्होंने उस को पढ़ा। कुछ ही दिनों में उन की परेशानियां दूर हो गई। (अबु दाऊद) आप की मुनाज़िराना सरगर्मियां मालूम करके खूशी हुई।"اَللّٰهُمَّ زِدْهُ فَزِدْهُ" इंशा अल्लाह आप की तबलीग़ से बहुत से लोग मुसलमान होंगे।

हक़ वाले कम होते हैं

अधिकता व कमी पर बहस करते हुए आप ने जो फ़रमाया कि 72 आदमी जहन्नम में जाऐंगे, तो एक आदमी जन्नत में जाएगा। यह बात सही नहीं, इस लिए कि इस का मुख़ालिफ़ इस तरह दे सकते हैं कि यह कैसे मालूम हुआ कि हर फ़िक़्ह का एक एक आदमी होगा? हो सकता है कि नाजी में एक हज़ार आदमी हों और इन 73 सम्प्रदायों के कुल आदमी मिला कर भी 200 या 300 से अधिक न हों। हां वह हदीस आप पेश कर सकते हैं जिस में है कि आदम अलैहिस्सलाम को हुक्म होगा कि ...... आदमियों में से 999 को जहन्नम के लिए निकालो इस सिलसिला में निम्न आयतें इच्छानुसार लिख रहा हूं।

۱ – قُلْ لاَ یَسْتَوِیْ الْخَبِیْثُ وَالطَّیِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَکَ کَثْرَةُ الْخَبِیْثِ.

(سورہ مائدہ رکوع ۱۳ پارہ ۷)

" कह दीजिए नापाक और पाक बराबर नहीं हो सकते अगर्चे नापाक की अधिकता हैरत में क्यों न डाले।"

۲ – وَقَلِیْلٌ مِّنْ عِبَادِیَ الشَّکُوْرُ.

(سورہ سبا رکوع ۲ پارہ ۲۲)

"मेरे शुक्र गुज़ार बन्दे थेड़े होते हैं।"

۳ – وان کثیرا من الخلطاء لیبغی بعضهم علیٰ بعض الا الذین امنوا وعملوا الصلحت وقلیل ماهم.

(سورہ ص رکوع ۲ پارہ ۲۳)

"बहुत से शरीक एक दूसरे पर ज़्यादती करते हैं। सिवाए उन लोगों के जो ईमान लाए और उन्होंने सदकर्म किए और ऐसे लोग थोड़े होते हैं।"

۴– الا قليلا ممن انجينا منهم.

(سورہ ہود، رکوع ۱۰ پارہ ۲۳)

۵– تولوا الا قليلا منهم.

(سورہ بقرہ۔ رکوع ۳۲۔ پارہ ۲)

हदीसः اِنَّمَا النَّاسُ كَالْإِبِلِ الْمِائَةِ لاَ تَكَادُ تَجِدُ فِيْهَا رَاحِلَةً. अर्थात लोगों की मिसाल ऐसी है जैसे सौ ऊंट, क़रीब है कि तुझ को एक भी सवारी के लाइक़ न मिल सके। (बुख़ारी व मुस्लिम) तिर्मिज़ी में इतना और है कि "اولا تجد فيها الا راحلة." या तुझ को सौ में से केवल एक ही सवारी के क़ाबिल मिल सके।

सूफ़ीवाद और विर्द

शाह वलीउल्लाह साहब रह0 की किताब "شفاء العليل" मैं ने पढ़ी है। मालूम नहीं किस ज़माने की लिखी हुई है। "अल इन्तिबाह फ़ी सलासिल औलिया अल्लाह" पृ0 2 में शाह साहब फ़रमाते हैं: "हज़रत जुनैद बग़दादी रह0 के ज़माने में ख़िरक़ा पोशी की रस्म निकली और रस्मे बैअत उस के बाद प्रचलित हुई।"

"इज़ालतुल ख़िफ़ा" में लिखते हैं: तबअ़ ताबईन तक मशाइख़ का संबंध शार्गिदों के साथ बैअत और ख़िरक़ा पोशी के ज़रिए से न था, केवल संगत के ज़रिए से था। और बहुत से सिलसिलों के साथ संबंध पैदा करता था।"

शाह साहब रह0 फ़रमाते हैं:

ومنها ان لا يتكلم فى ترجيح طرق الصرفية بعضها على بعض ولا ينكر على المغلوبين منهم ولا على المؤولين فى السماع وغيره ولا يتبع هو نفسه الا ما هو ثابت فى السنة.

"सूफ़ियों के तरीक़े से बात न करे कि कुछ को कुछ

पर वरीयता दे। मग़लूबुल हाल पर इन्कार न करे न उन पर समाअ आदि के बारे में तावील करते हैं लेकिन वह स्वयं किसी चीज़ का अनुसरण न करे, सिवाए उस के जो साबित हो सुन्नत से।

(القول الجميل فى بيان سواء السبيل، فصل تاسع)

शाह साहब रह० फ़रमाते हैं:

وكذالک الاشعال باوراد المشائخ الصونية ومقالاتهم ليس ينفع ذٰلک امملا ...... وليلزم الطاعات المتقولة عن رسول الله صلى الله عليه وسلم دون ما يؤثر عن غيره.

मशाइख़ व सूफ़िया के अवराद व मक़ालात में उत्तेजित होना यह अमल लाभकारी नहीं है बल्कि उपासना को लाज़िम समझना चाहिए जो रसूलुल्लाह सल्ल० से मंकूल हैं, उन को छोड़ दे जो दूसरों से मंसूब हैं।" (तफ़हीमात, पहला भाग पृ० 18)

ये वाक्य तो बहुत अच्छे हैं। मालूम नहीं शिफ़ाउल अलील मैं मसाहमत क्यों हो गई। शायद शुरू की तस्नीफ़ होगी। क्योंकि वह पहले हंफ़ी ही थे। अब वसीयत नामे के इक़तिबासात सुनिए:

"दूसरी वसियत यह है कि उस ज़माने के मशाइख़ जो विभिन्न प्रकार की बिदआत का शिकार हैं, उन के हाथ में हाथ न दे, और न उन की बैअत करे।"

फिर करामात, तिलिस्मात और नजात से होशियार करते हुए व जंग व जिदाल का ज़िक्र करते हैं। कहते हैं कि कुछ सादा स्वभाव लोग साधारण घटना को भी करामात समझते हैं। यद्यपि यह ईश्वरीय शक्ति के कारण घटित होती है।

ऐसी हालत में हदीस व फ़िक़ह हंफ़िया व शाफ़िया की

किताबों का अध्ययन करे और अमल ज़ाहिर सुन्नत पर करे।"

फिर लिखते हैं कि अगर सच्चा शौक़ हो तो किताब "अवारिफ़" से आदाब नमाज़ रोज़ा व अज़कारे मामूलात औक़ात हासिल करें। तरीक़ा जानने के लिए रसाइल नक़्शबन्दिया को याद रखिए फिर लिखते हैं। "इन दोनों किताबों में यह मज़मून इतने रोशन हैं कि किसी मुरशिद को तलक़ीन की ज़रूरत नहीं। अगर कोई मुरशिद मिल जाए तो इस की संगत अख़्तियार करें।" फिर लिखते हैं। अगर वह हर मामला में कमाल न रखता हो तो उस की अच्छी बातें हासिल करें और ख़राब बातों को छोड़ दें। सूफ़िया के बारे में ग़नीमत कुबरा है और उन के रसूम को कदापि अख़्तियार न करें। यह बात बहुत सों पर भारी गुज़रेगी" शाह साहब रह0 की यह इबारत कुछ ग़ैर वाजेह सी है "हम में और अहले ज़मान में मतभेद सुन्नत है। सूफ़ी यह कहते हैं ...... मुतकल्लिमीन यह कहते हैं...... और हम यह कहते हैं कि मानवता का मतलूब सिवाए शरअ के और कुछ नहीं वसीयत नामा में यह भी लिखा है कि हर दिन कुरआन व हदीस पढ़े। अगर पढ़ न सकता हो तो सुने। अब देखना यह है कि "अवारिफ़" और रसाइल नक़्शबन्दिया कैसी किताबें हैं। क्योंकि उन की तरफ शाह साहब रह0 ने इशारा फ़रमाया है। यह तो मुझे मालूम है कि नक़्शबन्दी तरीक़े की बुनियाद सुन्नत की पाबन्दी पर रखी गई थी। बाद में क्या क्या हुआ। अल्लाह ही खूब जानता है।

"सिराते मुस्तक़ीम" शायद पूरी शाह इसमाईल शहीद रह0 की लिखी हुई नहीं है कुछ हिस्सा इसमें मौलवी अब्दुल हई का है। शाह इसमाईल रह0 लिखते हैं......"इरादत (मुरीद होना) व तक़्लीदे शख़्सी दीन के अरकान में से नहीं है।" (ईज़ाहुल हक़) फिर लिखते

हैं।: ''अपना शीर्षक व मुहम्मदी तरीक़ा और सुन्नत क़दीम को बनाए, न कि किसी मज़हबे ख़ास या तरीक़त के मशहूर मसलक को अख़्तियार करे और उन को शिआर बनाए। बल्कि उन को अत्तार की दुकान समझे और स्वयं को मुहम्मदी सल्ल0 लशकर का सदस्य समझे। (ईज़ाहुल हक़) ''सिराते मुस्तक़ीम'' में लिखते हैं। ''सूफ़ियत व प्रचलित सुलूक के तरीक़े अहादीस से साबित नहीं बल्कि नबी करीम सल्ल0 से तो केवल किताब व सुन्नत मंकूल है और आप की दावत व इशाअत हुज्जत व बुरहान। तीर व तलवार के साथ इन्हीं दो चीज़ों के लिए थी।'' (मुतरकुल हदीद पृ0 56)

मौलाना इस्माईल शहीद रह0 एक और जगह लिखते हैं: ''अवराद व अज़कार का निर्धारण, साधनाएं, एकान्तवास चिल्ले, मनगढ़त नवाफ़िल, जहरी व धीमे अज़कार के तरीक़े, ज़रबें लगाना, गिनती मुक़र्रर करना, बरज़ख़ी मुराक़बे और सख़्त इबादतों का आयोजन, ये सब हक़ीक़ी बिदआत की क़िस्मों से हैं।

(ईज़ाहुल हक़ पृ0 73)

इन दोनों बुज़ुर्गों के ये कथन अब आप के सामने हैं। और वे किताबें भी आप के सामने हैं। अर्थात "شفاء العليل" और "صراط مستقيم" ये दोनों किताबें मेरे पास नहीं। वरना मैं हल करने की कोशिश करता। मेरा गुमान यही है कि शायद यह शुरू उम्र की लिखी हुई हैं या ''सिराते मुस्तक़ीम'' का आपत्ति जनक हिस्सा उन का नहीं है बल्कि मौलवी अब्दुल हई साहब का है।

बैअत की हक़ीक़त

बैअत की कई क़िस्में हैं। (1) इस्लाम कुबूल करते समय बैअत करना, यह सुन्नत से साबित है। (2) किसी भी मुसलमान से उस का

बुज़ुर्ग किसी समय भी उस से बैअत या वचन ले सकता है, कि भविष्य में फ़लां फ़लां काम करना या न करना। यह भी सुन्नत से साबित है। (3) ख़िलाफ़त, इमारत, जिहाद पर बैअत यह भी सुन्नत से साबित है। (4) किसी मुसलमान का बुज़ुर्ग के पास आकर प्रतीज्ञा करना या बैअत करना कि फ़लां फ़लां काम करूंगा या फुलां काम नहीं करूंगा और फिर उन बैअत लेने वालों का विभिन्न टोलियों में बंट जाना, विभिन्न तरीक़े गढ़ लेना, आदि आदि, यह सुन्नत से साबित नहीं।

अब्दुस्सत्तार साहब, के उन की बैअत उसूली तौर पर तीसरी क़िस्म में आती है।

अहले हदीस ध्यान दें

अब मैं दो एक बातें आप को लिख रहा हूं वैसे याद तो आप को भी होंगी और अमल भी आप का उन पर होगा। लेकिन मैं याद दिहानी के तौर पर आप को लिख रहा हूं। इसलिए कि दूसरे के लिखने से कुछ ध्यान ज़्यादा दिया जाता है और क्योंकि मैं इस का तजुर्बा कर चुका हूं कि दूसरे का ध्यान आकृष्ट कराने से वह बात ज़ेहन में मज़बूत हो जाती है। अमल में चुस्ती पैदा हो जाती है। इस लिए कह रहा हूं। अब आप माशाअल्लाह मोमिन हैं मुसलमान हैं मुबल्लिग़ हैं, अतः बहुत ज़्यादा ज़रूरत है कि आप की बातिनी और ज़ाहिरी दोनों हालतें साफ़ सुथरी हों। नफ़्स की सफ़ाई अर्थात बातिनी सफ़ाई फ़राइज़े नुबुव्वत में से है। हर नबी लोगों के बातिन की सफ़ाई करने पर नियुक्त होता है। अल्लाह का डर, तक़वा दिल में पैदा होना चाहिए। घमंड, हसद, बैर आदि तमाम बुरी बातों से दिल पाक होना चाहिए। यह बातें मैंने याद के लिए लिख दी हैं।

क्योंकि इस का असल ज़रिया अपने तौर पर सुन्नत का अनुसरण है। अतः यह बातें तो उम्मीद है कि आप में मौजूद होंगी। कुरआन व हदीस का अध्ययन और नेक संगत इस के लिए सोने पे सुहागा का काम करती है। मुझे जो बात कहनी है वह ज़ाहिरी पाकीज़गी के बारे में है और इस पर ज़ोर देना चाहता हूं, प्रचारक के लिए यह बहुत महत्वपूर्ण है। ग़ैर मुस्लिम जो चीज़ देखता है वह आप का ज़ाहिर है और उस ज़ाहिर में दो चीज़ें हैं जिन पर उस की ख़ास नज़र होती है आचरण और नमाज़। प्रचारक के लिए आचरण बहुत ज़रूरी है। बस अब आप मुहम्मदी तरीक़े का नमूना बन जाएं। संहनशीलता, बरदाश्त, विनम्रता, विनय पैदा कीजिए। कोई बुरा भला कहे जवाब न दीजिए, ज़्यादती करे मुहब्बत से पेश आइए। उस के किसी बुज़ुर्ग के लिए अपमान जनक कलिमा मुंह से न निकालिए। न अपने बजुर्गों की ग़लती पर तान कीजिए। ऐसे लोगों से बचिए, ये बदनाम करने वाले हैं। ज़्यादा से ज़्यादा अगर किसी बुज़ुर्ग की ग़लती पर कुछ कहना हो तो यह कह सकते हैं कि हम उनके अनुसरण पर बाध्य नहीं। अल्लाह उन्हें माफ़ फ़रमाए। हम तो रसूल सल्ल0 के अनुसरण पर बाध्य हैं। दूसरी चीज़ नमाज़ है जिस को देख कर कशिश होती है या नफ़रत। ग़ैर मुस्लिम या विरोधी नमाज़ को ख़ास तौर पर देखता है। नमाज़ को शोभा की चीज़ों के साथ अदा कीजिए। जैसे सर नंगा न हो, कंधा खोलने की मनाही है।

(सही बुख़ारी)

अल्लाह तआला फ़रमाता है: خذوا زينتكم عند كل مسجد. "हर नमाज़ के समय शोभा की चीज़ें पहन लिया करो।"

रसूलुल्लाह सल्ल0 का इर्शाद गिरामी है। "الله احق ان يزين له. "अल्लाह ज़्यादा हक़ दार है कि उस के लिए श्रंगार किया जाए।

(बैहेक़ी) यह भी इर्शाद है कि जिस के पास दो कपड़े हों वह दोनों कपड़े पहन कर नमाज़ पढ़े। (बैहेक़ी) अर्थात क़मीस और पाजामा। बनियान पहन कर नमाज़ पढ़ना बद तहज़ीबी है, फिर कंधे भी नहीं ढकते, कुछ लोग कोहनी या बाजू पकड़ कर खड़े होते हैं, यह ख़िलाफ़े सुन्नत है। कलाई पकड़ना सुन्नत है। (अबु दाऊद) कुछ लोग हाथों को इतना ऊपर और बे हंगम तरीक़े से बांधते हैं कि अजीब शक्ल बन जाती है। फिर कंधों को ऊपर करके कानों से मिला लेते हैं। यह बड़ा मकरूह मंज़र होता है, हाथों को सीने पर अर्थात दिल के क़रीब रखना चाहिए, कंधे नीचे होने चाहिए। नमाज़ में सुकून होना चाहिए। (सहीह मुस्लिम) हाथ सुकून व वक़ार से उठें और कानों के क़रीब पहुंच कर साकिन हो जाने चाहिऐं। न यह कि नाफ़ तक उठें या जैसे कोई मक्खी मार रहा है, या जैसे सरकश घोड़ों की दुमें उठती हैं, या जैसे कोई हाथ फेंक रहा है, टांगों के बीच उचित फ़ासला हो टांगें न चीरें, जमाअत में पैर को केवल उस आदमी से मिलाऐं जो इमाम के ज़्यादा क़रीब हो। दोनों तरफ़ मिलाने की कोशिश न करें, वरना दूरी ज़्यादा हो जाएगी। कंधे नहीं मिलेंगे, आप के दूसरे पैर से आप के पास वाला आदमी मिलाएगा। सज्दा में जाते समय एक दम धड़ से न जा पड़ें, वक़ार के साथ घुटनों पर हाथ रखकर पहले घुटने टिकाऐं और उठते समय उस का अक्स अत्तहियात में कुछ लोग शहादत की उंगली को बड़े ज़ोर से घुमाते हैं। यह बे सुबूत है। (दुआ के समय) धीरे धीरे हिलाऐं, लेकिन सलाम तक उठाएं रहें, यह सुन्नत है। और यह सब काम अल्लाह के खुश करने के लिए किए जाऐं। आप का पत्र ता0 12 अगस्त को पहुंचा। बच्चे, औरतें जिन मटकों से पानी लेते हैं, वह इस्तेमाल शुदा कैसे बन सकते हैं। बच्चों के हाथ पाक हैं तो पानी

पाक है। औरत के गुस्ल या वुज़ू से बचा हुआ पानी इस्तेमाल न करना चाहिए और वह भी शायद ना महरम औरत का बचा हुआ पानी। क्योंकि रसूलुल्लाह सल्ल0 बीवियों का बचा हुआ पानी इस्तेमाल कर लिया करते थे। पानी का मसअला अहनाफ़ के यहां है अर्थात वुज़ू या गुस्ल करते समय जो पानी बदन से लग कर बहता है वह नापाक है इसी बिना पर वह इन बूंदों को भी नापाक कहते हैं जो वुज़ू या गुस्ल करते समय हाथ या सर से गिरती हैं, यद्यपि रसूलुल्लाह सल्ल0 बरतन में हाथ डाल कर ही चुल्लू लिया करते थे, अतः बूंदें बरतन में ज़रूर पड़ती होंगी। तय्यब साहब, गुलाम हुसैन साहब, घर वाले व जुमला हज़रात को सलाम कहिए, कराची आने की कोई संभावना नहीं, दुआ कीजिए। यह पत्र कई दिन हुए लिखना शुरू किया था। और रोज़ाना थोड़ा थोड़ा लिख कर पूरा कर सका हूं। समय ही नहीं मिलता था, आज 25 अगस्त को ख़त्म कर रहा हूं। इस बात का मलाल है कि पत्र देर में लिख रहा हूं। मैंने शायद आप को लिखा था कि सय्यद बदीउद्दीन शाह राशिद पीर आफ़ झन्डा यहां तशरीफ़ लाए थे, मुलाक़ात हुई थी। वह ख़ुद गरीब ख़ाना पर तशरीफ़ लाए थे। मौलाना हाफ़िज़ मुहम्मद इसमाईल ज़बीह ख़तीब जामा मस्जिद अहले हदीस रावलपिन्डी भी साथ थे। पीर साहब जय्यद आलिमे दीन हैं। क्या मौलाना हाफ़िज़ मुहम्मद इसमाईल ज़बीह की तक़रीर भी आप ने हैदराबाद में सुनी? क्योंकि दोनों हज़रात ही हैदराबाद के जलसा में वक्ता थे। सुना है कि उस जलसे के नतीजे में कई आदमी अहले हदीस हो गए।

फ़क़त

ख़ादिमः मसऊद

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब नवाब

बख़िदमत शरीफ़ जनाब मोहतरम मसऊद साहब मद्दा ज़िल्लहु

अस्सलामु आलैकुम।

आप का पत्र मिला। हालात मालूम हुए। जवाब देने में बड़ी देरी हुई। जिस की वजह मेरी परेशानियां हैं। गुलामुल्लाह ठट्ठा से 12 मील पर है। कराची या सजावल दोनों तरफ़ से ठट्ठा आना पड़ता है। फिर ठट्ठा से अलग बस जाती है, मैं लगभग एक साल से सजावल नहीं गया और न जाने का इरादा है। वहां के उलमा आदि से मुझे कोई दिलचस्पी नहीं रही। वहां के उलमा और जुहला मेरे सख़्त विरोधी हो गए हैं और यहां तो विरोध है ही। मेरे कराची के रिश्तेदार सब मुझ से अलग हो गए हैं और यहां गुलामुल्लाह में इन ज़िद्दी मुल्लाओं से सख़्त जंग हो रही है। एक मौलवी साहब ने तय्यब के लड़के के ज़रिए एक "मनअ़ फ़ातिहा ख़लफुल इमाम" नामी किताब भेजी है तय्यब के लड़के ने वह किताब लाकर चुपके से तय्यब के बक्स में रख दी। तय्यब ने उस किताब को पढ़ा फिर मेरे पास ले आया। वह किताब मैंने शुरू से लेकर आख़िर तक पढ़ी, किताब बड़ी ज़हरीली है। दो तीन दिन तक तय्यब भी उस किताब से काफ़ी प्रभावित नज़र आए। फिर अल्लाह के फ़ज़्ल व करम से सही हो गए। मुझे तो इस किताब का और कोई जवाब बन नहीं पड़ा। मैंने जवाब में लिखा कि फ़ातिहा ख़लफुल इमाम मना है तो फिर शाफ़अ़ी क्यों पढ़ते और फ़र्ज़ समझते हैं और तुम उन को

अपना हक़ीक़ी भाई क्यों तस्लीम करते हो। वे पढ़ें तो जाइज़ और हम पढ़ें तो नाजाइज़। यह कैसी मंतिक़ है। पहले अपने भाई को उस नाजाइज़ काम से रोको, फिर हम से उलझना। अब उस किताब की कुछ चीज़ें प्रस्तुत करता हूं, किताब यूं शुरू होती है।

"सय्यदना इमाम आज़म रह0 के सदक़े में किताब शुरू करता हूं। बाइस अहादीस मुसतनद और सैंकड़ों सहाबा के कथन रज़ि0 व अमले सहाबा रज़ि0 लिखे जाते हैं। फ़ातिहा के सबूत की सात हदीसें हैं, जो एक दूसरी से भिन्न भिन्न हैं। तुम बुख़ारी शरीफ़ के बारे में दावा तो बड़ा लम्बा चौड़ा करते हो, मगर परीक्षा के समय मैदान छोड़ कर भाग जाते हो। बुख़ारी को छोड़ कर बैहेक़ी का सहारा लेते हो। आप की मिसाल इस आयत में मौजूद है। افتؤمنون ببعض الكتب وتكفرون ببعض. (पहला पारा) एक जगह लिखता है कि तुम आपत्ति करते हो कि मुअम्मर ने जो हदीस बुख़ारी में रिवायत की है। वह वहमी थे। भला इमाम बुख़ारी ने वहमी की रिवायत क्यों नक़ल की, क्या उन को इस का हाल मालूम न था। हदीस न0 3 अम्र बिन शुएब में केवल फ़ातिहा और अलावा की मनाही है। हदीस न0 4 में फ़ातिहा और इस से ज़्यादा का हुक्म है। इन चारों हदीसों में अहकाम भिन्न भिन्न और अलग अलग हैं। इस के अलावा न0 5 में हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 की दिल में पढ़ने की है। हदीस न0 6 में जो इमाम बुख़ारी की सकता में पढ़ने की है। सातवीं में जो हज़रत अली रज़ि0 की है उस में इमाम के पीछे नमाज़े सिर्री (धीमे) में दो सूरतें पढ़ने का ज़िक्र है, अब यह सात हदीसें हैं जो अलग अलग हुक्म देती हैं। आप का अमल किस हदीस पर है, अमल तो एक ही पर होगा तो तुम छः के तारिक (छोड़ने वाले) हुए। तो फिर किस क़ायदे से आमिल बिल हदीस बन गए। हदीसों की रोशनी में

तुम्हारा दावा बातिल साबित हो रहा है। हदीस उबादा रज़ि0 में मुक़तदा का ज़िक्र नहीं है। तुम तथा कथित बातिल दावा करने वाले लिखते हो कि यह ग़लत है, जब दलील आम होती है तो उस के तमाम लोग उस में दाख़िल होते हैं। अतएव इस हदीस में इमाम मुक़तदा, मुन्फ़रिद सब दाख़िल हैं हदीसे उबादा रज़ि0 में तो तुम ने तीनों को दाख़िल कर लिया। क्योंकि तुम को वहां इस की ज़रूरत थी और हदीसे अम्र बिन शुएब में मुक़्तदा को अलग कर दिया, क्योंकि यहां तुम को इस की ज़रूरत न थी। इस लिए दलील ख़ास हो गई यह तुम्हारे गढ़े हुए गुण हैं जिस को चाहा आम कर दिया, जिस को चाहा ख़ास कर दिया। हालांकि अम्र बिन शुएब की हदीस में इमाम मुक़तदी, मुन्फ़रिद का ज़िक्र नहीं है। यह तुम्हारा अपना इज्तेहाद है। तुम्हारी अपनी इच्छा की पैरवी है। हदीस न0 4 को कहते हो कि ज़ईफ़ है यद्यपि तुम्हारी अक़्ल, तुम्हारा ईमान ज़ईफ़ है। यद्यपि यह बुख़ारी की हदीस है, जिस के तुम मानने वाले हो। अगर जुज़उल क़िरात बुख़ारी की हदीसों को ग़लत बताओगे तो इमाम बुख़ारी की किताब का नाम शब्द सही बदल देना होगा। फिर उस के बाद कौन सी किताब सहीह होगी जिस को तुम सहीह बताओगे। हदीस न0 5 में कहते हो कि हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 को मदीना की गलियों में मुनादी का हुक्म नहीं था।

(ज़रा देखो जुज़उल क़िरात बुख़ारी पृ0 19)

قال ابو عثمان الهدى فاسمعت ابا هريرة يقول قال رسول الله صلى الله عليه وسلم اخرج منادا فى المدينة ان لا صلوٰة الا بقرآن ولو بفاتحة الكتاب فمازاد.

देखो मदीना में मुनादी का हुक्म था या कानपूर में। रिवायत न0 6 के बारे में कहते हो कि इमाम बुख़ारी रह0 के ज़माने में तू चल

मैं आया वाली नमाज़ नहीं हुई थी। बल्कि तक्बीर तहरीमा और क़िरअत के बीच सक्ता होता था यद्यपि यह दुआए सना इमाम और मुक़्तदी दोनों के लिए है। हमारा इमाम तुम्हारी तरह मुक़्तदी के अधीन नहीं होता, बल्कि मुक़्तदी इमाम के अधीन होता है। नामज़ में रुकूअ़ और सजदा में तीन बार तस्बीह वाजिब है। देखो हुज्जतुल्लाहुल बालिग़ा पृ0 317 में। मगर आप की शरीअत अलग है। हुज़ूर सल्ल0 ने फ़रमाया कि एक क़ौम होगी जो बहुत इबादत करेगी। अर्थात लम्बे रुकूअ़ और सुजूद करेगी। तुम अपनी नमाज़ों और रोज़ों को उन की नमाज़ रोज़ों से तुच्छ समझोगे लेकिन वह दीन से ऐसे निकल जाएंगे जैसे तीर कमान से निकल जाता है। इसी लिए हम अहले सुन्नत व जमाअत सुन्नत के मुताबिक़ रुकूअ़ सजदा करते हैं। क्योंकि जमाअत में ज़ईफ़ कमज़ोर सब होते हैं। इसीलिए हमारे आक़ाए नामदार सल्ल0 ने हलकी **नमाज़ पढ़ाने** का हुक्म दिया था। मसबूक़ के बारे में यह कहते हो **कि जब इमाम** रुकूअ़ में जाए यद्यपि हमारे आक़ाए नामदार सल्ल0 का **हुक्म है कि** इमाम की इक़्तिदा करो। इमाम इसी लिए है कि उस की **इक़्तिदा** की जाए। जब वह रुकूअ़ करे तो तुम भी रुकूअ़ करो। जब वह सज्दा करे तो तुम भी सज्दा करो और जब वह क़िरअत करे तो ख़ामोश रहो। मगर तुम गन्दुम नुमा जौ फ़रोश अपना इज्तिहाद चलाते हो। सहाबा किराम रज़ि0 सूरा फ़ातिहा पढ़ते थे लेकिन यह आयत नाज़िल हुई कि जब कुरआन पढ़ा जाए तो ख़ामोश रहो, तब छोड़ दिया। पहले नमाज़ में सहाबा–ए–किराम रज़ि0 आसमान की तरफ़ देखा करते थे। जुमा के खुतबे में अनाज ख़रीदने बाज़ार जाया करते थे तो आयत पारा 28 रुकूअ़ 12 में नाज़िल हुई और मना किया गया। देखो पहला पारा रुकूअ़ 18 जिस में दोनों कामों

से रोका गया है फ़ातिहा की सूरत में स्पष्ट दलील इमाम अहमद रह0 के कथन में देखो। हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 फ़ातिहा को दिल में पढ़ने का हुक्म देते। क्योंकि आयत सूरा आराफ़ का एहतेराम था। अल्लामा ऐनी शरह बुख़ारी पृ0 63 भाग तीन में लिखते हैं। अर्थात शैख़ अब्दुल्लाह बिन याकूब ने किताब "कशफुल अबरार" में ज़िक्र किया है कि अब्दुल्लाह बिन ज़ैद से रिवायत है कि उन के बाप ज़ैद बिन असलम ने कहा कि असहाबे हुजूर सल्ल0 से दस सहाबी रज़ि0 क़िरअत फ़ातिहा ख़लफुल इमाम से सख़्त मना करते थे। 1 सिद्दीक़ अकबर रज़ि0 2 हज़रत उमर रज़ि0 3 हज़रत उसमान रज़ि0 4 हज़रत अली रज़ि0 5 हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ 6 हज़रत सईद बिन वक़ास रज़ि0 7 हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद 8 हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि0 9 हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 10 हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र रज़ि0। मगर तुम लोगों की मिसाल इस आयत के चरिर्थात है: وان يروا كل اية لا يؤمنوا بها وان يروا سبيل الرشد لا يتخذوه سبيلا. तुम इल्म का तंबूरा हो केवल दलीलों को ज़ईफ़ कहना जानते हो। एक तरफ़ अैनी के कथन को ज़ईफ़ कहते हो, दूसरी तरफ़ इसी के कथन को दलील के तौर पर पेश करते हो। वाक्य ख़त्म हुए।

इन ख़्यालों में उल्झा हुआ था कि मेरे दामाद का पत्र मिला। जिस के पढ़ने से बड़ी परेशानी हुई। उस ने इस तरह लिखा कि मानो उस को मुझ से कोई लगाव ही नहीं है। उस पत्र के लिफ़ाफ़े पर मदरसा हाशिमिया की मुहर लगी हुई है। उस ने ख़त यूं शुरू किया:

"जनाब आली! आप हम अहनाफ़ को रफ़अ यदैन न करने पर मलामत करते हैं यद्यपि बीसियों हदीसों में तर्के रफ़अ यदैन साबित

है। मैं कुछ हदीसें आप को भेज रहा हूं। अगर चाहो तो और भी भेज सकता हूं। आप इन हदीसों के ख़िलाफ़ अमल करते हैं। छोड़ी हुई चीज़ पर आग्रह करके उम्मत में फूट फैला रहे हैं। आप भी इन हदीसों पर अमल करके रफ़अ़ यदैन तर्क कर दीजिए तो उम्मत मुहम्मदिया फूट से बच जाऐगी औ हम को ख़ुशी होगी आदि। पत्र का मज़मून ख़त्म हुआ। आप उन को देखिए और फिर मुझे लिखिए कि क्या ये अहादीस सहीह हैं। मैंने उस को कोई जवाब नहीं दिया। उस से मैंने पत्र व्यवहार बन्द कर दिया है। यह भी मुझे लिखिए कि जिस तरह हंफ़ी चारों इमामों के मज़हबों को हक़ पर समझते हैं। क्या शाफ़अ़ी रह0 आदि भी उन को हक़ पर समझते हैं......

फिर दूसरे दिन मुझे गूजरांवाला से फ़ैज़ अली शाह हंफ़ी आलिम का पत्र मिला। यह आलिम पहले सजावल में था। जिस ने मुझ से आप को पत्र लिखवाया था कि हंफ़ी मज़हब तिंकों का बना हुआ नहीं है और मुदल्लिल जवाब देने का वायदा किया था। लेकिन फिर जवाब ने दे सका। फिर वह सजावल से चला गया था। अब पूरे एक साल के बाद गूजरांवाला से पत्र लिखा है कि "ग़ैर मुक़ल्लिद का जवाब तक़्लीद" तो इस विषय पर मालूमात करने से बहुत मसाला मिला। मगर मुझे फुरसत नहीं है कि जवाब दे सकूं। इधर मौलवी अशरफ़ ने "हक़ीक़तुल फ़िक़ह" किताब के जवाब में ऐलान किया कि इस किताब में हवाले हमारी फ़िक़ह की किताबों के दिए गए हैं, वे सारे हवाले ग़लत हैं। हमारी फ़िक़ह की किताबों में ऐसा कोई मसअला नहीं है। यह मात्र हम अहले सुन्नत वल जमाअत पर आरोप है, आदि। कृपया रोशनी डालिए कि क्या ये हवाले ग़लत हैं?।

मतलब यह कि आज कल यही तूफ़ाने बद तमीज़ी मेरे चारों

तरफ़ उमडी हुई है और मुझ पर चारों तरफ़ से दबाव डाला जा रहा है। हंफ़ी विद्वान मेरे पास हर हफ़ता कोई न कोई चला आता है और बहस व मुबाहसा करता है। लोगों के दिलों में मेरे बारे में नफ़रत पैदा की जाती है। कोई मुझ से सीधे मुंह बात नहीं करता। कभी कभी ऐसा घबरा जाता हूं कि चाहता हूं कि भाग जाऊं अजीब कशमकश में फंसा हूं। परेशानियों से दिमाग़ इस क़ाबिल नहीं रहा किसी से बहस व मुबाहसा कर सकूं। आप हमारे लिए दुआ–ए–ख़ैर फ़रमाऐं। अब मैं कुछ सवाला आप से करता हूं। कृपया तफ़सीली जवाब दीजिए।

1–यह जो कहा जाता है कि उलमा वारिसे अंबिया है तो इस से क्या मुराद है?

2– तहावी शरीफ़, दारे क़ुतनी, नैलुल अवतार, क्या ये किताबें मुसतनद हैं? क्या इन की हदीसें सहीह हैं? देलमी, तरग़ीब व तरहीब।

3– दलाइलुल ख़ैरात का पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

4– कुरआन की टीका से क्या मुराद है? तर्जमा पर भरोसा किया जाए या टीका पर, टीका में जो कुछ होता है क्या उस को सही मान लिया जाए?

5– हदीस के माध्यम से क्या मुराद है, हदीस के अनुवाद में मायना पर अमल करें या व्याख्या देखनी ज़रूरी है। अगर बिना व्याख्या देखे अमल नहीं किया जा सकता तो फिर किस की व्याख्या मुसतनद है।

6– अबु दाऊद में रफ़अ यदैन के बारे में अल्लामा वहीदुज्ज़मां दकनी साहब ने लिखा है कि रफ़अ यदैन मुस्तहब है, फ़र्ज़ व वाजिब नहीं है। इस का क्या यह मतलब नहीं हुआ कि अगर न

करें तो नमाज़ हो गई।

अबु दाऊद में जो अभी नई सईद एण्ड सन्ज़ वालों ने प्रकाशित की है, जगह जगह अल्लामा वहीदुज्ज़मां दकनी साहब की व्याख्या के नीचे नोट लिखा है कि यह आप का कथन है जो गै़र मुसतनद है। इस तरह एक जगह आफ़ताब उदय होने से पहले एक रकअ़त मिलने से फ़ज्र की नमाज़ हो जाने के बारे में अल्लामा ने लिखा कि हंफ़ियों का इज्तिहाद इस के विरुद्ध है जो ग़लत है। उन को हदीस की रोशनी में अपने इमाम का कथन छोड़ देना चाहिए। जो हंफ़ी दलील पेश करते हैं वह इस हदीस के मुक़ाबले में कोई अहमियत नहीं रखती। इस पर सईद साहब ने नीचे नोट लिखा है कि वह दलील भी लिख देते ताकि फ़ैसला हो जाता कि आप सच कहते हैं या हंफ़ी। इस का क्या मतलब है और वह कौन सी दलील है जो हंफ़ी पेश करते हैं और इस तरह नोट लिखने से क्या हदीसों के बारे में शक व शुबह नहीं पैदा हो जाता सारी सुनन अबु दाऊद शरीफ़ में इस तरह नोट डाल कर अल्लामा की व्याख्या को रद्द करने की कोशिश की है।

फ़क़त

नवाब

17–9–62 ई0

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

बख़िदमत मख़दूमी मुकर्रमी जनाब नवाब साहब

चक लाला 30 सितम्बर 1962 ई0 इतवार

अस्सलामु आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

अम्मा बाद! आप का पत्र 17 सितम्बर वसूल होकर हालात मालूम हुए।

अहादीसे सहीहा में कोई विभेद नहीं, हर सहीह हदीस क़ाबिले अमल है

अब आप के सवालों के जवाब लिखता हूं। .وبالله التوفيق

सवाल 1– सुबूत फ़ातिहा की सात हदीसें हैं जो एक दूसरे से अलग हैं?

जवाब– बिल्कुल ग़लत है, कोई विभेद नहीं है।

सवाल 2 – तुम एक हदीस पर अमल करते हो और छः को छोड़ते हो?

जवाब– सातों में कोई विभेद नहीं, अतः हमारा अमल सब पर है। हमारे हां यह उसूल है ही नहीं कि आयात व अहादीस को टकरा कर इन आयात व अहादीस को ख़त्म कर दें, कोई भी अमल के क़ाबिल न रहे। "اذا تعارضا تساقطا" यह हंफ़ियों का उसूल है।

सवाल 3 – बुख़ारी को छोड़ कर बैहेक़ी का सहारा लेते हो?

जवाब– बुख़ारी को छोड़ने का इल्ज़ाम ग़लत है, हां हमें किसी इमाम से नफ़रत नहीं। अगर इमाम बैहेक़ी भी कोई सहीह हदीस रिवायत करते हैं तो हम उसे क़ुबूल करते हैं। हम यह नहीं कहते कि यह हमारे ख़सम की हदीस है। हम उस को रद्द करने की कोशिश नहीं करते। अगर ज़ाहिर में विभेद भी होता है तो ततबीक़ दे कर दोनों सहीह अहादीस पर अमल करते हैं। ख़त्म किसी को नहीं करते।

सवाल 4 – तुम आपत्ति करते हो कि मुअम्मर ने जो हदीस बुख़ारी में रिवायत की है वह वहमी थे। भला इमाम बुख़ारी ने वहमी की रिवायत क्यों नक़ल की। क्या उन को इसका हाल मालूम न था?

जवाब– मुअम्मर के वहम की तरफ़ इमाम बुख़ारी रह0 ही ने इशारा फ़रमाया है। वह लिखते हैं: وعـامة الثقات لم يتابع معمرا في قوله فـصـاعـداً مـع انه قد اثبت فاتحة الكتاب وقوله فصاعدا غير معروف. अर्थात आम सिक़ाते अहले हदीस मुअम्मर के कथन "فـصاعداً" की समानता नहीं। यद्यपि सूरह फ़ातिहा का होना तो साबित है लेकिन "فـصـاعداً" ग़ैर मारूफ़ है। (किताबुल क़िरअत पृ0 3) इमाम बुख़ारी के इस कथन से साबित हुआ कि मुअम्मर का इंफ़िराद है। तमाम मुहद्दिसीन ने यह वाक्य कि "सूरह फ़ातिहा के अलावा भी पढ़ना फ़र्ज़ है।" रिवायत नहीं किया। अतः इस वाक्य में असमंजस पैदा हुआ दूसरी बात यह भी साबित हुई कि मुअम्मर के बारे में हम अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहते। बल्कि इतना ही जितना इमाम बुख़ारी रह0 ने लिखा है। फिर इमाम बुख़ारी रह0 ने इस जुमला "فـصاعدا" को सही तस्लीम करते हुए दोनों हदीसों में ततबीक़ दे दी है और दोनों को अमल करने योग्य बना कर पेश कर दिया है। किसी को रद्द नहीं

किया है। वह लिखते हैं। الا ان يكون كقوله لا يقطع اليد الا فى ربع دينار فصاعداً او قد يقطع اليد فى دينار وفى اكثر من دينار. यह इस हदीस के जैसा हो सकता है जिस में रसूलुल्लाह सल्ल0 फ़रमाते हैं कि हाथ न काटा जाए मगर चौथाई दीनार या उस से ज़्यादा की चोरी में और बेशक हाथ दीनार में भी काटा जाता है और दीनार से ज़्यादा में भी। (किताबुल क़िरअत पृ0 3) जिस तरह चौथाई दीनार कम से कम चोरी की मात्रा है। जिस से नामज़ होती है। उस से कम हो तो नमाज़ न होगी। या फिर उस से ज़्यादा तो हो जाएगी। जिस तरह चौथाई दीनार से ज़्यादा चोरी पर भी हाथ काटा जाता है। इमाम बुख़ारी रह0 के नज़दीक "فصاعداً"का यह मतलब है, कितनी अच्छी ततबीक़ है।

सवाल 5– अम्र बिन शुऐब की हदीस में केवल फ़ातिहा का हुक्म और अलावा की मनाही है?

जवाब 5– अम्र बिन शुऐब की हदीस यह है "كل صلوٰة لا يقرأ فيها بام الكتٰب فهى مخدجة." अर्थात हर वह नमाज़ जिस में फ़ातिहा न पढ़ी जाए वह नाकारा है। किताबुल क़िरअत पृ0 4) इस में तो अलावा की मनाही कहीं नहीं है। हां हुक्म केवल फ़ातिहा का है। इस लिए कि वह नमाज़ का अनिवार्य भाग है। उस को छोड़ा नहीं जा सकता।

सवाल 6– हदीस न0 4 में फ़ातिहा और इस से ज़्यादा का हुक्म है?

जवाब– हमें ज़्यादा का हुक्म भी तस्लीम है, फ़र्क़ केवल इतना है कि फ़ातिहा हर हाल में हर एक के लिए ज़रूरी है। इस के बिना नमाज़ नहीं होती। ज़्यादा पढ़ना हर हाल में हर एक के लिए ज़रूरी नहीं है। मुक़्तदी के लिए केवल सूरा फ़ातिहा लाज़मी है ज़्यादा

पढ़ना लाज़मी नहीं। बल्कि इमाम की ऊंची आवाज़ की क़िरात के दौरान पढ़ने की मनाही है।

सवाल 7 – इस के अलावा हदीस न0 5 में हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 की दिल में पढ़ने का हुक्म है।

जवाब – हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 की हदीस में मुक़्तदी का ज़िक्र विस्तार से मौजूद है। अतः मुक़्तदी को दिल ही में पढ़ना चाहिए। बुलन्द आवाज़ से पढ़ने के लिए कौन कहता है और किस हदीस में बुलन्द आवाज़ से पढ़ने का हुक्म है। जिस से यह हदीस टकराती हो, बल्कि अहादीस में मुक़्तदी को बुलन्द आवाज़ से पढ़ने की मनाही है। अतः सब अहादीस एक दूसरे की समानता करती हैं। टकराव तो तक़्लीद की करिशमा साज़ी है।

सवाल 8 – हदीस न0 6 में सकता में पढ़ने का हुक्म है।

जवाब – बिल्कुल ठीक है। मुक़्तदी को इमाम के सकतों में पढ़ना चाहिए और जब इमाम पढ़े तो उस को सुनना चाहिए। हमारा इसी पर अमल है।

सवाल 9 – हज़रत अली रज़ि0 की हदीस 7 में इमाम के पीछे ख़ामोश नमाज़ में दो सूरतें पढ़ने का ज़िक्र है।

जवाब – बिल्कुल ठीक है। मुक़्तदी ख़ामोश रकअ़त में फ़ातिहा के अलावा कोई और सूरह भी पढ़ सकता है। हज़रत अली रज़ि0 के शब्द यह है اذا لم يجهر الامام فى الصلوة فاقرأ بام الكتاب وسورة اخرىٰ الخ. अर्थात जब इमाम बुलन्द आवाज़ से क़िरअत न करे तो पहली दो रक़अ़तों में फ़ातिहा भी पढ़ो और सूरह भी और आख़िरी रकअ़तों में केवल सूरा फ़ातिहा पढ़ो

सवाल 10 – अब यह सात हदीसें हैं जो अलग अलग हुक्म देती हैं आप का अमल किस हदीस पर है?

जवाब – हमारा अमल सातों पर है। हर एक हदीस का अलग मौक़ा है। सूरह फ़ातिहा हर व्यक्ति के लिए लाज़िमी है (हदीस उबादा रज़ि0 बिन सामित रज़ि0 आदि) इमाम व मुन्फ़रिद को सूरह फ़ातिहा के अलावा भी पढ़ना चाहिए। (हदीस अबु सईद रज़ि0 व अबु हुरैरह रज़ि0 आदि) मुक़्तदी को बुलन्द आवाज़ की रकअत में सूरह फ़ातिहा से ज़्यादा नहीं पढ़ना चाहिए। (हदीस उबादा रज़ि0 आदि) मुक़्तदी को बुलन्द आवाज़ से नहीं पढ़ना चाहिए। बल्कि दिल में पढ़ना चाहिए। (हदीस अबु हुरैरह रज़ि0 आदि) मुक़्तदी को ख़ामोश वाली रकअत में फ़ातिहा पढ़नी चाहिए और दूसरी सूरह भी। (हदीस अली रज़ि0) मुक़्तदी को बुलन्द आवाज़ वाली रकअत में भी सूरह फ़ातिहा पढ़नी चाहिए। (हदीस उबादा रज़ि0 आदि) लेकिन इमाम के साथ साथ नहीं बल्कि इमाम के सकता में (हदीस सकता) तमाम अहादीस अपने अपने अवसर पर हैं। किसी में कोई टकराव नहीं। सब पर अमल करना शाने ईमान है।

सवाल 11 – हदीस उबादा रज़ि0 में मुक़्तदी का ज़िक्र नहीं।

जवाब – हदीस उबादा रज़ि0 में ख़िताब ही आप सल्ल0 ने मुक़्तदियों से फ़रमाया था रसूलुल्लाह सल्ल0 के शब्द यह हैं:

لاتقرؤا بشئ من القرآن اذا جهرت الا بام القرآن فانه لا صلوة لمن لم يقرأ بها.

अर्थात जब बुलन्द आवाज़ से क़िरअत करो तो कुरआन में से कुछ न पढ़ो सिवाए सूरह फ़ातिहा के इसलिए कि उस के बिना नमाज़ नहीं होती। (अबु दाऊद)

सवाल 12 – हदीस उबादा रज़ि0 में तो तुम ने तीनों को दाख़िल कर दिया क्योंकि तुम को वहां इस की ज़रूरत थी। और हदीस अम्र बिन शुऐब में मुक़्तदी को अलग कर दिया। क्योंकि यहां तुम को इस की ज़रूरत न थी।

जवाब – हदीस उबादा रज़ि0 में हुक्मे आम है और ख़िताब ख़ास है। अतः स्वयं रसूलुल्लाह सल्ल0 ने ही मुक़्तदी और ग़ैर मुक़्तदी को उस में शामिल कर दिया। हमारा क्या दोष है? हदीस अम्र बिन शुऐब में यद्यपि हुक्मे आम है लेकिन उबादा रज़ि0 की हदीस ने जो न0 11 में ऊपर दर्ज की गई है मुक़्तदी को इस से अलग कर दिया। अतः यहां भी रसूलुल्लाह सल्ल0 की हदीस ही से हम ने ख़ास किया। हम स्वयं कुछ नहीं करते जो आप सल्ल0 कह देते हैं। हम तस्लीम कर लेते हैं। हम अंदाज़े से काम नहीं करते। हदीस से हदीस को ख़ास करते हैं। अपनी राय से नहीं। फिर अम्र बिन शुऐब की हदीस में दूसरी सूरह का ज़िक्र ही कहां है? यह हदीस 5 में ऊपर दर्ज है। इस में केवल सूरह फ़ातिहा का ज़िक्र है। अर्थात इस में और हदीस उबादा रज़ि0 में कोई फ़र्क़ ही नहीं। एक ही विषय है। अतः आपत्ति ही बेकार है। शायद उन का इशारा हदीस अबु सईद रज़ि0 की तरफ़ है जो 6 में मौजूद है। जवाब इस का वही है जो ऊपर नक़्ल हुआ है। अर्थात मुक़्तदी को इस से स्वंय रसूलुल्लाह सल्ल0 ने ही ख़ास कर दिया है। और वह यह कि मुक़्तदी कुछ हालात में तो सूरह पढ़ सकता है और कुछ हालात में नहीं। (हदीस उबादा रज़ि0 11 व हदीस अली रज़ि0 9)

सवाल 13 – हदीस न0 4 को कहते हो कि ज़ईफ़ हैं यद्यपि यह बुख़ारी की हदीस है जिस के तुम मानने वाले हो?

जवाब – हम ज़ईफ़ नहीं कहते बल्कि हदीस उबादा रज़ि0 से इस को ख़ास करते हैं। मुसन्निफ़ का बुख़ारी की हदीस से क्या मतलब है। अगर इस से सही बुख़ारी मुराद है, तो बिल्कुल ग़लत है। यह हदीस सही बुख़ारी में नहीं, बल्कि जुज़उल क़िरअत में है। यह इमाम बुख़ारी की दूसरी किताब है। इमाम बुख़ारी ने कई

फ़रमाते हैं। मैं नमाज़ को लम्बी करना चाहता हूं लेकिन बच्चे के रोने की आवाज़ कान में आती है तो नमाज़ में कमी (हल्की) कर देता हूं। कहीं उसकी मां की परेशानी का कारण हो। (बुख़ारी) लीजिए इमामुल अइम्मा इमामे आज़म सल्ल0 तो अधीन होने से शर्म महसूस न करें लेकिन हंफ़ी इमाम को शर्म महसूस होती है। आप सल्ल0 की ज़ोहर की पहली रकअ़त इतनी लम्बी होती थी कि इक़ामत के बाद जाने वाला पेशाब पाख़ाना के लिए जाता और वापस आकर वुज़ू करके पहली रकअ़त में शामिल हो जाता। (बुख़ारी) यह किस की अधीनता थी। फिर इशा की नमाज में आप सल्ल0 लोगों का इन्तिज़ार करते थे। अगर लोग ज़्यादा होते तो जल्दी पढ़ लेते। अगर कम होते तो देरी करके पढ़ते। फिर सकतों में सूरा फ़ातिहा पढ़ने का हुक्म स्वयं रसूलुल्लाह सल्ल0 ने दिया। अतः इमाम पर लाज़िम है कि वह सकता करे। उसे अब आप मुक़्तदी की अधीनता कहें या रसूलुल्लाह सल्ल0 का अनुसरण कहें। हम ऐसे तानों से नहीं डरते। रसूलुल्लाह सल्ल0 भी स्वयं सकता करते थे, वक़्फ़े करते थे। और उन्हीं सकतों और वक़्फ़ों में सहाबा सूरा फ़ातिहा पढ़ते थे। (हदीस अम्र बिन शुऐब, किताबुल क़िरअत, इमाम बैहेक़ी व हदीस सकतात अन समुरा बिन जुन्दुब रज़ि0 अबु दाऊद आदि) अतः उन सकतों की रिआयत बराय मुक़्तदियान अल्लाह के रसूल सल्ल0 की सुन्नत है और हम उस पर अमल करते हुए गर्व करते हैं और जो मुक़्तदियों की रिआयत न करे, अर्थात मुक़्तदियों की रिआयत न करे, अर्थात मुक़्तदियों की क़िरात के लिए सकता न करे उसे बिदअती समझते हैं, सुनिए अब्दुल्लाह बिन उसमान फ़रमाते हैं।

قلت لسعيد بن جبير اقرأ خلف الامام قال نعم و ان سمعت

قـرأتـه انهـم قد احدثوا مالم يكونوا يصنعونه ان السلف كان إذا ام احـدهـم الـنـاس كبر ثم انصت حتى يظن ان من خلفه قد قرأ فاتحة الكتاب ثم قرأ فانصتوا.

अर्थात मैंने (मशहूर ताबअी इमाम) सईद बिन जुबैर से पूछा– क्या मैं इमाम के पीछे भी क़िरअत करूं? फ़रमाया हां क़िरअत करो। यद्यपि तुम उस की क़िरअत भी सुन रहे हो। उन लोगों ने तो यह बिदअत निकाली है जो पहले लोग नहीं करते थे बेशक हमारे सल्फ़ (सहाबा रज़ि0) में से जब कोई इमाम बनता था तो तकबीर तहरीमा कह कर ख़ामोश रहता था। यहां तक कि वह यह गुमान कर लेता था कि अब सब मुक़्तदियों ने सूरह फ़ातिहा पढ़ ली होगी तो फिर वह क़िरअत शुरु करता था और मुक़्तदी ख़ामोश रहते थे।

(जुज़उल क़िरात इमाम बुख़ारी रह0 पृ0 62)

अर्थात तमाम सहाबा किराम रज़ि0 मुक़्तदियों के अधीन थे, उन की क़िरअत के लिए लम्बे सकते करते थे। अर्थात मुक़्तदियों की क़िरअत के लिए सकते करना रसूलुल्लाह सल्ल0 का हुक्म, आप की सुन्नत, आप सल्ल0 के सहाबा रज़ि0 की सुन्नत। अब जो उस पर अमल करता है वह खुश क़िस्मत है और जो अमल नहीं करता वह हज़रत सईद रह0 के अनुसार बिदअती है और जो व्यंग भी करे तो फिर वह ज़रा दिल को टटोल कर देखे कि क्या किसी गोशा में ईमान की कोई रमक़ भी बाक़ी है या नहीं?

सवाल 17 – हुजूर सल्ल0 ने फ़रमाया कि एक क़ौम होगी, लम्बे रूकूअ़, सुजूद करेगी ......

जवाब – आप सल्ल0 का यह **फ़रमान** ख़ारजियों **के बारे में है**

हज़रत अली रज़ि0 ने उन लोगों को पहचाना और उन को हलाक किया।

सवाल 18 – तुम यह कहते हो कि जब इमाम रुकूअ़ में जाए तो मसबूक़ न जाए बल्कि जल्दी से फ़ातिहा पढ़ के रुकूअ़ करे।

जवाब – ग़लत हैं। इमाम रुकूअ में जाए तो फ़ौरन रुकूअ़ में जाए। हां तुम यह कहते हो कि इमाम नामज़ पढ़ता है तो पढ़ने दो। तुम शामिल न हो बल्कि अपनी नमाज़ शुरू कर दो। अर्थात सुन्नत फ़ज्र। अच्छा यह बताओ कि इमाम सलाम फेर दे तो मसबूक़ इमाम की पैरवी करे या नहीं? अगर नहीं करे तो तुम्हारा आम क़ायदा कहां गया?

सवाल 19 – सहाबा किराम रज़ि0 सूरा फ़ातिहा पढ़ते थे। लेकिन जब यह आयत करीमा नाज़िल हुई कि जब कुरआन पढ़ा जाए तो ख़ामोश रहो, तब छोड़ दिया।

जवाब – झूठ बे सनद व बे सुबूत हैं। सहाबा रज़ि0 तो सईद बिन जुबैर रह0 के ज़माने में भी सूरह फ़ातिहा पढ़ते थे। उन के इमाम मुक़्तदियों की क़िरअत के लिए तवील सकते करते थे। जैसा कि ऊपर 16 में गुज़रा

सवाल 20 – कशफुल अबरार में है कि दस सहाबी रज़ि0 मसलन खुलफ़ा–ए–अरबअ़ आदि फ़ातिहा ख़लफुल इमाम से मना करते थे।

जवाब – झूठ है। किसी हदीस की किताब में यह रिवायत नहीं है। कशफुल अबरार वालों ने मन गढ़त बात लिख कर धोखा दिया है। या उन्होंने ग़लत हवाला देकर आम मुसलमानों को धोखा दिया है।

इस किताब के बारे में सवालात ख़त्म हो गए। एक दो बार **शुरू में मुझे** भी ऐसी किताबों से धोखा हुआ था। लेकिन अब तो हर

चीज़ अल्लाह के फ़ज़्ल व करम से रोज़े रौशन की तरह साफ़ है। अब मैं आसानी से समझ जाता हूं कि कहां कहां फ़रेब से काम लिया गया है, मगर बेचारे जाहिलों का क्या हश्र होगा! उन्हें क्या ख़बर कि मामला क्या है? वे तो कश्फुल अबरार जैसी किताबों का नाम सुन कर ही प्रभावित हो जाते होंगे। ऐसे जाहिलों को सचेत करना आप का और हमारा फ़र्ज़ है। आगे अल्लाह मालिक है।

रफ़अ़ यदैन के सिलसिले में जो अहादीस आप के दामाद ने लिखी हैं उन का जवाब सुनिए। अब्दुल्लाह बिन मसऊद की हदीस को छः जगह लिखा है और धोखा यह दिया है मानो यह छः हदीसें हैं। अब्दुल्लाह बिन मसऊद की हदीस का जवाब पहले किसी पत्र में दे चुका हूं। शायद आप के पास होगा। इमाम इब्ने हिब्बान ने लिखा है कि कूफ़ा वालों की यह सब से अच्छी दलील है हालांकि यह भी बहुत ज़ईफ़ है। इस में कई इल्लतें हैं जो उसे बातिल बना रही हैं। (नैलुल अवतार) इमाम नववी ने लिखा है कि उस के ज़ोअफ़ पर मुहद्दिसीन का इत्तिफ़ाक़ है। (खुलासा) इमाम शाफ़अ़ी रह0, इमाम अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह0 आदि दीन के इमामों ने कहा है कि यह हदीस साबित नहीं है। इमाम बुख़ारी रह0 ने उसे ग़ैर महफ़ूज़ बताया है। इमाम अबु दाऊद ने फ़रमाया है। यह हदीस इन मायनों और इन शब्दों के साथ सही नहीं है। इमाम मुहम्मद रह0 ने अपनी मोत्ता में इस को नक़्ल किया। यद्यपि यह उनकी सब से बड़ी दलील थी और कूफ़ा ही में परवरिश पा रही थी। फिर यह अगर सही भी हो तो इस में अब्दुल्लाह बिन मसऊद का इंफ़िराद है और यह उन की भूल है। इसी तरह कुछ और भूलें उन से हुई हैं जैसे रुकूअ़ में ततबीक़ करना, सज्दा में हाथ बिछाना, जमाअत में दो मुक़्तदियों को इमाम के बराबर खड़ा करना आदि, स्वयं हंफ़ी भी यह बातें तस्लीम नहीं करते। बस इसी तरह हम अदमे रफ़अ तस्लीम नहीं

करते, इस लिए कि उन का बयान सारे सहाबा के बयान के ख़िलाफ़ है। इबराहीम नख़ई का यह कहना कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्ल० को पच्चास बार रफ़अ यदैन न करते हुए देखा, बे सुबूत है और उन का यह कहना कि हज़रत वाइल रज़ि० ने सिर्फ़ एक बार रफ़अ यदैन करते देखा यह भी अहादीस के ख़िलाफ़ है। इमाम बुख़ारी रह० ने अपनी किताब में इबराहीम नख़ई के इन दोनों कथनों का सख़्त खंडन किया है हम ऐसे बे सुबूत कथनों से प्रभावित नहीं होते चाहे कहने वाला कोई हो।

दूसरी हदीस उन्होंने बरा बिन आज़िब रज़ि० की नक़ल की है। अर्थात रसूलुल्लाह सल्ल० शुरू नमाज़ में रफ़अ यदैन करते थे। "ثم لا يعود" फिर नहीं करते थे। इमाम अबु दाऊद ने लिखा है कि यह हदीस सही नहीं है। इमाम अहमद रह० ने कहा है कि यह हदीस वाहियात है यज़ीद अबी ज़ियाद ने उस में "ثم لا يعود" बढ़ा दिया है। एक ज़माना तक वह इस वाक्य को बयान नहीं करते थे। फिर करने लगे। इमाम सुफ़ियान कहते हैं कि मैंने पहले यह हदीस यज़ीद बिन अबी ज़ियाद से सुनी थी। उस में "ثم لايعود" नहीं था बल्कि यह था कि आप सल्ल० रुकूअ़ से पहले और रुकूअ़ के बाद रफ़अ यदैन करते थे। जब यज़ीद बूढे हो गए तो कूफ़ा वालों ने उन को यह शब्द तलक़ीन किए और उन्होंने कहना शुरू कर दिया। इमाम बुख़ारी रह० ने लिखा है कि तमाम हदीस के हाफ़िज़ जिन्होंने यह हदीस यज़ीद से उन की जवानी में सुनी थी, यह शब्द बयान नहीं करते। फिर उन में से कुछ हाफ़िज़ों के नाम लिखे हैं। इमाम अबु दाऊद ने भी यही लिखा है और उन्होंने भी कुछ और हाफ़िज़ों का नाम लिखा है। फिर एक बार यज़ीद ने अली बिन आसिम के सवाल पर स्वयं इन शब्दों का इन्कार किया है और साफ़ कहा है कि لا احفظ यह मुझे याद नहीं है, सार यह कि कूफ़ा वालों की साज़िश से वह ग़लती का

शिकार हो गए और इन शब्दों को हदीस के मतन में शामिल कर दिया। और असली शब्द निकाल दिए। انا لله وانا اليه راجعون. अफ़सोस कि इस हदीस को दलील में पेश किया जाता है।

तीसरी दलील हज़रत उमर रज़ि0 का अमल है कि वह रफ़अ यदैन नहीं करते थे। इमाम बुख़ारी लिखते। "قد روى عمر عن النبى صلى الله عليه وسلم من غير وجه انه رفع." अर्थात हज़रत उमर रजि0 से कई सनदों से यह बात साबित है कि उन्होंने कहा कि रसूलुल्लाह सल्ल0 रफ़अ यदैन करते थे। (جزء رفع اليدين للبخارى ص ٣٥) इमाम हाकिम ने भी फ़रमाया है कि रफ़अ यदैन न करने की रिवायत कम है। इस से हुज्जत क़ाइम न होगी। सही यह है कि हज़रत उमर रज़ि0 रफ़अ यदैन करते थे। हज़रत उमर रज़ि0 के रफ़अ यदैन न करने की रिवायत को सूरी ने भी रिवायत किया है लेकिन उस में ثم لايعود नहीं है। ثم لايعود को केवल हसन बिन अयाश ने रिवायत किया है। और वह मुतकल्लम फ़ीया हैं। सूरी उन से औसिक़ हैं। फिर इस में इंक़िताअ का संदेह भी है। हज़रत उमर रज़ि0 के तो बेटे पोते सब रफ़अ यदैन करते थे। बल्कि बेटे तो रफ़अ यदैन न करने वालों को कंकरियां मारा करते थे (मुसनद इमाम अहमद) हज़रत उमर रज़ि0 ने एक बार लोगों को नमाज़ सिखाई तो रफ़अ यदैन किया। नमाज़ के बाद फ़रमाया इसी तरह रसूलुल्लाह सल्ल0 नमाज़ पढ़ते थे और इसी तरह पढ़ने का हुक्म दिया करते थे। फिर सहाबा रज़ि0 ने हज़रत उमर रज़ि0 की तसदीक़ की। (बैहेक़ी ख़िलाफ़ियात) यह रिवायत मुत्तसिल और सही है। (तसहीलुल क़ारी) इमाम तक़ीयुद्दीन कहते हैं, इस के रिजाल मारूफ़ हैं।

चौथी दलील हज़रत अली रज़ि0 का रफ़अ यदैन न करना है।

इमाम शफ़ई ने लिखा है कि यह साबित नहीं इमाम उसमान

दारमी फ़रमाते हैं فهذا قد روى من هذا الطريق الواهى. यह वाहियात सनद से है। (बैहेक़ी) इमाम बुख़ारी रह0 ने इस पर जिरह की है, वह लिखते हैं हज़रत सुफ़ियान सूरी (जो रफ़अ़ यदैन के क़ाइल माने जाते हैं) ने इस हदीस का इन्कार किया है। (جزء رفع اليدين ص ٨) हज़रत अली रज़ि0 तो स्वयं रफ़अ यदैन के रावी हैं। उन की सहीह रिवायत अबु दाऊद व तिर्मिज़ी में है। आप के दामाद ने यही चार दलीलें नक़्ल की हैं। अब अलल उमूम उन के बारे में इमाम बुख़ारी रह0 और तमाम मुहद्दिसीन का फ़ैसला सुनिए: ولم يثبت عند اهل العلم عن احد من اصحابه صلى الله عليه وسلم انه لم يرفع يديه. अर्थात विद्वानों के नज़दीक किसी सहाबी रज़ि0 के रफ़अ़ यदैन छोड़ने की रिवायत साबित नहीं। (جزء رفع اليدين ص ۴) आगे चल कर लिखते हैं: ولم يثبت عند اهل النظر ممن ادركنا من اهل الحجاز واهل العراق ...... فلم يثبت عند احدهم علم فى ترك رفع الايدى عن النبى صلى الله عليه وسلم لا عن احد من اصحاب النبى صلى الله عليه وسلم لا عن احد من اصحاب النبى صلى الله عليه وسلم انه لم يرفع يديه. अर्थात हिजाज़ और इराक़ के जिन अहले नज़र से हमारी मुलाक़ात हुई, उन में से किसी के नज़दीक रसूलुल्लाह सल्ल0 के रफ़अ यदैन न करने के बारे में कोई हदीस साबित नहीं और न किसी सहाबी रज़ि0 के रफ़अ यदैन न करने के बारे में कोई रिवायत साबित हुई। लीजिए स्वयं इराक़ी उलमा ने उन अहादीस को ग़ैर साबित माना है। فلله الحمد.

रफ़अ यदैन न करने की यही कुछ अहादीस थीं जो उन्होंने नक़ल कीं। बाक़ी अहादीस सब मौज़ूआत हैं या बे मौक़ा हैं। बाक़ी जवाब इंशाअल्लाह दूसरे पत्र में दूंगा।

फ़क़त

मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला, ता0 अक्तुबर 62

बख़िदमत मख़दूमी व मुकर्रमी जनाब नवाब साहब सल्लमहु

अस्सलाम आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

अम्मा बाद! इससे पहले एक लिफ़ाफ़ा भेजा था। नज़र से गुज़रा होगा। अब आप के बाक़ी सवालों के जवाब लिखता हूं।

सवाल 1 – क्या शाफ़अ़ी आदि भी हंफ़ियों को हक़ पर समझते हैं?

जवाब – ये चारों एक दूसरे को हक़ पर समझते हैं, यद्यपि एक ज़माना तक बड़े वाद विवाद और आपस में ख़ून रेज़ियां होती रहीं।

सवाल 2 – किताब "अलइल्मुल हदीद" आप ने देखी है?

जवाब 2 – यह किताब मैंने नहीं देखी, नताइजुत्तक़लीद पढ़ी है और उस में जो सख़्त कलिमात आए हैं उन का जवाब स्वयं लेखक ने प्रस्तावना में दे दिया है। उन के उलमा ने आयतें गढ़ीं। हदीसें गढ़ीं और उन को अपनी किताबों में लिखा। अब इस का जवाब सिवाए इस के वे क्या दे सकते हैं कि ये आयतें और हदीसें गढ़ी नहीं गई बल्कि मौजूद हैं या यह कि उन उलमा से भूल हो गयी। पहला जवाब तो बिल्कुल सही नहीं। दूसरे जवाब की गुन्जाइश है। मतलब यह कि उन उलमा का क़ुरआन व हदीस से अनभिज्ञ होना ज़ाहिर है। अब अगर इस किताब में कुछ होगा भी तो वह बस इसी क़दर कि जाहिलों को धोखा दिया गया होगा। **बहर**

हाल जवाब तो हर चीज़ का होता है ग़लत हो या सही।

सवाल 3 – क्या "हक़ीक़तुल फ़िक़ह" के हवाले ग़लत हैं?

जवाब – ग़लत नहीं हैं। हां यह हो सकता है कि कुछ हवाले अरबी कुतुब में न मिलते हों इसलिए कि हंफ़ी अनुवाद से नक़ल किए हैं। हो सकता है कि कुछ वाक्य अनुवाद के हों। और नाम अरबी किताब का दे दिया गया हो और यह उन्होंने मुक़द्दमा में लिख दिया है क्योंकि अनुवाद के नाम से अधिकांश लोग नावाक़िफ़ हैं इसलिए मैं असल किताब का नाम लिखूंगा जो मशहूर हैं और मसअला उन अनुवादों से उर्दू में नक़ल करूंगा। इन हवालों के मुक़ाबला मैं अनुवाद से नहीं कर सका क्योंकि अनुवाद मिले नहीं। अरबी में देखा तो पन्ने न मिल सके। बहर हाल क्योंकि मैं फ़िक़ह के मसाइल से परिचित हूं इसलिए यह कह सकता हूं कि अक्सर हवाला सही हैं और इसी आधार पर बाक़ी हवाले भी जिन से मैं वाक़िफ़ नहीं हूं ज़रूर सही होंगे।

सवाल 4 – यह जो कहा जाता है कि उलमा वारिसे अंबिया हैं तो इस से क्या मुराद है?

जवाब – यह एक हदीस का अनुवाद है। हदीस ही में इसके आगे इस की व्याख्या है। وانما ورثوا العلم فمناخذه اخذ بحظٍ وافر. अर्थात अंबिया के वारिसों में इल्म छोड़ जाते हैं अतः जिस ने यह इल्म हासिल किया उस ने भर पूर हिस्सा पा लिया।

(अबु दाऊद, अहमद, दारमी)

सवाल 5 – तहावी, दारे कुतनी ...... क्या ये किताबें प्रमाणिक हैं?

जवाब – हदीस की किताबों के पांच वर्ग हैं। पहला वर्ग बुख़ारी, मुस्लिम और मोत्ता मालिक पर आधारित है। उन में जितनी

मुसनद हदीसें हैं सब बिल्कुल सही हैं। दूसरे वर्ग में अबु दाऊद, नसाई और तिर्मिज़ी शामिल हैं। इस वर्ग में सही अहादीस की कसरत है और कुछ हदीसें ज़ईफ़ भी हैं। तीसरे वर्ग में मुसनद अहमद, दारे कुतनी, बैहेकी, तहावी आदि शामिल हैं। उन में बहुत सी अहादीस सही हैं। अधिकांश ज़ईफ़ हैं और कुछ मौज़ू भी हैं चौथा वर्ग दैलमी इब्ने अदी, शाबीन आदि पर आधारित है। इस वर्ग में शायद ही कोई हदीस सही हो। कुछ ज़ईफ़ और अधिकांश मौज़ू होती हैं। पांचवां वर्ग खुराफ़ात का पुलिन्दा है। जिन में एक भी हदीस सही नहीं।.उन में शाइराना लन तरानियां। सूफ़ियों के बयानात, मीलाद ख़्वानों की गप्पें होती हैं। ''नैलुल अवतार'' बड़े ऊंचे दर्जे की किताब है यह मुन्तक़ियुल अख़बार की व्याख्या है। व्याख्याकार हर हदीस पर स्पष्टता से बहस करते हैं। सही है या ज़ईफ़, मतलब क्या है? आदि आदि ''तरग़ीब व तरहीब'' इसी प्रकार की किताब है, जिस तरह की ''मिश्कात शरीफ़'' है तरग़ीब में हर क़िस्म की हदीसें हैं। लेकिन इमाम मुन्ज़री ने मुक़द्दमा में हर हदीस की सेहत व ज़ोअ़फ़ की निशानी स्वयं बता दी है। अतः धोखा नहीं हो सकता। यह किताब भी बहुत उम्दा है। और इमाम मुन्ज़री की सम्पादित है।

सवाल 6 – ''दलाइलुल ख़ैरात'' का पढ़ना जाइज़ है या नहीं?

जवाब– इस का पढ़ना बिदअत है।

सवाल 7 – कुरआन की टीका से क्या तात्पर्य है। अनुवाद पर भरोसा किया जाए या टीका पर? टीका में जो कुछ लिखा होता है क्या उसे सही मान लिया जाए?

जवाब – असल चीज़ तो अनुवाद ही है। इसी पर भरोसा करना चाहिए टीका उस अनुवाद की स्पष्टीकरण होती है। उसकी मदद से

आयात के मायना अच्छी तरह ज़ेहन नशीन हो जाते हैं। कुछ लफ़्ज़ी अनुवाद समझ में नहीं आते तो उन के स्पष्टीकरण के लिए दूसरी आयात, अहादीस, उतरने की पृष्ठ भूमि आदि लिखे जाते हैं और इस तरह उस आयत का सही मतलब सामने आ जाता है और यही असल टीका है। बाक़ी लन तरानियां, फ़िक़ही मोश गाफ़ियां बेकार की चीज़ें और गुमराह करने वाली होती हैं, टीका की किताबों की हर बात सही नहीं होती, बल्कि टीकाओं में कुछ अहादीस मौजूद भी हैं। इस समय सब से अच्छी टीका अल्लामा नवाब सय्यद सिद्दीक़ हसन बुख़ारी मुहद्दिस भोपाली की टीका है या फिर टीका "अहसनुत्तफ़सीर" है।

सवाज 8 – हदीस की व्याख्या से क्या तात्पर्य है। हदीस के अनुवाद पर अमल करें या व्याख्या देखनी ज़रूरी है?

जवाब 8 – व्याख्या से मुराद यह है कि इस के मतलब व मआनी पर बहस की जाए। इस सिलसिले की विभिन्न अहादीस को जमा किया जाए। अगर उन में टकराव हो तो उस टकराव को दूर किया जाए और हर एक का मौक़ा महल बताया जाए। सेहत व जोअ़फ़ पर बहस की जाए। व्याख्या देख लेना अच्छा होता है वरना सही बुख़ारी व सहीह मुस्लिम जैसी किताबों का तो केवल अनुवाद भी काफ़ी है न उन में सेहत व ज़ोअ़फ़ का झगड़ा है, न नासिख़ व मंसूख़ का, हर चीज़ साफ़ है और जो चीज़ उन के ख़िलाफ़ है वह या तो ज़ईफ़ होती है या उस का मौक़ा दूसरा होता है। मुस्तनद व्याख्याएं यह हैं फ़तहुल बारी, नैलुल अवतार, औनुल माबूद आदि।

सवाल 9 – अल्लामा वहीदुज्ज़मां दकनी ने लिखा है कि रफ़अ यदैन मुस्तहब है, फ़र्ज़ व वाजिब नहीं।

जवाब – यह उन की इज्तिहादी ग़लती है जब उसका छोड़ना न रसूलुल्लाह सल्ल0 से साबित न किसी सहाबी रज़ि0 से तो फिर

छोड़ना कैसे जाइज़ हुआ। अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 तो इस के छोड़ने वाले को कंकरियां मारा करते थे। (किताब रफ़उल यदैन इमाम बुख़ारी रह0) हज़रत उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ रह0 ख़लीफ़ा राशिद फ़रमाते हैं कि हमें बचपन में इस के छोड़ने पर (मदीना मुनव्वरा में) चेतावनी दी जाती थी। (उन का बचपन सहाबा रज़ि0 के दौर में गुज़रा था) (हवाला–ए–मज़कूर)

सवाल 10 – सुनन अबु दाऊद में नोट लिख कर अल्लामा वहीदुज्ज़मां दकनी की व्याख्या को रद्द करने की कोशिश की गई है क्या हमारे उलमा–ए–अहले हदीस ने भी इस का कोई जवाब दिया है?

जवाब – रोज़ नई नई किताबें छपती रहती हैं, किस किस का जवाब लिखा जाए? इस तरह की बे शुमार किताबें लिखी जा चुकी हैं लेकिन वह फिर भी अपने मसलक से बाज़ नहीं आते। इन्हीं बेकार के दलाइल को दोहराते चले जाते हैं। यह सिलसिला बिना ताक़त के बन्द होता नज़र नहीं आता, और ताक़त हमारे पास नहीं है। इल्म है, उसे ये लोग पढ़ते नहीं। अपनी किताबें पढ़ते हैं बल्कि उन के उलमा उन को हमारी किताबों से पहले ही बरगशता कर देते हैं। अतः पढ़ने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

सवाल 11 – सूरज के उदय से पहले फ़ज्र की एक रकअ़त मिलने से नमाज़ हो जाती है हंफ़ी उसे नहीं मानते। वे कौन सी दलील पेश करते हैं?

जवाब – वे कोई दलील पेश नहीं करते बल्कि मात्र क़यास से उस को रद्द कर देते हैं।

सवाल 12 – जब बिदअती अपने बुजुर्गों की क़रामतें आदि बयान करें तो क्या हम उनकी बात रद्द कर दिया करें?

जवाब – अगर उन की करामत में शरअ़ी क़बाहत न हो तो रद्द करने की कोई ज़रूरत नहीं। हां अगर उस से शिर्क आदि का समर्थन होता हो तो फिर बेशक उस का खंडन कर देना चाहिए। हां अगर आप उस बुर्ज़ुग की करामत का एतेराफ़ करें तो उस की दो सूरतें ज़ेहन में रखिए। (1) अगर वह बिदअती था तो उस की करामत ऐसी होगी जैसे हिन्दू साधुओं की करामत। अतः उस की करामत से हम पर कोई असर नहीं पड़ता। (2) अगर बिदअती नहीं था तो फिर उस को मुसलमान मानिए और इस के अलावा उस को किसी और सम्प्रदाय से मंसूब करने का खंडन कीजिए।

फ़क़त

मसऊद

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मिन जानिब मसऊद

चक लाला 13 नवम्बर 1962 ई0

बख़िदमत जनाब नवाब साहब

अस्सलामु आलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहु

अम्मा बाद! आप का पत्र ता0 27 अक्तुबर 62 ई0 को मिला। ख़ैरियत मालूम हो कर इत्मीनान हुआ, आप की तबलीग़ से जमाअत हक़्क़ा में रोज़ रोज़ तरक़्क़ी मालूम हो कर बहुत ख़ुशी हुई। اللهم زده ......فـــــزده अब आप इत्मीनान से अपना काम जारी रखिए, इंशा अल्लाह आप को दुनिया में भी कामयाबी नसीब होगी और आख़िरत में भी कामयाबी नसीब होगी आप के दामाद का पत्र पढ़ा जवाब यह हैं।

तक़्लीद

1- तक़्लीद शख़्सी बिदअत है और हर बिदअत दीन में वृद्धि होती है अतः हर बिदअत शिर्क है।

2- तक़्लीद की वजह से ग़लत फ़तवों पर अमल होता है और आयत व हदीस को रद्द कर दिया जाता है। चाहे तावील से या किसी और बहाने से आयत व हदीस की मौजूदगी में उस के मुख़ालिफ़ फ़तवा पर अमल खुली गुमराही और खुला शिर्क है।

3- तक़्लीद की वजह से सम्प्रदायवाद पैदा होता है और जो कुछ गुथ्थम गुथ्था उन तक़्लीदी विचारों में होती रही है इतिहास के

पन्ने इसके गवाह हैं। यहां तक कि उन के झगड़ों की वजह से काबा में चार मुसल्ले क़ाइम करने पड़े। क्योंकि कुरआन मजीद की रू से सम्प्रदायवाद अल्लाह तआला को सख़्त ना पसन्द है। बल्कि सम्प्रदायवाद को अल्लाह तआला ने एक अज़ाब की तरह माना है, और यह साम्प्रदाय को रहमत समझते हैं और यह खुला कुफ़्र है और कुरआन मजीद का विरोध। आयत यह है: قُلْ هُوَ الْقَادِرُ عَلٰٓى اَنْ يَّبْعَثَ عَلَيْكُمْ عَذَاباً مِّنْ فَوْقِكُمْ اَوْ مِنْ تَحْتِ اَرْجُلِكُمْ اَوْ يَلْبِسَكُمْ شِيَعًا وَّيُذِيْقَ بَعْضَكُمْ بَأْسَ بَعْضٍ ط اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّهُمْ يَفْقَهُوْنَ ط (سورۂ انعام ٦٥) कह दीजिए, अल्लाह इस बात पर समर्थ है कि तुम पर ऊपर से अज़ाब भेज दे या तुम्हारे पैरों के नीचे से या तुम्हें गिरोहे गिरोह बनाकर उलझा दे और एक दूसरे की लड़ाई का मज़ा तुम को चखाए देखिए हम किस तरह आयात को बदलते हैं ताकि वह समझ जाऐं।

नबी सल्ल0 की ज़ियारत

अगर किसी हंफ़ी को नबी सल्ल0 की ज़ियारत करना होना हो तो हम उस की सेहत तस्लीम नहीं करते हो सकता है कि जिस तरह करामात व खुराफ़ात कुछ असली या नक़्ली औलिया अल्लाह की तरफ़ मंसूब हैं और पूरी तरह ग़लत बल्कि कुछ तो हक़ीक़त में कुफ़्र हैं, इसी तरह यह क़िस्से भी गढ़ लिए गए हों और पीरां नमी परिन्द, मुरीदां परानन्द वाला क़िस्सा हो।

दो- हमारा ईमान कुरआन व हदीस पर है। अतः किसी गुमराह सम्प्रदायों के बारे में ऐसे क़िस्से सुनने में आना तो अलग अगर हमारे देखने में भी आ जाऐं तो उस को अपनी आंख की ख़ता कहेंगे और हमारा ईमान कुरआन व हदीस पर रहेगा न कि आंखों

देखे मुशाहेदा पर। कुछ आंखों देखे मुशाहेदे खुले रूप से ग़लत होते हैं। जैसे रेगिस्तान में सराब (मरिचिका) का दिखाई देना, रेल गाड़ी में जब वह चल रही हो दूर की चीज़ों का रेल गाड़ी की दिशा में दौड़ती हुई मालूम होना, चांद का हमारे साथ चलना और इस तरह की कई और मिसालें हैं। आंख ख़ता कर सकती है लेकिन कुरआन व हदीस का ख़ता करना ना मुमकिन है और ऐसे मौक़ों पर आंख़ को ख़ता कार ठहराना बे ईमानी की दलील है।

तीन– जो लोग बयान करते हैं कि हम ने रसूलुल्लाह सल्ल0 को सपने में देखा वह कैसे कह सकते हैं कि वह आंहज़रत सल्ल0 की ही शक्ल थी। हां अगर उन्होंने जागते में रसूलुल्लाह सल्ल0 को जीवित हालत में देखा होता, जैसा कि सहाबा किराम रज़ि0 ने देखा था और फिर इसी शक्ल में वह सपने में देखते तो यक़ीन हो सकता था कि आप सल्ल0 ही हैं इसलिए कि इस सूरत में आना शैतान के लिए असंभव है। लेकिन दूसरी सूरत में आकर धोखा दे जाना आसान है और यही होता है। मैंने तो हमेशा फ़ासिकों व फ़ाजिरों और बिदअतियों को ही देखा कि वह ज़ियारत करने की ख़बर देते हैं। वह कुछ भी कहा करें, हम पूरी तरह इस का इंकार करते हैं बल्कि अगर वह फ़र्ज़ी दास्तान भी न हो तो शैतान का करिशमा ज़रूर है। बजुर्गों की घटनाओं में ऐसा मिलता है कि उस ने उन बजुर्गों के सामने अपने आप को अल्लाह ज़ाहिर किया और जो उस के बहकाए में आ गए वे यही समझते रहे कि हम अल्लाह के दरबार में हाज़िर हैं और हक़ीक़त बाद में मालूम हुई।

बस इन तीन स्तरो पर मुहम्मद हाशिम साहब और मौलवी मुहम्मद क़ासिम नानौतवी साहब के की घटनाओं को रखा जा सकता है। इस क़िस्म की बातें ग़ैर मुस्लिमों में भी पाई जाती हैं। यह

कोई अजूबा चीज़ें नहीं कि उन की वजह से ईमान को ख़राब किया जाए। मौलवी क़ासिम साहब ने हयात नबी सल्ल0 और ख़त्म नुबुवत के सिलसिले में जो कुछ कहा वह अब किसी से पोशीदा नहीं रहा। यहां तक कि हयातुनबी सल्ल0 के मसअला पर उलमा–ए–देवबन्द में सख़्त मतभेद पैदा हो गया जिस को ख़त्म करने के उद्देश्य से मौलवी तय्यब साहब तशरीफ़ लाए और सुलह कराके गए, यद्यपि मतभेद की नौइयत बाक़ी है लेकिन मतभेद का ऐलान व तबलीग़ रोक दी गई। ख़त्म नुबुवत के सिलसिला में उन की इबारतें क़ादियानियों के लिए बड़ी मुफ़ीद साबित हुई। हम यह तो कर सकते हैं कि कि ख़ामोश रहें लेकिन यह नहीं कर सकते कि उन को बुज़ुर्ग मान कर सत्य मार्ग को छोड़ बैठें। अगर वह स्वयं सत्य मार्ग पर होते फिर भी उन की गलती को सराहना क्या मायना! उन का कुसूर यही क्या कम है कि देहली में किताब व सुन्नत के मदरसा के मुक़ाबले में हंफ़ी मज़हब की हिफ़ाज़त के लिए उन्होंने देवबन्द में मदरसा क़ाइम किया। अब इस को किताब व सुन्नत का बैर कहिए या हंफ़ी मज़हब का पक्षपात व ग़ैरत।

रफ़अ यदैन

करना और न करना दोनों जाइज़ हैं? यह किस तरह सही हो सकता है, जबकि रफ़अ न करने की कोई रिवायत सही नहीं और अगर सही भी मान ली जाए तो अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की भूल माननी होगी। इस लिए कि उन से इस तरह की कई और भूलें भी मंसूब हैं जिन भूलों पर किसी का अमल नहीं बल्कि वह मंसूख़ और ग़ैर सही समझी जाती हैं। अगर दोनों तरह जाइज़ भी हो तो दोनों तरह सुन्नत नहीं हो सकता। इसलिए कि अमल छोड़ना कोई

अमल ही नहीं जिस को सुन्नत कहा जाए। सुन्नत तो अमल होता है। अमल छोड़ने को केवल जाइज़ कह सकते हैं, लेकिन सुन्नत नहीं कह सकते। इस तरह से भी रफ़अ यदैन का दर्जा रफ़अ यदैन न करने से बढ़ जाता है। अगर केवल ईश्वरत्व का अन्तर होता तो फिर हंफ़ी उस से इतना क्यों चिढ़ते?

फ़ातिहा ख़लफ़ुल इमाम

फ़ातिहा ख़लफ़ुल इमाम के बारे भी मतभेद बहुत सख़्त है, एक के हां फ़र्ज़ ऐन दूसरे के यहां पढ़े तो कुरआन मजीद का विरोध मुंह में अंगारे भरे जाऐं, यूं कहिए कि ये लोग अब ढीले पड़ते जा रहे हैं इस लिए इस क़िस्म की नर्म बातें करने लगे हैं।

अब आप के पत्र में लिखे सवालों के जवाब सुनिए।

1- बोहरा सम्प्रदाय के अक़ाइद का कोई ख़ास पता तो नहीं। बहर हाल यह भी शीओं का एक सम्प्रदाय है कुछ बोहरे सुन्नी भी होते हैं। ताहिर सैफ़ुद्दीन साहब बोहरों के इमाम हैं। बोहरों में एक और सम्प्रदाय भी है जिस के इमाम आग़ा ख़ां हैं। उन के अक़ाइद बहुत ख़राब हैं। वल्लाह आलम बिस्सवाब। सैफ़ुद्दीन साहब को "सय्यदना" उन के फ़िक़्ह वाले कहते हैं न कि हम।

2- शीआ सम्प्रदाय ने कहां ग़लती की है? यह सम्प्रदाय अब्दुल्लाह बिन सबा यहूदी की ईजाद है जिस ने अहले बैत की मुहब्बत के बहाने बहुत सी ग़लत बातें दीन में दाख़िल कर दीं। हज़रत अबु बकर रज़ि0 और हज़रत उमर रज़ि0 आदि को अतिक्रमणकारी कहा, कपटी कहा, अहले बैत के फ़ज़ाइल में अहादीस गढ़ी, मौजूदा कुरआन मजीद को जाली कहते हैं, असली कुरआन मजीद का एक फ़र्ज़ी हिस्सा भी तस्लीम किया जो इमाम

मेहदी ग़ाइब ले कर आएंगे। शुरू शुरू में ये लोग सियासी मतभेद के साथ पकट हुए लेकिन धीरे धीरे उन का एक मज़हब बन गया।

3- फ़िदक एक बाग़ था जो बिना लड़े फ़तह हुआ था। यह बाग़ फ़ै के तौर पर रसूलुल्लाह सल्ल0 के क़ब्ज़ा में रहा, अर्थात बहैसियत शासक के आप सल्ल0 का इस पर अधिकार था। हज़रत फ़ातिमा रज़ि0 यह समझीं कि यह आप सल्ल0 का माल है अतः हमें तर्का मिलना चाहिए। हज़रत अबु बकर रज़ि0 ने हदीस सुना दी कि "अंबिया का कोई वारिस नहीं, जो कुछ वे छोड़ जाएं सदक़ा होता है।" हज़रत फ़ातिमा रज़ि0 उस पर ख़ामोश हो गई और फिर बात न की। हज़रत आइशा रज़ि0 का ख़्याल है कि नाराज़गी की वजह से बात नहीं की। यद्यपि उस में हज़रत अबु बकर रज़ि0 से नाराज़ होने की तो कोई वजह नहीं है। हां यह कह सकते हैं कि वह नबी सल्ल0 के फ़ैसले से ख़फ़ा हो गईं तो यह कैसे मुमकिन है। बहर हाल हज़रत आइशा रज़ि0 का यही ख़्याल था और इसी आधार पर वह समझीं कि जनाज़ा में भी शरीक नहीं किया। सहीह बुख़ारी में यह सब बातें हैं। सहीह बुख़ारी में इस तरह है कि हज़रत अबु बकर रज़ि0 को आप सल्ल0 के इन्तक़ाल की ख़बर न की। यह नहीं कि हज़रत फ़ातिमा रज़ि0 ने वसियत की थी कि वे न आने पाऐं, यह ग़लत है। रात का समय था (बुख़ारी) इसी वजह से शायद हज़रत अबु बकर रज़ि0 को ख़बर न की गई। मतलब यह कि हज़रत आइशा रज़ि0 ने अपना गुमान ज़ाहिर किया है। दूसरी किताबों में यह बात मिलती है कि वह हज़रत अबु बकर रज़ि0 से नाराज़ नहीं थीं बल्कि खुश थीं, और अगर मान लें और हम फ़र्ज़ भी कर लें कि वह हज़रत अबु बकर रज़ि0 से नाराज़ थीं तो किस बात पर? नबी सल्ल0 का फ़ैसला सुनाने पर? अगर नबी सल्ल0 का फ़ैसला सुन

कर वे दिल में शंका और रंजिश महसूस करें, तो फिर ईमान की ख़ैर नहीं। कुरआन की आयत साफ़ है: فلا وربک لا یؤمنون حتی یحکموک فیما شجر بینهم ثم لا یجدوا فی انفسهم حرجا......الخ. (سورة نساء ٦٥)

उन शीआ साहिबान से कहिए कि उन्होंने नबी सल्ल0 के फ़ैसले को तस्लीम नहीं किया अतः अब आप उन का ईमान साबित कीजिए? सर सय्यद अहमद ख़ां अक़ीदतन व अमलन अहले हदीस थे लेकिन टीका के सिलसिले में उन से कुछ खतरनाक ग़लतियां हुई हैं जिन की वजह से उन के ईमान तक में शक पैदा हो जाता है जैसे फ़रिश्तों की तावील आदि। मौदूदी साहब अक़ीदतन हक़ के क़रीब मालूम होते हैं, लेकिन अमलन वह हंफ़ी ही हैं और कुछ इसी अंदाज़ से सोचते हैं। हदीस के मामले में उन की राय बहुत ख़तरनाक है।

फ़क़त

मसऊद

उलमा-ए-किराम को शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 की नसीहत

"मैं उन ज्ञान के इच्छुक व्यक्तियों से कहता हूं जो अपने आप को उलमा कहते हैं कि:

नादानो! तुम यूनानियों के उलूम और व्याकरण संबंधी मायना व मामलों में फंस गए और समझे कि ज्ञान इस का नाम है, यद्यपि ज्ञान तो किताबुल्लाह की आयते मोहकमा है या फिर वह सुन्नत है जो रसूलुल्लाह सल्ल0 से साबित हो ...... तुम पिछले फ़ुक़हा के नुक्तों और उलझावों में डूब गए, क्या तुम्हें ख़बर नहीं कि ज्ञान केवल वह है जो अल्लाह और उस के रसूल सल्ल0 ने फ़रमाया हो, तुम में से अधिकांश का हाल यह है कि जब उसे नबी करीम सल्ल0 की कोई हदीस पहुंचती है तो वह उस पर अमल नहीं करता और कहता है कि मेरा अमल तो फ़लां इमाम के मज़हब पर है न कि हदीस पर, फिर वह बहाना यह पेश करता है कि साहब, हदीस की समझ और उस के अनुसार अमल करना तो कामिलीन और माहिरीन का काम है, और यह हदीस आइम्मा सलफ़ से छुपी तो न रही होगी, फिर कोई वजह तो होगी कि उन्होंने उसे छोड़ दिया ...... याद रखो! यह कदापि दीन का तरीक़ा नहीं है, अगर तुम अपने नबी सल्ल0 पर ईमान लाए हो तो उन का अनुसरण करो चाहे किसी मज़हब के अनुकूल हो या प्रतिकूल।"

("तफ़हीमात अल इलाहिया।" शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0)

मसलक अहले हदीस की प्रमुख विशेषताएं

- इस मसलक में सन्तुलन का एक हुस्न है।
- यहां बे दाग़ और बे लचक तौहीद है।
- यहां जीवन व्यवस्था रसूल सल्ल0 है।
- यहां आइम्मा–ए–किराम रह0 और औलिया–ए–उज़्ज़ाम रह0 की ऊंचे दर्जा का सम्मान और अहले बैत रज़ि0 से हार्दिक अक़ीदत भी।
- यहां हदीस सहीह को आइम्मा के कथनों पर वरीयता देने का चाव भी है और फुक़हा–ए–किराम की मसाई–ए–जमीला का हुस्ने एतेराफ़ भी।
- यहां अहकामे शरीअत का आयोजन भी है और नफ़्स की सफ़ाई का शौक़ भी।

ما اهل حدیثیم دغا را نشناسیم
صد شکر که در مذهب ما حیله و فن نیست

मसलक अहले हदीस

अल्लामा एहसान इलाही ज़हीर शहीद रह0

"हमारे लिए यह बहुत बड़ा गौरव है कि हमारी हर बात अपनी नहीं होती, बल्कि हमारे अक़ायद और नज़रयात का मर्कज़ किताब व सुन्नत हैं अहले हदीस के अलावा दुनिया में जितने मसलक हैं, एक एक से पूछिए कि वह जो कुछ कहते हैं क्या वह सब कुछ वही है जो नबी अकरम सल्ल0 ने फ़रमाया है। उन में से कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि उन की हर बात किताब व सुन्नत की बात है। अल्लाह के और मुहम्मद के फ़रमान पर कोई मतभेद नहीं। झगड़ा उस समय पैदा होता है जब उन आदेशों के अलावा तीसरी बात सामने आ जाती है। हम यह बरमला कहते हैं कि किताब व सुन्नत के सामने किसी और की बात की कोई हैसियत नहीं है। हम अगर इमाम बुख़ारी रह0, इमाम मुस्लिम रह0 और दूसरे मुहद्दिसीन का ज़िक्र करते हैं तो इसलिए नहीं कि उन्होंने अपनी तरफ से कोई बात कही है बल्कि उन्होंने तो मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्ल0 के आदेश हम तक पहुंचाए हैं -- हम ने बहुत से अरब देशों में यह मुशाहेदा किया है कि किताब व सुन्नत की रोशनी जहां तक पहुंची है वहां अहले हदीस मौजूद हैं, इस लिए मसलक अहले हदीस से ज़्यादा साफ़, स्वच्छ, और रौशन मसलक कोई नहीं है।"

होते हुए मुस्तुफ़ा की गुरफ़तार
मत देख किसी का क़ौल व किरदार

शाह वलीउल्लाह मुहद्दिस देहलवी रह0 ने फ़रमाया

तो यदि हम को रसूले मासूम सल्ल0 की हदीस सही सनद से पहुंच जाए जिन का आज्ञा पालन अल्लाह ने हम पर फ़र्ज़ किया है, और वह हदीस हमारे मज़हब के ख़िलाफ़ हो तो उस समय अगर हम उस हदीस को छोड़ कर इस तख़मीने (कथन) पर जमे रहें तो हम से बड़ा ज़ालिम कोई न होगा, और हश्र के दिन जब सब लोग रब्बुल आलमीन के सामने पेश होंगे, हमारा कोई बहाना नहीं चल सकेगा।''

(उक़्दतुल जय्यद'' पृ0 49 प्रिंटर्स फ़ारूकी, देहली)

अहले हदीस

उम्मत के बुज़ुर्गों की नज़र में

○ "मैं दुनिया मैं पहला अहले हदीस हूं।"

(हज़रत अबु हुरैरह रज़ि0 ("तज़किरतुल हुफ़्फ़ाज़" भाग 1 पृ0 34)

○ "हमेशा हक़ पर रहने वाली जमाअत अगर अहले हदीस नहीं है तो फिर मैं नहीं जानता कि वह कौन है?"

(इमाम अहमद बिन हंबल। "शर्फ़ असहाबुल हदीस")

○ जिस जमाअत के बारे में हुज़ूर सल्ल0 ने फ़रमाया है कि वह हमेशा हक़ पर रहेगी उस से मुराद अहले हदीस जमाअत है।"

(अमीरुल मोमिनीन फ़िल हदीस हज़रत इमाम बुख़ारी रह0)

○ "फ़रिश्ते आसमान के पहरेदार हैं और अहले हदीस ज़मीन के।"

(इमाम सुफ़ियान सूरी रह0 "शर्फ़ असहाबुल हदीस")

○ अहले हदीस मुसलमानों में ऐसे हैं जैसे अहले इस्लाम तमाम मज़ाहिब में।"

(शैखुल इस्लाम इमाम इब्ने तैमिया रह0 "नक़्ज़ुल मंतिक़ पृ0 33)

Talash - E - Haq



Al-Kitab International الكتاب انٹرنیشنل

Jamia Nagar, New Delhi-25
Ph.: 26986973 M. 9312508762